Ministry of Education & Finance,
United Provinces.

लखनऊ, ३० अगस्त १९४८

प्रिय महाशय,

आपका १५ अगस्त का पत्र माननीय शिक्षामन्त्री को मिला। माननीय मंत्री जी को देखने के लिये आप कृपया पुस्तक की एक प्रति यदि वह छप गई हो, भेज दीजिये।

भवदीय

G. S. Agarwal

Personal Assistant
to the Hon'ble Minister
for Education and Finance,
U. P.

Office of the Private Secretary
TO THE
Hon'ble Minister for Education Finance,
United Provinces

नैनीताल, ता० १३-५-४७,

प्रिय० मथुराप्रसाद जी,

आप के पत्र मिले। माननीय मंत्री जी प्रयत्नशील थे। आपकी पुस्तक के सहायतार्थ २००) सरकार की ओर से मिलेगा। कागज के लिये, कमिश्नर सिविल सप्लाइस, यू० पी० को आदेश दिया गया है। आप अपनी आवश्यकता उन्हें सूचित करें, और पत्र-व्यवहार करें।

भवदीय
अमोलखचंद्र

दो शब्द

महामहोपाध्याय श्रीयुत पं० मथुराप्रसाद दीक्षित जी ने यह नाटक मेरे राजदरबार सोलन में सन् १९३७ ई० में लिखा था। इस नाटक में अंग्रेजीराज्य में भारत की दुर्दशा, कांग्रेस का स्वातन्त्र्ययुद्ध और अन्त में महात्मा गाँधी के हाथों में शासन सूत्र दे कर अंग्रेजों के चले जाने का दृश्य दिखाया गया है। अंग्रेजों की कूटनीतिज्ञता और भारत में साम्प्रदायिक अनैक्य से शासन करने की नीति को देखते हुए उस समय मैंने पण्डित जी की कल्पना को कोरी कल्पना समझी और मूल पुस्तक को जब्त कर लिया।

तदनन्तर सन् १९४२ ई० में जलवायु परिवर्त्तन के लिए गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज, काशी के प्रिन्सिपल, संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज एम्. ए. का जब सोलन (शिमला) में आना हुआ था; तब उक्त पुस्तक उन्हें दिखाई गई थी। कविराज जी ने पण्डित जी से पूछा भी था कि "आप ने किस आधार पर कल्पना की है कि अंग्रेज विना संघर्ष के ही भारत छोड़ कर चले जाएँगे।" तब पण्डित जी ने कहा था कि "कांग्रेस का अहिंसामूलक सत्याग्रह दिनों दिन जोर पकड़ता जा रहा है, अतः अन्त में सरकार पङ्गु हो जायगी और विवश हो स्वराज्य दे कर अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ेगा।" कविराज जी ने पण्डित जी की विद्वत्ता और ऐतिहासिक नाटक की लेखनशैली की प्रशंसा की।

तत्पश्चात् सन् १९४६ ई० कांग्रेस का अभ्युदय देख कर मैंने पुस्तक पण्डितजी को वापिस दे दी। पण्डितजी ने सन् १९४६ मार्च में काशी में यू. पी. शिक्षा-मंत्री माननीय श्री सम्पूर्णानन्द जी को उक्त पुस्तक दिखाई और प्रकाशित करने की अनुमति माँगी। परन्तु उस समय कांग्रेस

के पदारूढ़ [illegible] से यह विचार स्थगित कर देना पड़ा। पुनः १९४६ सितम्बर में [illegible] पत्र भेजने पर यू० पी० शिक्षामन्त्रीमहोदय ने पुस्तक देखने को माँगी। परन्तु पाण्डुलिपि के अतिरिक्त दूसरी प्रति न होने के कारण पुस्तक नहीं भेजी जा सकी। परिणामस्वरूप मार्च १९४७ में प्रकाशन के विचार से स्वयं पण्डितजी ने लखनऊ जाकर शिक्षामन्त्री महोदय को पुस्तक दिखाई और प्रकाशन की आज्ञा तथा २००) की सहायता एवं कागज का परमिट प्राप्त किया।

अगस्त सन् १९४७ में पण्डितजी की उक्त कल्पना को मूर्तिमती होते देख कर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हुई। मैं पण्डित जी की प्रतिभा का हार्दिक समादर करता हूँ। आशा है कि स्वराज्यप्राप्ति से बहुत पहिले लिखे गए इस ऐतिहासिक एवं राजनीतिक संस्कृत नाटक का विद्वज्जन आदर करेंगे। वर्त्तमान काल में पण्डितजी की यह कृति संस्कृत-साहित्य-भण्डार में अभिनव देन होगी, और विश्वास है कि इतिहास तथा राजनीति से उदासीन संस्कृत के विद्यार्थियों के लिये यह सुरुचिपूर्ण अध्ययन की सामग्री होगी।

२५-३-४७

देवीराम मेहता
(प्राइवेट सेक्रेटरी बघाट नरेश, सोलन-शिमला)

श्रीः

भारतविजयनाटकम् ।

प्रथमोऽङ्कः ।

सूत्रधारः—

स्वाङ्के यत्प्रतिचस्करे कररुहैर्हैरण्यवक्षस्थलं
तस्मादेव विनिःसृताऽवनिमसृग्धारा वहन्ती ययौ
जङ्घाजानुपदाब्जमध्यपतिता सान्द्राऽथ जन्मान्तरे
सैव राम ! भवत्पदाम्बुजगता सैवेति संभाव्यते ॥ १ ॥

भारतविजय

प्रथम–अङ्क

सूत्रधार—

अपनी गोद में रक्खे हुए हिरण्यकशिपु का जो वक्षःस्थल भगवान् नृसिंह के के नखों से विदीर्ण हुआ था, उससे निकली हुई रक्तधारा पृथ्वी पर वह चली। वह धारा जाँघ, घुटना और चरण कमलों पर गिरी थी। दूसरे जन्म में वही रामावतार में आपके चरण कमल में सघन हो शोभित हो रही है।

[कहने का आशय यह है कि भगवान् के चरण कमल स्वतः रक्त नहीं हैं, परन्तु हिरण्यकशिपु के रक्त से रक्त हैं।] ॥ १ ॥

स्वान्ते कार्ये तुल्यरूपा सर्वलोकोपकारिणी ।
उदारचेतसां भाषा जयतात्सर्वतोमुखी ॥ २ ॥

नान्द्यन्ते

(इतस्ततोऽवलोक्य) अहह मद्भाग्यवशाद् गुणैकपक्षपातिनीयं राष्ट्रियमहापरिषदुपगतेति जैनरहस्याभिधानराजेन्द्रनिर्णयरत्नाकरादि-विविधग्रन्थनिर्मात्रा मथुराप्रसाददीक्षितेन प्रणीतेन विद्वज्जनहृदय-समुल्लासकरेण भारतविजयनाटकेनोपस्थातव्यमस्माभिरिति प्रतिपात्रं विधीयतां यत्नः ।

(मनसि) अस्तु तावन्नटीमाह्वयामि ।

(प्रकाशम्) अयि ! आर्ये !

(किञ्चित्स्मृत्वा मनसि) भावमिश्रादीन् सज्जीकर्तुमाज्ञप्ता नटी कार्यानु-लग्ना दूरे स्थिता भवेत् ।

नेपथ्ये

अन्तःकरण तथा कार्य में समानरूपवाली, तथा सब लोगों का उपकार करनेवाली, श्रेष्ठ पुरुषों की सर्वतोमुखी भाषा की जय हो ॥ २ ॥

नान्दी के अन्त में—

[इधर उधर देखकर] अ हा हा, मेरे भाग्य से गुणों पर पक्षपात करनेवाली यह राष्ट्रिय महासभा संप्राप्त हुई है अतः जैनरहस्य, अभिधानराजेन्द्र, निर्णय-रत्नाकर इत्यादि अनेक ग्रन्थों के रचयिता पण्डित मथुराप्रसाद दीक्षित से विरचित, विद्वानों के हृदय में आनन्दजनक 'भारतविजय' नाटक का अभिनय करना है, अतः प्रत्येक पात्र में यत्न करना चाहिये ।

(मन में) अच्छा, नटी को बुलाता हूँ ।

(प्रकाश) अरी श्रीमतीजी,

(कुछ स्मरण कर) (मनमें) अभिनेताओं को सजाने के लिए आदिष्ट नटी कार्य में लगी हुई दूर पर होगी ।

[नेपथ्य में]

भारतमाता (आर्यें इति श्रुत्वा) आः हला [illegible] ! प्रसन्नचेतसा क एष मामनुस्मरति ।

नेपालीया सखी —म जानदी न, कसको शब्द हो ।

(नावगच्छाम्यहं कस्य शब्दोऽयम्)

सूत्र०—[साश्चर्यमिव] [मनसि] नटी तु दूरे स्थिता, अयं कस्याः शब्दः ? अस्तु वा, भवेत्कस्या अपि, अलमनुसन्धानेन । यावद् भावमिश्रादीन् सज्जीकृत्य नटी समायाति, तावदेतान्परिषद्गतान् शरद्वर्णनेनानुरञ्जयामि ।

(प्रकाशम्)—

काशकुसुमवसनेयं सुवर्णहंसारवेण परिपूर्णा ।
हतदुष्टपङ्कजीवा हा हा वन्यैस्तिरस्क्रियते ॥ ३ ॥

भारतमाता—अहा सखी ! प्रसन्न चित्त से मेरा कौन स्मरण कर रहा है ।

नेपाली सखी—मुझे नहीं विदित होता कि यह किसका शब्द है ।

सूत्रधार—[आश्चर्य में पड़कर] [मन में] नटी तो दूर है, यह किसका शब्द है ? अच्छा किसी का भी हो, उसकी जाँच-पड़ताल करना व्यर्थ है । जब तक अभिनेताओं को सजा कर नटी आती है, तब तक सभा में इन लोगों का (प्रेक्षकों का) मनोरञ्जन शरद् ऋतु के वर्णन से करता हूँ ।

(प्रकाश)

काश कुसुम रूपी श्वेत साड़ी से सुसज्जित, शोभन वर्ण वाले (सुन्दर शब्द वाले अथवा सुन्दर रंगवाले) हंसों की ध्वनि से समन्वित, एवं कीचड़ के दुष्ट जीवों की विनाशिनी शरद् ऋतु जंगली पशुओं से परिपीड़ित है ॥ ३ ॥ [अर्थान्तर—कास सुमन के समान श्वेत साड़ी से सुसज्जित, सुन्दर अक्षर मालिका से विषयों का प्रतिपादन करने वाले परमहंस (महात्माओं) की विचार-धारा से परिपूर्ण, एवं दुष्ट तथा दूषित (पंक = कलङ्क) व्यक्तियों की विनाशिनी भारत माता जंगली लोगों से तिरस्कृत है] ।

भारतमाता—आः क एष मां युद्धादिविद्याविलोपाद् दुःखिनीं समवलोक्य समदुःखी भवति ? इति दुःखान्निःश्वसती सखीसहिता भारतमाता शब्दानुसारेण शनैः शनैः रङ्गभूमिं प्रविशति ।

सूत्र०—आः भारतमाता संप्राप्ता !!! इति प्रणम्य निष्क्रान्तः ।

इति प्रस्तावना ।

भारतमाता—(इतस्ततः पश्यन्ती)

मांधाता भरतः *पुरुर्यदुपती रन्तिः क्व भीमार्जुनौ,
भीष्मद्रोणभगीरथप्रभृतयो हा हा क्व कर्णः कृपः ।
एते मे तनयाः सुखं दिविपदः पश्यन्तु मां दुःखिनीं,
केयं दीनदशा दयाविरहितैर्दुष्टैः परिप्राप्यते ॥ ४ ॥

(ततः प्रविशति कश्चिद् यूरूपीयो गौराङ्गो वैदेशिकः) ।

भारतमाता—हाय ! युद्ध इत्यादि विद्याओं के विनाश हो जाने के कारण दुःखी मुझको देखकर यह कौन समवेदना प्रकट करता है ।

[दुःख से दीर्घ उसासे भरती हुई, तथा शब्द का अनुसरण करती हुई भारतमाता रंगभूमि में प्रवेश करती है ।]

सूत्रधार—आः भारतमाता आ गई हैं ।

[प्रणाम कर चला जाता है]

इति प्रस्तावना ।

भारत माता—(इधर उधर देखती हुई)

कहाँ हैं—मान्धाता, भरत, पुरु, कृष्ण, रन्तिदेव, भीम और अर्जुन । हाय ! कहाँ हैं भीष्म, द्रोण, भगीरथ इत्यादि एवं कर्ण और कृपाचार्य, ये स्वर्गस्थ मेरे सुवन मुझ दुःखिनी को देखें; कि दया विहीन दुष्टों से मेरी कैसी दीन दशा की जा रही है ॥ ४ ॥

[इसके अनन्तर किसी विदेशी यूरोपियन का प्रवेश होता है]

---

* नोट—शोकाधिक्यात् क्रमोऽविवक्षितः ।

वैदेशिकः—आः, क एनां संतापयितुं प्रभवति।

भारतमाता—कस्त्वमसि ?

वै०—वाणिज्यार्थं यूरूपदेशात्समायातः परमशौर्यसंपन्नः स्वनीतिनैपुण्येन समूलमुन्मूलयिष्यामि ते दुःखम्। किं बहुना—

अहं त्वां सर्वदुःखेभ्यो मोचयिष्ये शुचं त्यज।
समृद्धां सौख्यसंपन्नां विधास्यामि स्वनीतितः ॥ ५ ॥

भारतमा०—चिरं जीव।

ने० सखी—(भारतमात्रुन्मुखम्)

यदि आफना चतुराईवाट तेरो ई दुःखकारी हुने छ, तो तेरा दुःख को नाश करने वाला कौन हुने छ।

(यदि स्वनीतिनैपुण्येन त्वामेव दुःखिनीं करिष्यति तदा खलु त्वां को नाम दुःखेभ्य उन्मोचयिष्यति ?)

भारतमाता—नहि नहि, आकृतिरस्य गुणान् कथयति, सुसम्भ्रमम्।

विदेशी—आह, इसे सताने में कौन समर्थ है ?

भारतमाता—तुम कौन हो ?

विदेशीगोरा—व्यापार के लिये यूरोप देश से आया हुआ, तथा अत्यन्त वीरता से भरा हुआ मैं अपनी नीति की निपुणता से तुम्हारे दुःख का समूल नाश कर दूँगा। अधिक क्या कहूँ—

शोक न करो, क्योंकि मैं तुम्हें सम्पूर्ण दुःखों से छुटकारा दिला दूँगा, एवं अपनी नीति के बल से तुम्हें धन धान्य से परिपूर्ण एवं सुखी बना दूँगा ॥५॥

भारतमाता—चिरजीवी हो !

ने० सखी—(भारतमाता की ओर)

यदि यह अपनी नीति की निपुणता से तुम्हें दुःखी करेगा तो दूसरा कौन तुम्हें दुःखों से छुटकारा दिलायेगा।

भारतमाता—नहीं नहीं, इसके आकार से इसके उत्तम गुण मालूम पड़ते हैं। यह अच्छा साधु है।

ने० स०—यो बुकवादी छ । यसको चेहरा अनुसार को काम छै न । यो अधर्मी पापी के बिश्वास को ?

(वाचाटोऽयम्, विसंवादिनी अस्याकृतिः। विधर्मिणोऽस्य कः प्रत्ययः।)

भा०—नहि सर्वे विधर्मिणोऽसदाचारा भवन्ति । मम दुःखमोचनार्थं नीतिनैपुण्यमस्य, नतु दुःखदानार्थम् ।

वै०—एवमेव; भवत्या दुःखमोचनार्थं सर्वतो यतिष्ये ।

(ततः श्रूयते कुतश्चिद् वेदनाशब्दः ।) आः मृताऽस्मि, परित्रायस्व माम् । परमवेदनया म्रिये ।

भा०—अग्निदाहेन दग्धायाः संतापवेदनयोद्विग्नाया राजकुमारिकाया इव शब्दः श्रूयते । यद्यस्या दुःखमोचनोपायं जानासि तदाऽऽरचय, अहमेषा गच्छामि । इदमाद्यं ते परीक्षास्थानम् ।

(सखीसहिता भारतमाता यवनिकायां प्रविशति ।)

पटीक्षेपः ।

ने० स०—यह बकवादी है, इसकी शक्ल खराब है, इस विधर्मी का क्या विश्वास ।

भा० मा०—नहीं, नहीं । सब विधर्मी अनाचारी नहीं होते । इसकी नीति-निपुणता मेरे दुःख के विनाश के लिये है, न कि मुझे दुःख देने के लिये ।

वै० गो०—यही है । आपके दुःख के विनाश के लिये मैं सर्वतोभाव से प्रयास करूँगा ।

[इसके अनन्तर कहीं से वेदना का शब्द सुनाई देता है ।]

हाय मरी, मेरी रक्षा करो, अत्यन्त कष्ट से मैं मर रही हूँ ।

भा० मा०—अग्नि से दग्ध और संताप की वेदना से व्याकुल राजकुमारी का-सा शब्द सुनाई देता है । यदि इसके दुःख के निवारण का उपाय जानते हो तो करो, मैं तो यह जाती हूँ । यह तुम्हारी प्रथम परीक्षा है ।

[सखी सहित भारत माता परदे के अन्दर चली जाती है ।]

[परदा गिरता है]

(राजगृहम् । ततः प्रविशति आसीनया कुमारिकया सह राजा, विभवतश्च परिवारः) ।

कुमारिका—हा मृताऽस्मि, कीदृशमिदमौषधम् । हा ! (इति वेदनया खिन्ना, पतिता सती मूर्च्छति ।)

भारतराजः—(साश्रुरनुचरमुद्दिश्य) श्रूयतेऽत्र कोऽपि वैदेशिकश्चिकित्सकः समायातः, सुसाधुश्च सः । तमानय ।

अनुचरः—जं देवो आणवेदि । (यद्देव आज्ञापयति) । (बहिर्गत्वा) (इतस्ततोऽवलोक्य,) कुत्थ गच्छेअह । (कुत्र गच्छेयम् ।) (मनसि) हं तक्केमि, इदं खु वेदेसियट्ठाणं । (अहं तर्कयामि इदं खलु वैदेशिकस्थानम् ।)

(ततस्तद्गृहं गत्वा तमादाय आगच्छति ।)

भारतराजः—(उत्थाय तमुपवेशयति ।) किं त्वं वैद्यविद्यां जानासि ?

वैदेशिकः—सम्यक् । किं बहुना ।

वैद्यविद्यासु निष्णातः सर्वशास्त्रकुशाग्रधीः ।
म्रियमाणमपि स्वस्थं क्षीणं च विदधे दृढम् ॥ ६ ॥

[स्थान-राज-प्रासाद, बैठी हुई राजकुमारी के साथ राजा का प्रवेश होता है, और शान शौकत के साथ परिवार का प्रवेश होता है ।]

कुमारी—हाय मरी, यह कैसी दवा है । हाय !

[पीड़ा से व्यथित हो गिर पड़ती है और मूर्छित हो जाती है ।]

भारत सम्राट्—(आँखों में आँसू भर कर, नौकर से) सुना है कि कोई परदेशी वैद्य आया है, वह बहुत सज्जन है । उसे ले आओ ।

नौकर—जो आज्ञा । [बाहर जाकर इधर उधर देख कर] कहाँ जाऊँ (मन में) मैं अनुमान करता हूँ कि यह परदेशियों का निवास-स्थान है । [इसके अनन्तर उसके घर जाकर, उसको लेकर आता है ।]

भारत०—[उठकर उसे बैठालता है ।] क्या तुम वैद्यक जानते हो ?

परदेशी—खूब अच्छी तरह से । अधिक क्या कहूँ ?

वैद्यक में निपुण तथा सम्पूर्ण शास्त्रों में कुशाग्रबुद्धि मैं दुर्बल को स्वस्थ तथा मरते हुए भी पुरुष को रोगरहित कर देता हूँ ॥ ६ ॥

भारतराजः—यवनधर्मानुरोधादपवित्रमौषधं नेयं गृह्णाति ।

वैदेशिकः—युक्तम् । पवित्रमिदमौषधम् । शरीरलेपादेव स्वगुणं करिष्यति । (शरीरे लेपयति, पुनः किञ्चिदौषधं दत्त्वा निष्क्रामति ।)

कुमारी—(द्वित्रिवारं लेपनानन्तरं चक्षुषी उन्मील्य । पार्श्वं परिवर्त्य च ।) पितः !

भारतराजः—कीदृशी वेदना ?

कुमारी—

समूलमुन्मूलितवेदनाऽस्म्यहं मनःप्रसत्तिः परमैव जायते ।
विधिं विधातुं त्वरितं वपुः स्वयं बलाधिकं स्फूर्तिमदेव भासते ॥७॥

भारतराजः—दिष्ट्या जीविताऽसि । वैदेशिकस्यास्य सुशोभन-मिदमौषधम् । (वैदेशिकं वैद्यराजं पुनराह्वयति ।)

अनुचरः, तमेव वैदेशिकं वैद्यराजमानय । (अनुचरो निष्क्रम्य तेन सह पुनः प्रविशति । भारतराजस्तमवलोकयन्, उत्थाय सादरमुपवेशयति ।)

भारत०—मुस्लिम धर्म की प्रेरणा से यह अपवित्र औषधि नहीं लेती ।

विदेशी—ठीक है । यह औषधि पवित्र है । देह में लगाने से ही यह अपना प्रभाव दिखायेगी ।

[शरीर में लेप करता है । फिर थोड़ी सी दवा देकर चला जाता है ।]

कुमारी—[दो तीन बार लेप के अनन्तर आँखें खोल कर लौटती है ।] पिताजी,

भारत०—कैसी पीड़ा है ?

कुमारी—मेरी सम्पूर्ण पीड़ा दूर हो गई है । मेरे मन में परम प्रसन्नता का संचार हो रहा है और इस शरीर में शीघ्र कार्य करने के लिये बलाधिक्य तथा स्फूर्ति आई हुई प्रतीत होती है ॥ ७ ॥

भारत०—भागवश जी गई हो, इस परदेशी की यह औषधि बहुत अच्छी है । [विदेशी वैद्यराज को फिर बुलाता है ।]

नौकर, विदेशी वैद्यराज को बुलाओ ।

[नौकर जाकर फिर उसके साथ आता है । भारत सम्राट् उसे देखकर, उठकर आदर के साथ बैठालता है ।]

भारतराजः—भवानस्मद्देश एव तिष्ठतु ।

वै० वैद्यः—(मनसि—अग्न्येनं स्वायत्तीकर्तुमयमवसरः । (प्रकाशम्) वङ्गप्रान्ते मम स्थित्यर्थं किञ्चित्स्थानं प्रदेयम् । यत्र गृहं निर्माय स्थास्यामि । अस्माकं व्यापाररक्षार्थं साहाय्यं च देयम् । वयमपि यथावसरं ते साहाय्यं करिष्यामः ।

भारतराजः—अवश्यमेव युष्माकं व्यापारसाहाय्यं करिष्यामि । यदभिलषसि तद् कथय ।

वै० वैद्यः—इदं तावद् भवेत् ।

न विक्रयं नः परिहाय वाससः प्रजासु कश्चिच्चरितुं समीहताम् ।
न वास्मदीये क्रयविक्रये भवेत् करः क्वचित्कश्चिदपीति पालयेः ॥८॥

भारत० आप मेरे देश में ही वास करें ।

वि० वै०—(मनमें) इसे अपने अधीन करने का यह सुअवसर है । (प्रकाश) बंगाल में मेरे रहने के लिये थोड़ी सी जगह दे दीजिये, जहाँ पर घर बनाकर मैं रहूँगा, मेरे व्यापार की रक्षा के लिये सहायता भी दीजिये । मैं भी समय समय पर आपकी सहायता करूँगा ।

भारत०—अवश्य ही तुम्हारे व्यापार में सहायता करूँगा । जो चाहते हो वह कहो ।

वि० वै०—तो फिर यह हो जाय कि मुझे छोडकर प्रजा में वस्त्र को बेचने की कोई चेष्टा न करे, और मेरे क्रय-विक्रय में (खरीद फरोख्त में) कहीं पर जरासा भी राजलाभ न हो । (टैक्स न लगे) इसका आप पालन कीजिये ॥ ८ ॥

---

१ नोट—अग्निदग्धायाः शाहजहाँकुमारिकायाः चिकित्सा गेबरियल बाऊटनेन विहिता । सरथामसरोमहोदयेन विाहतल्पपरे । आरोग्यं जातम्, पुनर्वङ्गाधिपतेः शाहजादाराजकुमारशुजापत्न्या अपि चिकित्सा अनेनैव कृता, आरोग्यं च प्राप्तम् । पुनः फरुखशियरसम्राज आरोग्यं सर्जनविलियमहेमिल्टनद्वारा जातम् ।

भारतराजः—अस्तु, निश्चीयतां तत् । न युष्मानतिरिच्य कश्चिदपि वसनविक्रेता भविष्यति । नापि करादानम् । (इति स्वमुद्रयाऽङ्कितं विधाय प्रमाणपत्रं ददाति । स पत्रं गृहीत्वा निष्क्रामति ।)

पटीक्षेपः ।

(ततः प्रविशन्ति पटं विक्रेतुं क्रेतुं च कश्चित्तन्तुवायः श्रेष्ठिनौ च)

श्रेष्ठी—तन्तुवाय! किमस्य पटस्य मूल्यम् ?

तन्तुवायः—विंशत्यधिकं शतम् ।

श्रेष्ठी—नहि नहि, किञ्चिदधिकमेतत् । शतं मूल्यं गृहीष्व ।

(ततः प्रविशति सानुचरो वैदेशिको गौराङ्गः । स राजमुद्राङ्कितप्रमाणपत्रं दर्शयित्वा श्रेष्ठिनौ तन्तुवायञ्च भर्त्संयति ।)

भारत०—अच्छा, इसे पक्का जानो । तुमको छोड़कर कोई भी वस्त्र का वेचने वाला न होगा । और न तुम्हें टैक्स ही देना होगा ।

[भारत० ... लगाकर प्रमाणपत्र (फरमान) देता है, वह उसे लेकर चला जाता है ।] [परदा गिरता है ।]

[इसके अनन्तर वस्त्र वेचने के लिये और खरीदने के लिये एक जुलाहा तथा दो सेठ आते हैं ।]

सेठ—ए जुलाहे, इस वस्त्र की क्या कीमत है ।

जुलाहा—एक सौ बीस रुपये ।

सेठ—नहीं, नहीं, यह कुछ अधिक है । सौ रुपये लो ।

[तब नौकर के साथ विदेशी गोरा आता है । वह राजमुहर लगे हुए फर्मान को दिखाकर दोनों सेठों को तथा जुलाहे को डाँटता है ।]

[नोट—अग्नि से जली हुई शाहजहाँ कुमारी की औषधि गेवरियल वाउटन ने की थी । कुछ का मत है कि—सर थामस रो ने की थी, उससे वह अच्छी हो गई थी, फिर बंगाल के नवाब राजकुमार शाहजादा शूजा की स्त्री की भी दवा इसीने की थी, जिससे वह स्वस्थ हो गई थी । फिर फरुख शियर बाद शाह सर्जन विलियम हेमिल्टन द्वारा अच्छे हुए थे ।

वै० गौ०—तन्तुवाय ! पश्य, राजमुद्राङ्कितं प्रमाणपत्रम्। न त्वं विक्रेतुं प्रभुः।

तं०—तर्हि किमहमेनं पटं कुर्याम् ?

वै० गौ०—इमं पटं मह्यं देहि, अहमेनं पटं विक्रेष्ये, गृहीष्व इमाः पञ्चाशन्मुद्राः। (इति पञ्चाशन्मुद्रा ददाति।)

तं०—(साश्चर्यमिव पश्यन्) किमिदं विधीयते। कथमेतेन मम कुटुम्बस्य भरणपोषणे भविष्यतः। पड्भिर्मासैः कथमपि रात्रिंदिवं परिश्रम्य निष्पादितोऽयं पटः।

वै० गौ०—इमा मुद्रा गृह्णीष्व, नाहं किमपि जानामि। मौनमास्स्व, गच्छ। अपरञ्च पटं निर्माय मत्समीप एवानय।

युष्मत्कुटुम्बरक्षायै न प्रतिज्ञा कृता मया।
कथं रक्षा भवेदेतत् त्वं जानीहि व्रजाधुना॥ ९॥

(स मुद्रा न गृह्णाति। अथापरस्तन्तुवायः पटविक्रयार्थं प्रविश्य पटक्रयार्थं श्रेष्ठिनं लक्षयति।)

वि० गो०—ओ जुलाहे, देखो, यह राजमुहर लगा हुआ फरमान है, तुम इसे नहीं बेच सकते।

जुलाहा—तो मैं इस वस्त्र का क्या करूँ।

वि० गो०—यह वस्त्र मुझे दो, मैं इस वस्त्र को वेचूँगा। लो ये पचास रुपये। [५० रुपये देता है]

जुलाहा (आश्चर्य के साथ देखता हुआ) यह क्या कर रहे हैं ! इससे मेरे कुटुम्ब का पालन-पोषण किस प्रकार होगा। छ महीने रात दिन के परिश्रम से यह वस्त्र बना है।

वि० गो—ये रुपये लो। मैं कुछ नहीं जानता। चुप रहो, जाओ। दूसरा वस्त्र बनाकर मेरे ही पास लाओ। तुम्हारे कुटुम्ब की रक्षा के लिये मैं प्रतिज्ञा नहीं करता। किस भाँति उसकी रक्षा हो यह तुम जानो, अब जाओ॥ ९॥

वह रुपये नहीं लेता है। दूसरा जुलाहा वस्त्र के बेचने के लिए आता तथा वस्त्र के खरीदने के लिए सेठ को दिखलाता है।]

तं०—श्रेष्ठिन् ! गृहाण पटम् ।

श्रेष्ठी – (भ्रूसंज्ञया) अयं क्रेष्यति । नाहं क्रेतुं शक्नोमि ।

तं०—कस्मात् ?

श्रेष्ठी अस्य समीपे राज्ञः प्रमाणपत्रम्, अयमेव क्रेष्यति, नापरः ।

वै० गौ०—इत आगच्छ । (तन्तुवायमाह्वयति, प्रमाणपत्रं दर्शयति । पटं गृह्णाति ।) गृहाणेमाश्चत्वारिंशन्मुद्राः । (इति मुद्रा ददाति ।)

तं०—महाराज ! किमिदं विधीयते ? किमयमेव न्यायः ?

वै० गौ०—गच्छ गच्छ । नाहं न्यायमन्यायं वा जानामि । यन्मया निश्चीयते दीयते च तदेव मूल्यम् । (उभौ तद्दत्तं मूल्यं गृह्णीतः ।)

उभौ तं०—नातः परं पटं निर्मास्यावः । (इत्युक्त्वा गच्छतः)

वै० गौ०—(अनुचरमुद्दिश्य) पश्य । एताभ्यां वह्वीर्मुद्रा ग्रहीष्ये । अनिर्वचनीयम् एतत्पटयोः सौन्दर्यम् । अतिसूक्ष्मतरोऽयं पटः । पश्य, एतस्य पञ्चषैः पटलैः परिवेष्टितमप्यपटमेव प्रतीयतेऽङ्गम् । आः कथमेतत्सम-

---

जुलाहा--सेठ जी, कपड़ा लो ।

सेठ--(इशारे से) यह लेगा, मैं नहीं ले सकता ।

जुलाहा--क्यों ?

सेठ—इसके पास बादशाह का फरमान है । यही लेगा, दूसरा नहीं ।

वि० गो०--इधर आओ । (जुलाहे को बुलाता है । फरमान दिखाता है, और वस्त्र ले लेता है ।) इन चालीस रुपयों को लो । (रुपये देता है ।)

जुलाहा—साहब, यह क्या कर रहे हैं ? क्या यह न्याय है ।

वि० गो०—जाओ, जाओ । मैं न्याय अन्याय नहीं जानता । जो मैं तैय करता हूँ वही मूल्य देता हूँ । [दोनों उससे दिए हुए मूल्य को ले लेते हैं ।)

दोनों जुलाहे—अब इनके अनन्तर हम कपड़े नहीं बनायेंगे ।

[यह कहकर चले जाते हैं]

वि० गो०—(नौकर से) देखो । इन दोनों से बहुत से रुपये लेंगे । इन वस्त्रों का सौन्दर्य अवर्णनीय है, यह वस्त्र बहुत महीन है । देखो, पाँच छ पर्त से ढका हुआ अंग वस्त्र रहित प्रतीत हो रहा है । आः इनके मुकाबले में हमारे

ऽस्मद्देशीयानां पटानां विक्रयो भविष्यति, इति हतमस्मद्देशीयं वाणिज्यम् (पुनर्विचिन्त्य)

एतत्सूक्ष्मपटस्य निर्मितिविधेरुन्मूलनेऽहं क्षमो
निर्मातॄनिह दण्डताडनपरस्तान् मोचयिष्याम्यतः ।
कौशल्यं ह्रियतामथस्तदधिकं वाणिज्यमत्युन्नतं
देशस्यास्य समुन्नतिर्जनकथामात्रे समाधीयताम् ॥ १० ॥

दौवारिक ! (स प्रावश्य) जेदु जेदु देवो (जयतु जयतु देवः) सत्वरं त्रिचतुरांस्तन्तुवायान् समानय । जं देवो आणवेदि (यद्देव आज्ञापयति ।) (बहिर्गत्वा त्रीन् तन्तुवायान् समानीय प्रविशति ।)

वै० गौ०—(तन्तुवायानुद्दिश्य) भो भो ! यूयं निर्मितान् पटान् मह्यं दत्त।

तन्तुवायाः—न वयमयोग्यमूल्यत्वात् पटं निर्मामः ।

देश के वस्त्रों की विक्री कैसे होगी । इससे हमारे देश का [illegible] नष्ट हो गया है । (फिर सोचकर)

इस महीन वस्त्र के निर्माण की रीति के नाश करने में मैं समर्थ हूँ । दण्ड और ताडन देने में संलग्न हो; मैं उन बनाने वालों को भी उनका बनाना बन्द कर दूंगा, निपुणता का अपहरण करूँगा, उससे अधिक समुन्नत व्यापार का विनाश करूँगा, और इस देश की समुन्नति मिट्टी में मिला दूंगा ॥ १० ॥

द्वारपाल—(द्वारपाल आकर) साहब की जय हो ।

वि० गो०—तीन चार जुलाहों को लाओ ।

द्वारपाल—जो आज्ञा ।

[बाहर जाकर तीन जुलाहों को लाकर अन्दर आता है ।]

वि० गो०—ओ ! बने हुए वस्त्रों को मुझे दो ।

तीनों जुलाहे—अनुचित कीमत की वजह से हम कपड़े नहीं बनाते ।

पटलशब्दः—परत इत्यर्थे । पूर्वं वर्णविपर्यांक्षरे पलट इति–पुनः वर्णविकारतः परत इति ।

वै० गौ०—अस्तु, शोभनं पटं निर्माय मह्यं दत्त, योग्यं मूल्यं भविष्यति। गृहाण इमाः मुद्राः (इति पञ्चदश मुद्रा ददाति, ते न गृह्णन्ति हठात्तेषां वसने निबध्य गलहस्तेन निष्काशयति ।)

तं०—(द्वारि स्थिताः) महाराज ! न वयं शतमूल्यं पटं पञ्चदशभिरेव मुद्राभिर्निर्मास्यामः ।

वै० गौ०—(साक्षेपम्) क इमे कोलाहलं कुर्वन्ति । (द्वारि गत्वा सामर्षम्, कशया तांस्ताडयति ।) गच्छत अपरं शोभनं पटं निर्माय समानयत । (मुद्राः प्रक्षिप्य ते गच्छन्ति ।)

वै० गौ०—(अनुचरमुद्दिश्य) भो भो ! अपरांस्त्रिचतुरांस्तन्तुवायानानयत । (स निर्गत्य चतुरस्तन्तुवायानानीय) महाराज ! एते समागताः ।

वै० गौ०—(तन्तुवायानभिलक्ष्य) निर्मितान् कौशेयपटान् मह्यं दत्त ।

वि० गो०—अच्छा। सुन्दर वस्त्र बनाकर मुझे दो। उचित मूल्य होगा। इन रुपयों को लो।

[पन्द्रह रुपये देता है, वे नहीं लेते, बलपूर्वक रुपये उनके वस्त्र में बांध कर गरदनिया देकर निकाल देता है।]

जुलाहे—(दरवाजे पर खड़े होकर) साहब, हम सौ रुपये वाला वस्त्र पंद्रह रुपये में ही नहीं बनायेंगे।

वि० गो—(ताने के साथ) ये कौन शोर कर रहे हैं। (दरवाजे पर जाकर क्रोध में भरकर बेंत से उन्हें पीटता है) जाओ दूसरा सुन्दर वस्त्र बनाकर ले आओ।

[वे तीनों रुपये फेंककर चले जाते हैं,]

वि० गो०—(नौकर से) ए, दूसरे तीन चार जुलाहों को ले आओ।

नौकर—(जाकर, चार जुलाहों को लाकर) हजूर, ये आ गए हैं।

वि० गो०—(जुलाहों से) बने हुए रेशमी वस्त्र मुझे दो।

तं०—न वयं पटान्निर्मामः।

वे० गौ०—मिथ्यैतत्, यूयं पटान्निर्माय श्रेष्ठिनां सविधे विक्रीणीध्वे।

यदि मिथ्या भवेदत्र न स्वर्गः स्यात्कदाचन।

वै० गौ०—नाहं स्वर्गं जानामि।

लिम्पेमहितरां प्राप्यैर्यद्यसत्यं भवेदिदम्॥ ११॥

वै० गौ—नाहमिदं जानामि, जिह्वयैवैतदुक्तम्, जिह्वयैवेदमुच्यते, इति सर्वं मम प्रलम्भार्थं मिथ्यैव, (सर्वान् कशया ताडयितुं भर्त्सयति।)

सर्वे—न वयं निर्मामः (बद्धहस्तपुटाः कम्पन्ते।)

वै० गौ०—कथमत्र प्रत्ययः स्यात्?

सर्वे अस्माकमङ्गुष्ठच्छेदेन तु प्रत्ययो भविष्यति?

वै० गौ—अथ किम्।

सर्वे तं०—(स्वं स्वमङ्गुष्ठं कर्तयन्ति) यथा युष्माकं प्रत्ययः स्यात्तथैव विधास्यामः, अतः परं कृषिं करिष्यामः।

जुलाहे—हम वस्त्र नहीं बनाते।

वि० गो०—यह झूठ है, तुम वस्त्रों को बनाकर सेठों के पास बेंचते हो।

वि० गो०—हम स्वर्ग नहीं जानते।

जुलाहे—यदि इसमें झूठ हो तो मुझे कभी भी स्वर्ग की प्राप्ति न हो। यदि यह झूठ हो तो हम सम्पूर्ण पापों से लिप्त हों॥ ११॥

वि० गो—मैं यह नहीं जानता, जीभ से यह कहा जाता है, जीभ से वह कहा जाता है। यह सब मुझे ठगने के लिये झूठ ही है।

(सबको बेंत से पीटने के लिये डांटता है।

सब—हम नहीं बनाते। [हाथ जोड़े हुए, वे कांपते हैं]

वि० गो०—इस पर विश्वास कैसे हो।

सब—हमारे अंगूठों के कटने से तो विश्वास होगा।

वि० गो०—यह ठीक है।

सब—(अपने अपने अंगूठों को काटते हैं) जैसे आपको विश्वास हो, वैसा ही करेंगे। इसके अनन्तर खेती करेंगे।

वै० गौ०—तथाऽस्तु । युक्तं जातम् , । (इति निष्क्रान्तः सानुचरो वैदेशिको गौराङ्गः ।) (ततः प्रविशति सखीसहिता भारतमाता । सर्वे तन्तुवायाः वेदनया खिन्ना भारतमातरं प्रणम्य निर्गच्छन्ति ।)

भारतमाता—(रुदती)

हा हा किं मम पुत्रकेषु विहितं हा प्रत्ययात्किं कृतम्,
हा देशस्य दशां, किमस्य भविता, हा सर्वनाशोऽभवत् ।
हा दीनानपि वित्तलोलुपतया निघ्नन्त्यमी मत्सुतान्
सर्वे हा प्रलयं गताः मम सुताः वीरर्विहीनास्म्यहम् ॥१२॥

(स्वकीयमुरस्ताडयति)

नै० स०—(गृह्णती) किन यस समय बंगाल को निमित्त आफ्नो छाती पीट्‌त छ्यौ । तिमी वीर जन्माउने हौ, तिमिले नै रघु नहुस सगर हरु लाई उत्पन्न गर्‍यौ । तिलक मालवीय लाजपतिराय जवाहरलाल गांधी

वि० गो—अच्छा, टीक हो गया ।

[नौकर के साथ विदेशी गोरा चला जाता है। इसके अनन्तर सखी सहित भारतमाता आती हैं। पीड़ा से व्यथित सब जुलाहे भारतमाता को प्रणाम कर चले जाते हैं]

भारतमाता—(रोती हुई) हाय हाय, मैंने अपने लड़कों का क्या कर डाला, हाय, विश्वास से मैंने क्या कर लिया । हाय, इस देश की क्या दशा होगी, हाय, सर्वनाश हो गया। हाय, धन लोलुपता के कारण ये लोग मेरे दुःखी पुत्रों को मारते हैं। मेरे सब बच्चे मर गए हैं, मैं कायर प्रसविनी हूँ ॥ १२ ॥

[अपनी छाती पीटती है]

नै० स०—(पकड़ती हुई) इस समय बंगाल के लिये अपनी छाती क्यों पीट रही हो। आप वीरजननी (वीरों को पैदा करनेवाली) हैं, आपही ने रघु, नहुष, सगर इत्यादि पैदा किये हैं। तिलक, मालवीय लाजपतराय गांधी,

हरु लाई उत्पन्न गर्ने छ्यौ। इही नैं दास खुदीराम सुवास मालवीय आजाद हरु वीर तिम्रा सुपुत्र हुने छन।

(किन्तु इदानीं वङ्गदेशस्य कृते आत्मनो वक्षस्थलं ताडयसि। भवती वीरप्रसविनी, त्वयैव रघुनहुषसगरप्रभृतय उत्पादिताः। उत्पादयिष्यन्ते च तिलकमालवीयलाजपतिरायगाँधीजवाहरलालप्रभृतयः। इहैव दासखुदीरामसुभाषाजादप्रभृतयो वीरास्तव सुपुत्रा भविष्यन्ति।

भा०—हला! कथं त्वयैतदवगतम्? एते सुपुत्रा ममौरसा भविष्यन्ति।

ने० स०—जोतिष शास्त्रका वल वाट, हामी जान्द छौं। सूर्यसिद्धान्त परासरजैमिनीसूत्र आदि हरु हमले संपूर्ण जोतिष शास्त्र मैले पड़ियेका छन्।

(ज्यौतिषशास्त्रवलेन वयं जानीमहे। सूर्यसिद्धान्तपराशरजैमिनिसूत्रप्रभृतिकं मया सम्पूर्णं ज्यौतिषशास्त्रं पठितम्।)

भा०—तव वचनप्रत्ययादाश्वसिताऽस्मि, परं किं कुर्याम्।

हा हा मयैव विहितः प्रथमापराधो,
यत्प्रत्ययादिह सुखेन निवासितोऽसौ।

जवाहर लाल इत्यादि आप से पैदा होंगे। यहां पर ही दास, खुदीराम, सुभाषचन्द्र, अब्दुल कलाम इत्यादि वीर आपके पुत्र होंगे।

भारतमाता—सखी, यह तुमने कैसे जाना कि ये मेरी औरस सन्तति होंगी।

ने० स०—ज्योतिष शास्त्र के वल से मैं यह जानती हूँ। सूर्यसिद्धान्त, पराशर जैमिनिसूत्र इत्यादि सम्पूर्ण ज्योतिषशास्त्र मैंने पढ़ा है।

भारतमाता—तुम्हारे वचन पर विश्वास कर ढाँढ़स बँध गया है। परन्तु क्या करूँ?

हाय हाय, मैंने ही यह पहला अपराध किया है कि सुख पूर्वक इन्हें यहाँ पर विश्वास के कारण बसाया है, उसी का यह अशुभ फल है, जिससे कि

तस्यैतदेव फलमस्म्यशुभं प्रपन्ना
यन्मे निरीहतनयाः प्रलयं प्रयान्ति ॥ १३ ॥

(ततः प्रविशति सानुचरो वैदेशिको गौरङ्गः । सखीसहिता भारतमाताऽन्तर्हिता तिष्ठति ।

वै० गौ०—(इतस्ततोऽवलोक्य) सानन्दम् ,

व्यापारसंपदः सर्वाः समूलोन्मूलिता हठात् ।
भारतीयानिमान्सर्वानथ दासान्विदध्महे ॥ १४ ॥

(पुनरितस्ततोऽवलोक्य भारतमातरं गृहीत्वा निर्गच्छति सानुचरो गौराङ्गः ।)

(ततः प्रविशति भारतमातुश्चरणदर्शनं विधातुं शिराजुद्दौलः ।)

शिराजः—(इतस्ततोऽवलोक्य. साश्चर्यम् , मनसि) क वर्त्तते भारतमाता ? (प्रकाशम्) कः कोऽत्र भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो (जयतु जयतु देवः ।)

मेरे निरीह लड़के विनष्ट हो रहे हैं ॥ १३ ॥

[इसके अनन्तर,नौकर सहित विदेशी गोरे का प्रवेश होता है । सखी सहित भारतमाता छिप जाती है ।]

वि० गो०—(इधर उधर देखकर आनन्द के साथ) बलपूर्वक सम्पूर्ण व्यापारिक सम्पत्तियों का समूल उन्मूलन हो गया है । अब इन सब भारतीयों को दास बनायेंगे ॥ १४ ॥

[फिर इधर उधर देखकर भारतमाता को पकड़कर नौकर के सहित गोरा जाता है]

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर भारतमाता की चरण वन्दना के लिए शिराज-उद्दौला आता है ।]

शिराज—(इधर उधर देखकर आश्चर्य में पड़कर मन में) भारतमाता कहाँ हैं ? (प्रकाश) कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) जहाँपनाह की जय हो ।

शिराजः

शिराजः—कथं मातुर्मोक्षः स्यात्। पृष्ठ १९
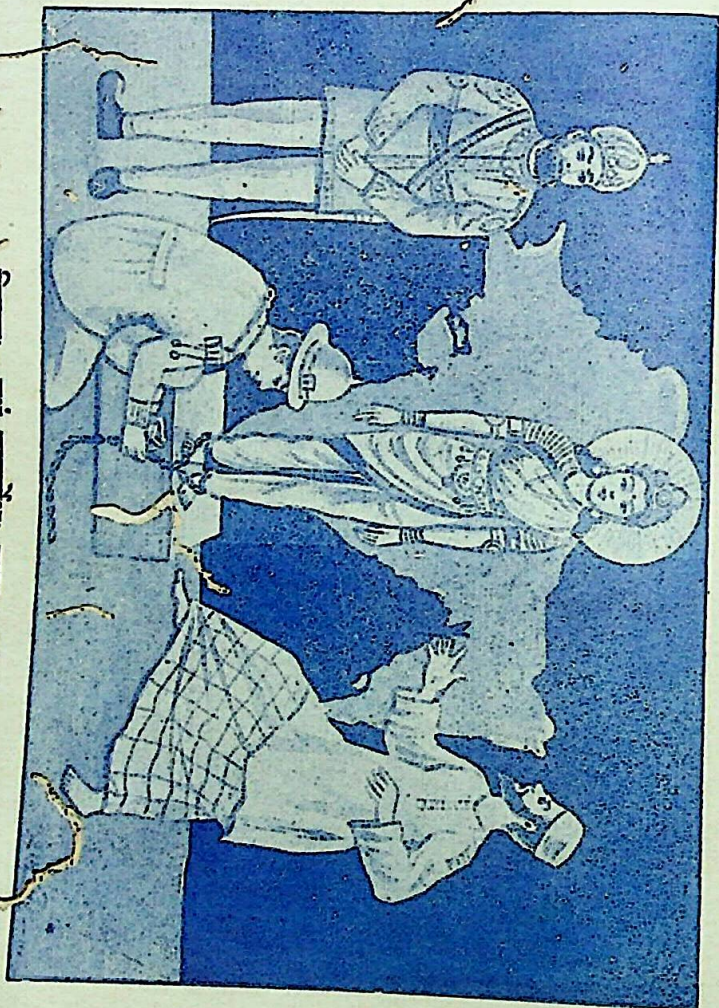
शिरा०—क वर्तते भारतमाता ?

दौवारिकः—विदेसिओ गोराङ्गो निगडिउँ हठाउ गहिऊण निग्गअत्ति सुणिमो। (वैदेशिको गौराङ्गो निगडयितुं हठाद् गृहीत्वा निर्गत इति शृणोमि ।)

शिराजः—आः किं कुर्याम !! कथं मातुर्मोक्षः स्यात् !! (इति सचिन्तस्तिष्ठति । (दौवारिको निर्गत्य पुनः प्रविशति ।)

दौ०—जेदु जेदु देवो। महाराज! दानासाहो दुआरि चिट्ठइ। (जयतु जयतु देवः। महाराज! दानाशाहो द्वारि तिष्ठति।)

शिराजः—प्रवेशय। (ततो दानाशाहं प्रवेश्य निर्गतः ।)

दानाशाहः—जयो धर्माधिपतेरीश्वरस्य ।

शिराजः—(किञ्चिदुत्थाय) नमो धर्माचार्याय ।

दाना०—भवान् कच्चित् कुशली ?

शिरा०—(सनिर्वेदम्) प्राणा न निर्गच्छन्त्येतदेव कुशलम् ।

शिराज—भारतमाता कहाँ है ?

द्वारपाल—यह सुनता हूँ कि वेड़ी डालने के लिए विदेशी गोरा उसे बलपूर्वक पकड़ ले गया है।

शिराज—ओह, क्या करें !! किस प्रकार माता का छुटकारा हो !! [चिन्ता करता है। द्वारपाल जाकर फिर आता है।]

द्वारपाल—जहाँपनाह की जय हो। हजूर, दानाशाह दरवाजे पर आए हुए हैं।

शिराज—अन्दर बुलाओ।

[इसके अनन्तर दानाशाह को अन्दर कर चला जाता है।]

दानाशाह—धर्माधिकारी शाहंशाह की जय हो।

शिराज—(कुछ उठकर) धर्माचार्य की जय हो।

दाना०—कुशल से हो ?

शिराज—(निर्वेद के साथ) प्राण नहीं निकलते इतनी ही कुशल है।

दाना०—परं प्रजासु कथं व्यभिचरसि ?

अन्तःपुरे स्वे सुमनोहराभी रम्भोरुभिर्हाटककान्तिकाभिः ।
रम्भादिकाभ्योऽप्यतिशालिनीभिः स्त्रीभिः कथं तुष्यति नो तवात्मा १५

किञ्च

अन्योपभुक्तां परकीयकान्तां भोक्तुं न ते धावतु चित्तवृत्तिः ।
उच्छिष्टभोजी खलु सारमेयस्तस्मात्परीवादपदं तु मा गाः ॥१६॥

शिरा०—(साश्चर्यमिव पश्यन्) केनापि प्रतारितोऽसि, नाहं कचिद्‌प्यसदाचरामि ।

दाना०—(सक्रोधं भूमौ पादं प्रहृत्य) कथं मामेव केनापि प्रतारितोऽसीति अधिक्षिपसि ?

शिरा०—महाराज ! सर्वतो विस्तीर्णं शत्रुजालम् , आत्मनश्चरित्रं चानुभवन्निदमेव निश्चिनोमि ।

दाना०—प्रजा में क्यों व्यभिचार करते हो ?

अपने रनवास में अतिसुन्दर, कदली के समान जंघावाली, सुवर्ण के समान कान्तिशालिनी, रम्भा इत्यादिक अप्सराओं से बढ़कर अत्यन्त सुन्दरी स्त्रियों से तुम्हारी आत्मा सन्तुष्ट क्यों नहीं होती ॥ १५ ॥

और—

दूसरे से उपभुक्त दूसरे की स्त्री का उपभोग करने के लिए तुम्हारी मनोवृत्ति न दौड़ा करे, क्योंकि कुत्ता ही जूठन चाटनेवाला होता है। अतः तुम निन्दा के पात्र न बनो ॥ १७ ॥

शिराज—(आश्चर्य के साथ देखते हुए) किसी ने तुम्हें धोखा दिया है। मैं कभी भी बुरा आचरण नहीं करता ।

दाना०—(क्रोध से पृथ्वी पर पैर पटककर) क्यों ? मेरे ही ऊपर आक्षेप करते हो कि किसी ने धोखा दिया है ?

शिराज—महाराज चारों ओर शत्रुओं का जाल फैला हुआ है, अपने चरित्र का अनुभव करते हुए यही निश्चय करता हूँ ।

दाना०—आः दुष्टापसद ! कथं नाम स्वं निर्मलीकरोषि । किं त्वया कदाचिदपि नासदाचरितम् ?

शिरा०—(सानुनयम्) महाराज ! वृत्तं तत् । इदानीं प्रजापालनभारावनतं मां रक्ष । पश्य,

शत्रुर्मां परिभावयन् प्रियजनैश्चित्रैर्वचोबन्धनै-
र्विद्वेषं मयि मित्रबान्धवकुलाचार्यैः सहोत्पादयन् ।
सर्वास्वेव मम प्रजासु निभृतं तन्वन् विरोधोद्भवं,
हा हा भारतमातरं निगडितां कर्तुं हठादीहते ॥१७॥

इदानीं भारतमातृरक्षार्थमुद्युञ्जानः समस्तविलासपराङ्मुख एव संवृत्तः ।

दाना०—रे मूर्ख ! राजधर्मशून्योऽसि ।

शिरा०—महाराज ! वैदेशिकानां मायाजालाद्विभ्रान्तोऽस्मि ।

दाना०—रे दुष्ट नीच, अपने को कैसे निर्दोष बना रहे हो, क्या तुमने कभी बुरा नहीं किया ?

शिराज—(नम्रता के साथ) महाराज, वह हो चुका, अब प्रजा पालन के भार से अवनत मेरी रक्षा करो देखो—

चित्र विचित्र वचन रचनाओं से मेरा अपमान कर, यह शत्रु वर्ग मेरे मित्र, बान्धव और कुलगुरु से विद्वेष करा रहा है । एवं मेरी सम्पूर्ण प्रजा में गुप्त रूप से (छिपकर) विरोधाङ्कुर को फैलाता हुआ वह, हाय, भारतमाता को बलपूर्वक बन्दिनी बनाना चाहता है ॥ १७ ॥

इस समय भारतरक्षा के लिए उद्योग करता हुआ मैं सम्पूर्ण आमोद प्रमोद से पराङ्मुख हो गया हूं ।

दाना०—रे मूर्ख, राजधर्म से शून्य हो ।

शिराज—महाराज विदेशियों की मायाजाल से घबड़ा गया हूं । मैं तो

राजधर्मं तु सम्यग् जानामि । शृणु—

अर्थकामौ न धर्मेण प्रवार्धेत विचक्षणः ।
धर्मकामौ न चार्थेन न कामेनेतरद् द्वयम् ॥१८॥
ईतावापत्तिकाले च प्रजानां पालनं चरेत् ।
व्यसनाद् भयतो रक्षेदेष धर्मो महीपतेः ॥१९॥

दाना०—एवमपि त्वमसन्नेव श्रूयसे ।

शिरा०—(मनसि) सम्यग्बोधितोऽपि नायं मन्यते । नूनमयं शत्रुपक्षाश्रितो मम परिभावक एव । (प्रकाशम्) (सक्रोधम्) रे भिक्षुक! निर्बुद्धे ! परोक्तमात्रं कथं प्रमाणयसि ।

दाना०—(सरोषम्) रे यवनापसद ! कथं मामेव तिरस्कुरुषे ।

शिरा—(अनुचरमभिलक्ष्य) परोक्तमात्रं प्रमाणयतोऽस्य कर्णौ छिद्येताम् ।

ठीक-ठीक राजधर्म जानता हूँ । सुनो—बुद्धिमान को चाहिये कि धर्म से अर्थ और काम में रुकावट न डाले, और अर्थ से धर्म और काम में, एवं काम से दोनों से (धर्म और अर्थ में) बाधा न डाले । यह निर्णय है ॥१८॥

ईति (खेती को हानि पहुँचानेवाले उपद्रव—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक, टिड्डी-शुष्क (पक्षियों की अधिकता) दूसरे राजा की चढ़ाई तथा आपत्ति के समय प्रजा का पालन करना चाहिये । नाश तथा भय से उनकी रक्षा करनी चाहिये । यह राजा का धर्म है ॥ १९ ॥

दाना०—इतना होने पर भी तुम बुरे हो यही सुनता हूँ ।

शिराज—(मन में) भलीभाँति समझाने पर भी यह नहीं मानता । यह अवश्य ही शत्रु-पक्षपाती है, तथा मुझे बदनाम करनेवाला है । (प्रकाश) अरे भिखमंगे, निर्बुद्धि, दूसरों के कहने को ही क्यों पक्का मानते हो ।

दाना० (क्रोध से) अरे काफिर (नीच मुसलिम) मेरा तिरस्कार क्यों करते हो !

शिराज—(नौकर को लक्ष्य कर) दूसरों से केवल कहे गये वचन को पक्का माननेवाले इसके दोनों कान काट लो ।

दाना०—अनुभविष्यस्यचिरेणैवैतदौद्धत्यस्य फलम्। (सरोषम्)

कलत्रपुत्रानुचराः कथाशेषा भवन्तु ते।
क्लाइवादिपराभूतः पशुमारं मरिष्यति ॥ २० ॥

(अनुचरो दानाशाहं गृहीत्वा निष्क्रामति)

शिरा०—(मनसि) आः कथमेष स्वकीयोऽपि विपक्षप्रपञ्चरचनया परकीय एव संवृत्तः। (प्रकाशम्) कः कोऽत्र भोः।

दौ०—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो। (जयतु जयतु देवः)

शिराजः श्रान्तोऽस्मि, विश्रमितुमिच्छामि। विश्रान्तिस्थानमादेशय।

दौ०—इदो इदो देवो। (इत इतो देवः।)

(इति दौवारिकेण सह निष्क्रान्तः।)
(निष्क्रान्ताः सर्वे।)

इति श्रीमहामहोपाध्यायपण्डितमथुराप्रसाददीक्षितकृतौ
भारतविजयनाटके प्रथमोऽङ्कः।

दाना० - इस औद्धत्य का फल शीघ्र ही मिलेगा। (क्रोध से) स्त्री, पुत्र एवं नौकरों के साथ तुम्हारा नाश हो। तुम्हारा ही आदमी पशु की मृत्यु के समान तुम्हारा नाश करे (अर्थात् तुम्हारा ही आदमी तुम्हें कुत्ते के मौत से मारे।)

(नौकर दानाशाह को पकड़कर चला जाता है)

शिराज—(मन में) आह, शत्रु के प्रपंचों से यह स्वकीय पुरुष भी परकीय कैसे हो गया है। (प्रकाश) कोई है।

द्वारपाल—(प्रवेश कर) जहाँपनाह की जय हो।

शिराज—थक गया हूँ। विश्राम करना चाहता हूँ विश्राम-स्थान बताओ।

द्वारपाल—जहाँपनाह, इधर आइये।

[द्वारपाल सहित शिराज जाता है]

[सब जाते हैं।]

इति श्री महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाद दीक्षित विरचित
भारतविजयनाटक का प्रथम अंक समाप्त हुआ।

द्वितीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति वाट्सनसेनापतिना सह क्लाइवमहोदयः ।)

दौ०—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो। मीरजाफरेण सहामीचन्दो संपत्तो। (जयतु जयतु देवः। मीरजाफरेण सहामीचन्द्रः सम्प्राप्तः।)

क्लाइवः—प्रवेशय (ततः प्रविशति मीरजाफरामीचन्द्राभ्यां सह दौवारिकः।)

अमी०—विजयतामीश्वरः।

जाफरः—विजयतां सर्वशक्तिमान्।

क्लाइवः—आगम्यताम। (अङ्गुल्या निर्दिशन्) इमे आसने। आस्यताम्। (उभावुपविशतः।) दौवारिक! त्वमपि स्वनियोगमशून्यं कुरु। (निष्क्रान्तो दौवारिकः।) अमीचन्द्र! किमपरं नगरवृत्तम्?

अमी०—सर्वं सुसम्पन्नमेव। अयं सर्वसेनाध्यक्षो वङ्गाधिपतेः शिराजस्य परमविश्वासपात्रं वङ्गराज्यस्वामित्वेन भवतां व्यापारप्रभुत्वं स्वप्रान्ते विधास्यति, धनं च दास्यति।

द्वितीय अङ्क

[इसके अनन्तर वाट्सन सेनापति के साथ क्लाइव साहब आते हैं]

द्वारपाल (आकर)—हजूर की जय हो। मुसलिम मीरजाफर के साथ अमीचंद आए हैं।

क्लाइव—बुलाओ।

[इसके अनन्तर मीरजाफर और अमीचंद के साथ द्वारपाल आता है]

अमीचंद—साहब बहादुर की जय हो।

जाफर—सर्वशक्तिसम्पन्न साहब की जय हो।

क्लाइव—आइये। (अङ्गुली से बताता हुआ) ये आसन हैं। बैठिये। (दोनों बैठते हैं।) द्वारपाल, तुम भी अपने काम पर जाओ। [द्वारपाल जाता है]

अमीचंद, नगर का और क्या समाचार है?

अमीचन्द—सब ठीक है। सम्पूर्ण सेना का अधिनायक एवं बंगाल के अधिपति शिराज का अत्यन्त विश्वासपात्र यह पुरुष बंगालराज्य की प्रभुता पाने पर अपने प्रान्त में आपकी व्यापारिक प्रभुता स्थापित करेगा, और धन देगा।

क्लाइवः—(जाफराभिमुखं पश्यन्) कथमत्र भवतः स्वामित्वं स्यात् ?

जाफरः—भवानाक्रम्य विजयताम् ।

सर्वेऽपि सैन्यसहिताः सेनाधिपतयो वयम् ।
योत्स्यामहे न संग्रामे भवतो जयकाङ्क्षिणः ॥१॥

क्लाइवः—कथमत्र प्रत्ययः स्यात् ।

जाफरः– ईश्वरसाक्षिकं लेखं कारय ।

अमी०—युक्तमिदम् । मह्यमपि त्रिंशल्लक्षाणि देयानीति लेखे भवतु ।

क्लाइवः—अधिकमेतत्, नैवं भविष्यति ।

अमी०—(किञ्चिद् रुष्टः सन्) अहं सर्वमपीमं भेदं स्फोटयिष्यामि, युष्माकं प्रपञ्चरचनां शिराजमहाराजस्य सविधे निवेदयिष्यामि च, भारते तव कम्पन्याः संसर्गोऽपि नावस्थास्यते, व्यापारकथा तु दूर एव भविष्यति । भवतामनेकशः कोटिलाभे समस्तवङ्गप्रान्ते व्यापारप्रभुत्वे

क्लाइव—(जाफर की ओर देखकर) यहाँ पर आपको प्रभुता कैसे हो सकती है ?

जाफर—आप आक्रमण करके जीत लें ।

सेनासहित हम सब सेनापति वहाँपर रहते हुए भी आपके जय की अभिलाषा से युद्ध नहीं करेंगे ॥ १ ॥

क्लाइव—इस पर विश्वास कैसे हो सकता है ?

जाफर—ईश्वरसाक्षिक लेख लिखा लीजिये ।

अमीचन्द—यह ठीक है । मुझे भी तीस लाख देने होंगे—यह लेख में लिखा दो ।

क्लाइव—यह अधिक है । ऐसा नहीं होगा ।

अमी०—(कुछ क्रुद्ध होकर) मैं इन सभी रहस्यों का उद्घाटन कर दूँगा, और तुम्हारे प्रपञ्च को महाराज शिराज के पास निवेदन कर दूँगा । फिर भारतवर्ष में तुम्हारी कंपनी का संसर्ग भी न रह जायगा । व्यापार की बात तो दूर रही । अनेक करोड़ रुपयों की प्राप्ति तथा समस्त बंगाल प्रान्त में आपकी

च नाधिकम्। मदर्थं प्रतिशतं पञ्चदाने त्वधिकमिति भवतो महती स्वार्थपरता। (इति जिगमिषति)

क्लाइवः--(मनसि) लोभपरवशः स्वदेशं विनाशयति, स्वस्वामिनं च प्रतारयतीत्येनं प्रतारयिष्यामि (उत्थाय तत्सविधे समुपविश्य च) (प्रकाशम्)

सहासमेतत्समुदीरितं सखे! विरोधबुद्ध्या न गृहाण मद्वचः।
लतातताना द्रुममन्तरेण किं समुन्नमन्तः परिलक्षिताः क्वचित्?

सर्वमपि भवदभिलषितं लेखे विधास्यामि।

अमी०—तर्हि लेखय सन्धिप्रमाणपत्रम्।

क्लाइवः—अस्त्वेवम्। (ततो वाट्सनेन सहान्तर्गृहं गत्वा सन्धिपत्रद्वयं लिखित्वा जाफरमाहूय हस्ताक्षरं कारयति। वाट्सनेन सह स्वयं च कुरुते। पुनर्बहिरागत्य सर्वे यथास्थानमुपविशन्ति।)

व्यापारिक प्रभुता होने पर यह अधिक नहीं है। आपकी स्वार्थपरता इससे बढ़कर क्या होगी कि मेरे लिए सौ में पाँच रुपये देना अधिक है। (जाना चाहता है)

क्लाइव--(मन में) लोभ के वश में पड़कर यह अपने देश का नाश कराता है, और अपने मालिक को धोखा देता है, इसलिये मैं इसे ठगूँगा। (उठकर उसके पास बैठकर) (प्रकाश)

हे मित्र मैंने यह बात हँसी में कही थी, विरोध बुद्धि से मेरी बात न मानना, क्योंकि लतातन्तु वृक्ष का परित्याग कर क्या कहीं भी समुन्नत होते हैं॥ २॥

"आपकी इच्छित सब शर्तें लेख में रक्खूँगा।

अमीचन्द—तो सन्धि का इकरारनामा (प्रमाणपत्र) लिखाइये।

क्लाइव—अच्छा।

[इसके अनन्तर वाट्सन के साथ भीतर के कमरे में जाकर दो सन्धिपत्र लिखकर जाफर को बुलाकर हस्ताक्षर कराता है, और वाट्सन के साथ स्वयं भी हस्ताक्षर करता है। फिर सब बाहर आकर अपनी-अपनी जगह पर बैठ जाते हैं।]

अमीचन्द्रः—लिखितं सन्धिपत्रम ?

क्लाइवः—आम्

अमी०—मह्यमपि दर्शय ।

क्लाइवः—पश्यतु महाभागः, (इति[1] रक्तं सन्धिपत्रममीचन्द्रहस्ते ददाति ।)

अमी०—(पत्रं गृहीत्वा वाचयति) यावदाभूतसंप्लवं सन्धिं पालयिष्यामि, इति ईश्वरसाक्षिकं प्रतिजाने ।

(१) शिराजविहितं सन्धिं समर्थये ।

(२) भारतीयो वा वैदेशिको वा यो वा को वा तव शत्रुः, स ममाप्यति शत्रुरेव ।

अमीचन्द—सन्धिपत्र लिख गया ?

क्लाइव—हाँ ।

अमीचन्द्र—मुझे भी दिखाओ ।

क्लाइव—श्रीमान् जी, देखिये ।

[लाल सन्धिपत्र अमीचन्द के हाथ में देता है ।]

अमीचन्द—(पत्र लेकर बाँचता है ।) प्रलय पर्यन्त सन्धि का पालन करूँगा—इसे ईश्वर को साक्षी मानकर प्रतिज्ञा करता हूँ ।

१. शिराज से की गई सन्धि का समर्थन करता हूँ ।

२. भारतीय अथवा विदेशी जो कोई तुम्हारा शत्रु है, वह मेरा भी पक्का शत्रु है ।

---

१ नोट—वाट्सनजाफरौ तु केवलममीचन्द्रप्रतारणाशून्ये शुभ्रे सन्धिपत्रे हस्ताक्षरं कुरुतः । रक्ते सन्धिपत्रे क्लाइवोऽमीचन्द्रप्रतारणाय उभयोर्नाम्नाऽपि हस्ताक्षरं विदधाति । पुनः सर्वे बहिरागत्य यथास्थानमुपविशन्ति ।

रक्ते सन्धिपत्रे जाफरेणापि हस्ताक्षरं कृतमित्यत्र मतभेदः ।

नोट—अमीचंद की प्रतारणा (छल) से शून्य शुभ्र सन्धि-पत्र पर वाट्सन और जाफर हस्ताक्षर करते हैं, रक्त सन्धि-पत्र पर क्लाइव अमीचंद को छलने के लिए दोनों के नाम से हस्ताक्षर करता है । जाफर ने रक्त सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर किया है, इसके विषय में मतभेद है ।

(३) फ्रांसदेशीयान् वङ्गदेशान्निष्कासयिष्यामि, तेषां स्थानानि कम्पन्याधिपत्ये भविष्यन्ति ।

(४) कलिकातानगरे शिराजाक्रमणसमये समुत्पन्नायाः कम्पनीक्षतेः पूर्त्तये कोटिपरिमितं धनं दास्यामि ।

(५) भवतां क्षतिपूर्तये पञ्चाशल्लक्षाणि दास्यामि ।

(६) जेम्समूरप्रभृतीनां क्षतिपूर्तये विंशतिलक्षाणि दास्यामि ।

(७) आर्मियानां क्षतिपूर्तये सप्त लक्षाणि दास्यामि । अन्यदपि यथा एडमिरल-वाट्सन-कर्नल-क्लाइवप्रभृतयो वक्ष्यन्ति तथा दास्यामि ।

(८) इहैव नालप्रदेशाद् वहिः षष्टिः सहस्राणि कनालानि भूमिं कम्पन्यै दास्यामि ।

(९) कलिकातानगराद्दक्षिणे भागे कुल्पीप्रदेशपर्यन्तं युष्माकमाधिपत्यं भविष्यति । तत्र भूमिकरे आयातनिर्यातकरेषु च भवतामेवाधिपत्यं स्थास्यति ।

(१०) यदा भवद्भ्यः साहाय्यं ग्रहीष्यामि तदा सर्वोऽपि सैनिकव्ययो मम भविष्यति ।

---

३. फ्रांस देश के निवासियों को बंगाल से निकाल दूँगा, और उनके स्थान तुम्हारे अधीन होंगे ।

४. कलकत्ता नगर में शिराज के आक्रमण से हुई कम्पनी की क्षति-पूर्ति के लिये एक करोड़ रुपया दूँगा ।

५. लूटी गई आपकी वस्तुओं की क्षति-पूर्ति के लिये ५० लाख रुपया दूँगा ।

६. जेम्समूर इत्यादि की क्षतिपूर्ति के लिये (जो कुछ नुकसान हुआ है उसके लिये) २० लाख रुपया दूँगा ।

७. आर्मिया (सेना) की क्षतिपूर्ति के लिये ७ लाख रुपया दूँगा, और भी जो एडमिरल वाटसन, कर्नल क्लाइव इत्यादि कहेंगे वह दूँगा ।

८. यहाँ ही नाल जिले से वाहर ६० हजार कनाल भूमि कंपनी को दूँगा ।

९. कलकत्ता नगर के दक्षिण भाग में कुल्पी प्रदेश तक आपकी प्रभुता होगी। वहाँ पर लगान तथा चुंगी में आपकी प्रभुता रहेगी ।

१०. जब आपसे सहायता लूँगा, तब सेना का सम्पूर्ण व्यय मेरा होगा ।

(११) हुगलीप्रदेशाद्दक्षिणभागे कुत्रापि दुर्गं न निर्मापयिष्यामि।
त्रिंशल्लक्षाणि अमीचन्द्राय दास्यामि।

युक्तमुचितं चेदम्। परं त्वेवं सर्वतो ग्रहणेऽस्य सविधे किं स्थास्यति।

क्लाइवः—त्रिकोटिपरिमितं धनं स्थास्यति, वङ्गप्रान्ते चाधिपत्यं भविष्यति।

जाफरः—उचितमेव सन्धिपत्रे लिखितम्। त्रिकोटिलाभः, वङ्गप्रान्ते चाधिपत्यम्। नातः परं ममाभीप्सितम्।

(ततो निष्क्रामन्ति वाट्सनजाफरामीचन्द्राः।)

क्लाइवः—(आकाश शिराजं लक्ष्यीकृत्य।)

रे रे शिराज ! सकलध्वजिनीपतिभ्यो
गृह्णामि सम्प्रति विभेद्य नयादिह त्वाम्।
न फ्रांसजा, न च विहारभवा, न वङ्गाः,
सर्वेऽपि वा सुमिलिता नच रक्षयन्ति ॥३॥

---

११. हुगली जिले के दक्षिण भाग में कहीं पर भी किला न बनवाऊँगा।
तीस लाख अमीचंद को दूँगा।'

यह युक्त है और उचित भी। लेकिन इस प्रकार चारो ओर से लेने पर इसके पास क्या बचेगा ?

क्लाइव—तीन करोड़ रुपये बचेंगे और बंगाल पर इसका अधिकार होगा।

जाफर—सन्धिपत्र में ठीक ही लिखा गया है। तीन करोड़ रुपये और बंगाल पर अधिकार--इससे अधिक मैं नहीं चाहता।

[इसके अनन्तर वाट्सन जाफर और अमीचंद चले जाते हैं।]

क्लाइव--[आकाश में शिराज को लक्ष्य कर—] अरे शिराज, यहाँ पर अपनी नीति से सेनापतियों को फोड़कर तुम्हें अब पकड़ता हूँ। न फ्रांसीसी न बिहारी और न बंगाली और न ये सब मिलकर संग्राम में तुम्हारी रक्षा कर सकते हैं ॥ ३ ॥

(मनसि) जाफरमात्मसात्कृत्वा कम्पन्या राज्यं स्थापयिष्यामि (ततः किञ्चिदाकर्ण्य) कः कोऽत्र भोः।

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो—(जयतु जयतु देवः।)

क्लाइवः—कुतोऽयं कोलाहलः ?

दौवारिकः—शिराजं विजेउं समागयाए उच्छाहवईए सेणाए।

(शिराजं विजेतुं समागताया उत्साहवत्याः सेनायाः।)

(ततो निष्क्रामति क्लाइवः)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति शिराजुद्दौला :—)

शिरा०—(सचिन्तः) आः कथमेते इङ्गलैण्डजाताः स्वव्यापार-व्याजेन स्वाधिपत्यं स्थापयन्ति, भारतमातरं च निगडयन्ति।

विपक्षपक्षाश्रयणापदेशाद्विनाशयन्त्यत्र मम प्रभुत्वम्।
मिषेण केनापि विदूष्य सन्धिं युद्धोद्यताश्चैव पराक्रमन्ते॥४॥

जाफर को अपने अधीन कर कंपनी का राज्य स्थापित करूंगा। (इसके अनन्तर कुछ सुनकर) कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) साहब बहादुर की जय हो।

क्लाइव—यह शोर कहाँ हो रहा है।

द्वारपाल—शिराज को जीतने के लिये आयी उत्साह सम्पन्न सेना में।

[इसके अनन्तर क्लाइव जाता है]

(परदा गिरता है।)

[इसके अनन्तर शिराजुद्दौला आता है]

शिराज—(चिन्ता की मुद्रा में) ओह, ये इंगलैंड निवासी अपने व्यापार के व्याज से भारत के व्यापार का नाश किस प्रकार कर रहे हैं ? अपनी प्रभुता की स्थापना करते हैं और भारतमाता को वन्दिनी बनाते हैं।

शत्रुपक्ष के आश्रय लेने के व्याज से ये मेरी प्रभुता का यहाँ पर विनाश करते हैं, किसी बहाने से सन्धि की शर्तों को तोड़ते हैं, और युद्ध में उद्यत हो वीरता दिखाते हैं॥ ४॥

अहो सर्वेऽपि एते इङ्गलैण्डजाः कम्पन्याः पुरुषमात्मानं प्रकटयन्तः करं न प्रयच्छन्ति, भारतीयाश्च करं दत्त्वा कथमेषां क्रयविक्रये साम्यं करिष्यन्ति ?

मद्रगुर्जरबङ्गेषु विस्तीर्णा व्यापृतिच्छलात् ।
स्वधर्मं स्वाधिपत्यं च स्थापयन्ति यथाक्रमम् ॥५॥

(ततो रथ्यायां प्रविशति ऐन्द्रजालिकः)

ऐन्द्र—(आकशे लक्ष्यं बद्ध्वा) आः किमेते कथयन्ति, ममाचरितमीश्वरोऽपि न जानाति । स्यादेतत्, परन्तु—

भूमौ जले वा यदिवाऽम्बरे वा
स्वान्तेऽपि किं वाऽऽशु विकल्पितं स्यात् ।
न ज्ञातुमीशः परमेश्वरः स्या-
दहं तु जाने सकलं प्रपञ्चम् ॥६॥

आः कथमेते प्रतिवचनमदत्त्वैव निर्गताः । (किञ्चिदग्रतो गत्वा, आकर्ण्य) किमेते कथयन्ति ।

अहो, ये सभी अंग्रेज अपने को कंपनी का आदमी बतला कर टैक्स नहीं देते हैं, और भारतीय टैक्स दे कर क्रय-विक्रय में (खरीद फरोख्त में) इनका मुकाबला कैसे करेंगे ।

मद्रास, गुजरात और बंगाल में व्यापार के बहाने से फैले हुए ये अपने धर्म की और अपनी प्रभुता की स्थापना क्रम से कर रहे हैं ॥ ५ ॥

[इसके अनन्तर रास्ते में बाजीगर का प्रवेश होता है ।]

बाजीगर—(आकाश में लक्ष्य बाँध कर) ये क्या कहते हैं, कि मेरे आचरण को ईश्वर भी नहीं जानता। ऐसा ही होगा लेकिन—

चाहे पृथ्वी पर हो, जल में हो, या आकाश में हो, चाहे किसी ने अपने मन में कुछ विचारा हो, और चाहे परमात्मा भी उसके जानने में समर्थ न हो, परन्तु मैं सब प्रपञ्च को (चालों को, रहस्य को) जानता हूँ ॥ ६ ॥

ओह, ये बिना उत्तर दिये ही चले गए ।

(कुछ आगे जाकर और सुन कर) ये क्या सकते हैं—

विद्वेषकालुष्यकषायितस्वमीर्ष्याकुलं राज्यमदप्रमत्तम्।
रामासु रक्तं विषयेषु सक्तं विभिन्नचक्रं विजहाति पद्मा ॥७॥

साधु ! साधु ! एवमेवैतत्। (पुनः कर्णं दत्त्वा) किमेते कथयन्ति ? एवं सति शिराजं लक्ष्मीर्विहास्यति। संभाव्यते चैतत्। यदि कश्चित् शिराजस्योद्बोधको न प्राप्नुयात्।

आः कथमेते देशद्रोहिणः स्वबन्धुष्वप्यसदामन्त्रयन्ति। (पुनरग्रतो गत्वा) आः किमेते कथयन्ति ?। सर्वतो विस्तीर्णादस्मदीयजालाद् वङ्गाधिपतिममुं कश्चिदपि मोचयितुं नैव शक्नोति। स्यादेतत्, परन्तु—

पाश्चात्त्यजालपतितं शयितं शिराज-
मुद्बोध्य बान्धवविरोधविपत्तिमग्नम्।
अद्योद्धरामि निजबुद्धिबलप्रभावात्
मन्दो विधिर्यदि भवेन्न तदन्तरायः ॥८॥

विद्वेषरूपी कलुषता से दूषित आत्मीय जनों से युक्त, ईर्ष्यालु, राजमद से मतवाले, स्त्रियों में अनुरक्त, विषयों में आसक्त एवं विच्छिन्न राजचक्रवाले पुरुष को लक्ष्मी छोड़ देती है ॥ ७ ॥

ठीक-ठीक, ऐसा ही है। (फिर कान लगाकर) ये क्या कहते हैं ? ऐसा होने पर लक्ष्मी शिराज को छोड़ देगी। हाँ, हो सकता है, यदि कोई शिराज को उद्बोधक न मिले तो।

ओह ! ये देशद्रोही अपने बान्धवों के विषय में भी बुरी सलाह करते हैं। (फिर आगे जाकर) ओह ! यह क्या कहते हैं ? चारों ओर फैले हमारे जाल से इस बंगाल के नवाब को कोई नहीं छुड़ा सकता। ऐसा ही हो, परन्तु —

पाश्चात्त्यों के मायाजाल में पड़े हुए, उद्बोधशून्य शिराज को जगाकर बान्धवों के विरोधरूपी विपत्ति में डूबे हुए शिराज को अपने बुद्धिबल के प्रभाव से आज निकाल दूंगा, यदि मन्द भाग्य उसके विघ्नरूप में न परिणत हो जाय ॥ ८ ॥

(नेपथ्ये) आः कस्त्वमसि ?

ऐन्द्र०—अहमिन्द्रजालोपजीवी । त्वं कयोपजीविकया जीवसि ?

पुरुषः (प्रत्यक्षीभूय) अहं राजसेवकः, दर्शय मह्यमपीन्द्रजालम् ।

ऐन्द्र०—त्वमपि मायाजालोपजीव्येव । अथापि दर्शयिष्यामि तुभ्यमिन्द्रजालम् । (पुनः किञ्चिद् गत्वा) नेदं दर्शनयोग्यं स्थानम् । (पुनरग्रतो विलोक्य) आगच्छ इह गृहचत्वरे त्वामपि दर्शयिष्यामि ।

पुरुषः—इदं राजगृहम् , नास्माकमिदानीं प्रवेशावसरः ।

ऐन्द्र०—कथमदृष्ट्वैव निर्गतः, अहं जीविकार्थं प्रविशामि ।

(प्रविश्य) "भूमौ जले वा यदि वाऽम्बरे वा" इत्यादि पुनः पठति ।

शिराजः—(कर्णं दत्त्वा) (मनसि) अयमैन्द्रजालिकवेषेण प्रेषितस्य शिवरामचरस्येव शब्दः श्रूयते । (प्रकाशम्) कः कोऽत्र भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो । (जयतु जयतु देवः ।)

(नेपथ्य में) अरे तुम कौन हो ?

बाजीगर—मैं बाजीगरी से जीविका वृत्ति करनेवाला हूँ। तुम किस वृत्ति से निर्वाह करते हो।

पुरुष—(सामने आकर) मैं राजसेवक हूँ। मुझे भी बाजीगरी दिखाओ।

बाजीगर—तुम भी माया-प्रपञ्च से निर्वाह करनेवाले ही हो, तो भी मैं तुम्हें बाजीगरी दिखाऊँगा (फिर कुछ चल कर) यह दिखाने का स्थान नहीं है। (फिर आगे देख कर) आ ओ इस घर के चबूतरे पर तुम्हें भी दिखाऊँगा.।

पुरुष—यह राजभवन है, इस समय हम लोगों के प्रवेश का अवसर (मौका) नहीं है।

बाजीगर—विना देखे ही क्यों चला गया। मैं अपनी जीविका के लिये प्रवेश करता हूँ। (प्रवेश कर) चाहे पृथ्वी पर हो, जल में हो या आकाश में हो, इस पद्य को फिर पढ़ता है।

शिराज (कान लगा कर, मन में) बाजीगर के वेश से भेजे गए शिवराम के-से ये शब्द सुनाई देते हैं। (प्रकाश) कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) जहाँपनाह की जय हो।

शिराजः—आहूय एनमैन्द्रजालिकम्, तावदिन्द्रजालदर्शनेनैव मनो मोदयिष्ये।

दौवारिकः—जं देवो आणवेदि (यद्देव आज्ञापयति।) (निष्क्रम्य तेन सह प्रविशति)।

शिराजः—त्वं स्वनियोगमशून्यं कुरुष्व। (इति निष्क्रान्तो दौवारिकः) शिवराम! कथय व्यापारव्याजेन स्वधर्मं स्वाधिपत्यं च स्थापयतां भारतमातरं च निबध्नतामिङ्गलैण्डजातानां पाश्चात्त्यानां वृत्तान्तम्।

शिव०—किमेषां बुद्धिवैभवेषु वक्तव्यम्। यत् पूर्वमेलिजावेथनाम्न्या इङ्गलैण्डराज्ञ्या भारतसम्राजमकबरं स्पेनादिदेशोद्भवेभ्यो व्यापारिभ्यो विभेद्य स्वदेशोद्भवानां सम्बन्धो दृढीकृतः।

शिरा०—किं नाम स्त्रीणां चातुर्येषु वक्तव्यम्।

यद् वेत्ति गीर्वाणगुरुः श्रमेण शुक्रोऽपि कृच्छ्रादितपोबलेन।

शिराज—इस बाजीगर को बुलाओ। तब तक बाजीगरी देख कर ही मन बहलायेंगे।

द्वारपाल—जो आज्ञा।

[जाकर फिर उसके साथ आता है]

शिराज—तुम अपने काम पर जाओ। (द्वारपाल चला जाता है।) शिवराम, व्यापार के व्याज से अपना धर्म तथा अपनी प्रभुता की स्थापना करने वाले और भारतमाता को बाँधने वाले, इङ्गलैण्ड देश में समुत्पन्न इन पाश्चात्त्यों का वृत्तान्त कहो।

शिव०—इनकी बुद्धि-वैभव के विषय में क्या कहना है कि पहले एलिजावेथ नामक इङ्गलैण्ड की रानी ने भारत सम्राट् अकबर को स्पेन इत्यादि देशों के व्यापारियों से फोड कर अपने देश निवासियों का सम्बन्ध पक्का कर लिया था।

शिराज—स्त्रियों की चतुरता के विषय में क्या कहना है।

जिसे देवताओं के गुरु बृहस्पति परिश्रम से, शुक्राचार्य भी कृच्छ्र इत्यादि व्रतों के

चाणक्यदेवः परिशीलनेन स्त्रियः स्वभावात्तदिदं विदन्ति ॥ ९ ॥

शिव०—ततः स्थास्सवेष्टमहोदयः सूरते अहमदाबादादिपत्तनेषु स्वकीयसर्वविधव्यापारेषु प्रतिशतं सार्द्धतिसृभिरेव मुद्राभिः करव्यवस्थामकारयत्। तदनु औरङ्गजेवसमये भारते स्वाधिपत्यलिप्सया समुत्सुकैः कतिभिश्चन इङ्गलैण्डजातैर्जलमार्गेण मुम्बाप्रान्ते प्राप्तानां पोतवणिजां लुण्ठनं व्यधायि।

शिरा०—आः लुण्ठाका एते, उपकारविलोपकाश्च। यद्भारतसम्राजा विहितमुपकारं विस्मृत्य तमेवोन्मूलयितुमुद्युक्ताः। ततस्ततः।

शिव०—ततः सम्राजा विजित्यैते बन्दीकृताः, निगडिताः, विपणिषु भ्रामिताश्च। उद्घोषितञ्च—

मत्कृपातः समायातान्ममैवोच्छेदकारकान्।
लुण्ठाकान् श्यामहृदयानेतान् पश्यन्तु मत्प्रजाः ॥१०॥

ल से, और चाणक्यदेव मननपूर्वक अध्ययन से समझते हैं, उसे स्त्रियाँ अप… स्वभाव से ही समझ लेती हैं ॥ ९ ॥

शिवराम—इसके अनन्तर स्थास्सवेष्ट महोदय ने सूरत,, अहमदाबाद इत्यादि नगरों में, अपने सब प्रकार के व्यापारों में सौ में ३½ रुपये टैक्स की व्यवस्था करा ली। इसके अनन्तर औरंगजेब के समय अपने आधिपत्य की इच्छा से उत्सुक कुछ इंगलैण्ड निवासियों ने जलमार्ग से बंबई आए हुए जहाजी सौदागरों को लूटा।

शिराज,—ओह, ये लुटेरे हैं, और उपकार के न मानने वाले हैं। भारत सम्राट् से किये गए उपकारों को भुला कर ये उसे ही नेस्त-नामूद करना चाहते हैं।

शिव०—तब बादशाह ने इन्हें जीत कर बन्दी बनाया, इनके पैरों में बेड़ी डाली और इनको बाजारों में घुमवाया। और यह घोषणा की कि—

मेरी ही कृपा से आए हुए, और मुझे ही उखाड़ कर फेकने वाले, और काले हृदय वाले इन लुटेरों को मेरी प्रजा देखे ॥ १० ॥

शिरा०—कथमेते तद्वीरतां कुशलतां चापि न स्मरन्ति ?

शिव०—अत एव विपणिषु भ्रामिताः।

शिव०—ततस्ततः।

शिव०—ततः सम्राजः क्षमाप्रार्थनया सर्वे * निर्मोचिताः दयापरवशेन सम्राजा पूर्ववद् व्यापारव्यवस्थाऽपि स्थिरीकृता। वङ्गदेशे च अजीमुशाहात् चटानट्यादिग्रामेषु भूमेः सर्वाधिपत्यं प्रापितमिति संपादितमारम्भिकं प्रभुत्वम्।

शिरा०—ततस्ततः।

शिव०—तत एते सप्तत्रिंशदधिकषोडशशततमे खिष्टसंवत्सरे सम्राजः शाहजहानाम्नः सकाशाद् वङ्गदेशे करमदत्वा व्यापारव्यवस्थां व्यदधुः। अनन्तरं च पुनरेते वङ्गव्यापारं विनाशयन्ति स्म। नाद्यापि भारतव्यापारविनाशाद् विरमन्ति। किं नामैतेषां चातुर्येषु वक्तव्यम्।

शिराज—ये उसकी वीरता और चतुरता का स्मरण क्यों नहीं करते।

शिव०—इसी लिए बाजारों में घुमाए गए थे।

शिराज—फिर ?

शिवराम—तब सम्राट् से (बादशाह से) क्षमा प्रार्थना के कारण ये छुड़ा दिए गए, और दयालु बादशाह सलामत ने इनकी व्यापार की व्यवस्था भी पूर्ववत् ही स्थिर कर दी; और बंगाल में अजीमुशाह से इन्होंने चटानटी आदि गावों में भूमि पर पूर्ण प्रभुता प्राप्त की, इस भाँति इन्होंने आदि में प्रभुता प्राप्त की है।

शिराज—फिर।

शिवराम—इसके अनन्तर १६३७ सन् में शाहजहाँ नामक बादशाह से बंगाल में विना कर दिये, इन्होंने व्यापार की व्यवस्था करा ली, इसके अनन्तर फिर इन्होंने बंगाल के व्यापार का नाश किया, आज भी ये भारत के व्यापार के विनाश से नहीं बाज आते। इनकी चतुराई के विषय में क्या कहना है। १६९९

---

* जार्जवेल्डन इब्राहिम द्वारा निर्मोचिताः।

यत्पञ्चनवत्यधिकषोडशशततमे वर्षे फोर्टविलियममहोदयेन स्वजातीयानां भारतसाम्राज्यलिप्सया वर्धमानदेशीयानां भूमिपालानां विद्रोहसमये स्वरक्षाव्याजेन कलिकातानगरे फोर्टविलियमनामकं दुर्गं व्यदधुः।

शिरा०—ततस्ततः

शिव०—ततस्तत्कालिकादजीमुशाहनामकाद् वङ्गाधिपते राज्ञः सकाशादुपायनोपनीतैः षोडशसहस्ररूप्यकैश्चटानट्यादिग्रामेषु भूमेः क्रयविक्रयाधिकारो भूमिस्वत्वं तत्रस्थेषु किञ्चिन्न्यायाधिपतित्वं च प्रापितम्। इति दृढीकृतं स्वप्रभुत्वम्।

शिव०— ततस्ततः।

शिव०—ततस्त्रयोदशाधिकसप्तदशशततमे ख्रिष्टसंवत्सरे देहलीसम्राजः फरुखसियरस्य कोऽपि व्याधिः संजातः। यस्योपशयो विलियमहेमिल्टनेन कृतः। तेनास्य सर्ववैद्याधिपतित्वं जातम्।

शिरा०—आः दैवमेवानुकूलम्। ततस्ततः

में फोर्ट विलियम महोदय ने अपनी जाति वालों के भारतवर्ष में साम्राज्य की अभिलाषा से, वर्धमान देश के राजाओं के विद्रोह के समय अपनी रक्षा के व्याज से कलकत्ता नगर में फोर्ट विलियम नामक एक किले को बनवाया।

शिराज—फिर।

शिव०—फिर उस समय के अजीमुशाह नामक बंगाल के नवाब से भेंट में दिये गए १६ हजार रुपयों में चटानटी आदि गाँवों में भूमि के बेचने और खरीदने के अधिकार, भूमि पर प्रभुता और कुछ न्याय के अधिकार पा लिये, इस प्रकार उन्होंने अपनी प्रभुता स्थिर कर ली।

शिराज—फिर।

शिव० तदनन्तर १७१३ सन् में दिल्ली के बादशाह फरुखशियर को एक बीमारी हो गई, जिसे विलियम हेमिलटन ने अच्छा किया, उससे इनको सब वैद्यों पर प्रभुता हो गई।

शिराज—ओह, भाग्य ही अनुकूल है।

शिव०—ततः केनापि कारणेन रामसिंहमहोदयेन पाश्चात्त्यानां कलिकातानगरे प्रौढमौद्धत्यं समवलोक्यामीचन्द्रसविधे इदं वृत्तं गुप्तचरद्वारा प्रेषितम् यत्कलिकातानगरं विहाय क्वचिदन्यत्र प्रदेशे गम्यताम्। परं तत्पत्रं कथञ्चित् पाश्चात्त्यानां हस्ते समगमत्। ते च भिया किमपि रहस्यमत्रास्तीति संभावयन्तोऽमीचन्द्रं चौरग्राहमग्रहीषत। तत्स्त्रियोऽपि ग्रहीतुं गच्छन्तो वृद्धेन जगन्नाथनाम्ना तदनुचरेण निरुद्धाः, स्त्रियश्च स्वकीयपातिव्रत्यरक्षायै अग्निं प्रज्वाल्य तत्रात्मानमजुहवुः।

शिरा०—आः परमकारुणिकमिदम्। यदेतेषामत्याचारो नृशंसता च सर्वानपि दुरात्मनोऽतिशेते। इदमत्याश्चर्यम्। यत्

स्वं दौरात्म्यमनुस्मृत्य स्त्रीहत्यालुण्ठनादिकम्।
दम्भिनोऽमी दुरात्मानो लज्जन्ते नैव पापिनः ॥ ११ ॥

शिराज—फिर।

शिव०—तदनन्तर किसी कारण से रामसिंहजी ने कलकत्ता नगर में पाश्चात्त्यों के प्रौढ़ औद्धत्य को देख कर अमीचन्द के पास इस समाचार को गुप्तचर से भेज दिया कि कलकत्ता को छोड़कर किसी दूसरी जगह चले जाओ, लेकिन वह पत्र किसी भाँति पाश्चात्त्यों के हाथ में पड़ गया। इसमें कुछ रहस्य है—इसकी सम्भावना भय से करते हुए उन्हों ने अमीचन्द को चोर के रूप में पकड़ लिया, जब उसकी स्त्रियों को पकड़ने के लिए जा रहे थे, तब बुड्ढे जगन्नाथ नामक उसके नौकर ने रोका, और स्त्रियों ने अपने पातिव्रत्य की रक्षा के लिए आग जला कर उसमें अपना हवन कर दिया।

शिराज—यह समाचार अत्यन्त करुणाजनक है। इनका अत्याचार और इनकी निर्दयता सभी दुष्टों से बढ़कर है। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि स्त्री-हत्या, लूटपाट आदि अपनी दुष्टता का स्मरण कर, ये ढोंगी, दुरात्मा, पापी लज्जित नहीं होते ॥ ११ ॥

शिव०—ततो जगन्नाथं निपात्य इतस्ततो विलुण्ठ्य च निर्गताः, ततश्च ससैनिकः सम्राड वङ्गदेशे योद्धुं वङ्गाधिपतिं परावर्तयितुं च समायातीति मिथ्यैव वृत्तं प्रसार्य दुर्लभरायमीरजाफरप्रभृतयः स्वपक्षे विहिताः ।

शिरा०—किं मीरजाफरोऽपि तत्पक्षीय एव ।

शिव०—स तु तत्पक्षीय एवेति न मे सन्देहः ।

शिरा०—यद्येषोऽपि तत्पक्षीय एव संजातस्तदा गतमेव राज्यम् ।

यतः—

तत्प्रत्ययादेव समस्तसैन्यं समाश्रितं क्लाइवयुद्धयोगे ।
यद्येष किञ्चिच्चलचित्तवृत्तिः स्यात्तर्हि सर्वोऽपि हतः प्रबन्धः ॥१२॥

(मनसि)—अन्यानपि सेनाधिपतीन् करिष्यामः (प्रकाशम्) ततस्ततः ।

शिव०—ततश्चन्द्रनगरे फ्रांसीयान् विनाशयितुं क्लाइवमहोदयस्तद्दुर्गं

शिव०—फिर जगन्नाथ को मार कर और इधर उधर लूट कर ये चले गये । तदन्तर यह झूठी अफवाह फैला कर कि वङ्गाल में युद्ध करने के लिये तथा वङ्गाल के नवाब को गद्दी से उतारने के लिये सेना सहित सम्राट् आ रहे हैं, दुर्लभराय और जाफर इत्यादि को अपनी ओर मिला लिया ।

शिराज—क्या मीर जाफर भी उन्हीं के पक्ष में हो गये हैं ?

शिव०—वह उनके पक्ष में हो गये हैं, इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं है ।

शिराज—यदि वह भी उनकी ओर हो गया है, तो राज्य ही चला गया । क्योंकि—

उस पर विश्वास कर ही क्लाइव के युद्ध में सारी सेना उसके अधीन कर दी गई है । यदि वही चंचलचित्त हो जायगा, तो सारा प्रबन्ध नष्ट हो जायगा ॥ १२ ॥

[(मन में) दूसरों को भी सेनापति बनायेंगे ।] फिर ।

शिवराम—फिर चन्द्रनगर में फ्रांसीसियों के विनाश करने के लिये क्लाइव ने उनके किले को घेर लिया । इसके अनन्तर प्रचण्ड भुजदण्ड के बल

रुरोध। ततस्तेऽपि प्रचण्डतरदोर्दण्डखण्ड्यमानासंख्यबला इङ्गलैण्डजातानुगतयुद्धसमुल्लसितान्तःकरणा नन्दकुमारसाहाय्यद्विगुणितसमुत्साहा युयुधिरे। एतदवलोक्य न जाने क गतं क्लाइवमहोदयस्य शौर्यम्।

स हि क्लाइवः—

हा हा फ्रांसभवा मदीयसुभटान् निघ्नन्ति शौर्योद्धताः
किं कुर्यां क च वा व्रजेयमधुना भ्रान्त्या जयः कल्पितः।
युक्तो नन्दकुमार एष सुभटैः क्रौर्याच्छनै रोधयन्
कर्त्तुं किञ्चिदभीप्सितं विजयते, रक्षन्तु मां देवताः ॥१३॥

इत्यादि स्वाभीष्टदेवताः सस्मार।

शिरा०—ततस्ततः

शिव०—ततो नन्दकुमारः किमपि क्लाइवमहोदयप्रेषितेनामीचन्द्रेण संमन्त्र्य स्वढक्कां वादयन् रणभूमेरपासरत्।

से असंख्य सैनिकों को काटनेवाले, अंग्रेजों के साथ युद्ध है इस उल्लास से भरे हुए हृदयवाले तथा नन्दकुमार की सहायता से द्विगुणित उत्साहवाले उन लोगों ने युद्ध किया। यह देख कर न जाने क्लाइव साहब की बहादुरी कहाँ चली गई।

"हाय, हाय, शौर्य से उद्दण्ड ये फ्रांसीसी हमारे वीरों का विनाश कर रहे हैं, क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, मैंने भ्रम से जय की कल्पना कर ली थी। वीरों से युक्त यह नन्दकुमार क्रूरता से धीरे-धीरे घेरवाता हुआ कुछ अभीष्ट करना चाहता है, देवगण मेरी रक्षा करें" ॥ १३ ॥

इस प्रकार अपनी देवी-देवताओं का स्मरण उस क्लाइव ने किया।

शिवराज—फिर।

शिवराम—इसके अनन्तर क्लाइव से भेजे गये अमीचन्द के साथ कुछ सलाह कर, नन्दकुमार अपनी ढक्का (बड़ा ढोल) बजाता हुआ संग्राम-भूमि से दूर हट गया।

शिरा०—(किञ्चिद् विचिन्त्य)

अहो नन्दकुमारोऽसौ शूरः शौर्यभृतां वरः ।
नूनमुत्कोचमादाय पराजयमकारयत् ।। १४ ।।

ततस्ततः

शिव०—ततः जले निमग्नानां फ्रांसदेशीयानां पोतविध्वंसकानां रहस्यमुत्कोचं गृहीत्वा फ्रांसदेशोद्भवेन टेरानमहोदयेन समुद्घाटितम् । अतो विजितं क्लाइवमहोदयेन चन्द्रनगरे तद् दुर्गम् । पराजिताश्च सर्वेऽपि तत्रस्थाः फ्रांसदेशीयाः, परं स्वपितृमित्रबान्धवैरन्यैश्च फ्रांसदेशीयैर्धिक्कारितः परमां ग्लानिमापन्नः पश्चात्तापसमुज्ज्वलितान्तःकरणस्टेरानमहोदय आत्मघातेन पापमशोधयत् ।

शिरा०—कोऽयं मायाविनां जयः ।

उत्कोचदानाद् ध्वजिनीपतिभ्यो गच्छन्ति चेत्तत्समरे जयित्वम् ।
न शौर्यमेतत्परिभावनीयं यतो हि कातर्यमिदं प्रपन्नम् ।।१५।।

ततस्ततः

शिराज—(कुछ सोचकर)

आश्चर्य है, कि शूरता-सम्पन्न पुरुषों में श्रेष्ठ इस नन्दकुमार ने घूस खा कर पराजय करा दी ।। १४ ।। फिर ?

शिवराम—इसके अनन्तर जल में निमग्न टारपीडो के रहस्य को फ्रांस देशोत्पन्न टेरान साहब ने घूस ले कर बता दिया। इससे क्लाइव साहब ने चन्द्रनगर में उस किले को जीत लिया। और वहाँ पर स्थित समस्त फ्रांसीसी हरा दिए गए, परन्तु अपने पिता, मित्र, रिस्तेदार, एवं अन्य फ्रांस निवासियों के धिक्कार से अत्यन्त ग्लानि को प्राप्त, एवं पश्चात्ताप से दग्ध अतःकरणवाले टेरान साहब ने आत्महत्या कर अपने इस पाप को धो डाला।

शिराज—दगाबाजों की यह कौन सी जीत है ?

सेनापतियों को घूस दे कर यदि संग्राम में विजय मिलती है, तो उसे वीरता न समझनी चाहिये; क्योंकि यह तो कायरता है ।। १५ ।। फिर

शिव०—ततो भवता प्रत्याक्रम्य जिता इंगलैण्डकम्पनीसैनिकाः कलिकातानगरान्निष्काशिताः कम्पनीव्यापारिकाः। परममीचन्द्रादिभिस्त्वदीयानुचरैश्चाहूता इङ्गलैण्डदेशीया वजवजदुर्गं विजित्य पुनः कलिकातानगरे दृढीभूय स्थितास्त्वदीयाननुचरानुत्कोचेनात्मसात्कृत्वा किमप्यकथनीयं कर्तुमभिलषन्ति।

शिरा०—न किञ्चिदपि, एतेषामकरणीयम्।

यतः—

नैते प्रपञ्चरचनादुपयान्ति भीतिं विश्वासघातकरणादपि नोद्विजन्ते
येषां मृषैव शरणं, धनमेव मोक्षस्तेषामुदेतु हृदये कथमेव तेजः।

ततस्ततः

शिवरामः—ततः प्रपञ्चरचनां दृढीकृत्य भवन्तं विजेतुं ग्रहीतुं च ससैनिकः क्लाइवमहोदयः प्रचलित इतीमं वृत्तान्तं वोधयितुमहमिहायातः। अतः परं देवाः प्रमाणम्। (ततो 'भूमौ जले वा यदि वा-म्बरे वेत्यादि पटन् निष्क्रान्त ऐन्द्रजालिकवेषधारी शिवरामः।)

शिवराज—तदनन्तर आपने प्रत्याक्रमण कर इंगलैण्ड की कम्पनी को जीत लिया और कम्पनी के व्यापारियों को कलकत्ता नगर से निकाल दिया, फिर अमीचन्द इत्यादिकों से और आप के नौकरों से बुलवाये गये अंग्रेजों ने वजवज किले को जीत लिया, तदनन्तर कलकत्ता नगर में सुदृढ़ हो कर ये रह रहे हैं और तुम्हारे नौकरों को घूस दे अपनी ओर मिला कर कुछ अकथनीय कार्य करना चाहते हैं।

शिराज—इन लोगों के लिए कुछ भी बुरा नहा है, क्योंकि—

प्रपंच करने से इन्हें भय नहीं होता, विश्वासघात करने में इन्हें घवराहट नहीं होती। मिथ्या ही जिनकी शरण है, और धन ही जिनका मोक्ष है, उनके हृदय में तेज का कैसे उदय हो सकता है॥ १६॥ फिर।

शिवराम—तदनन्तर अपने प्रपंच के जाल को मजबूत कर के आपको जीतने और पकड़ने के लिए क्लाइव अपनी सेना के साथ चल चुके है—इस वृत्तान्त को वता ने के लिए मैं यहाँ आया हूँ। इसके अनन्तर आप जानें।

[फिर भूमौ जले वा० इस श्लोक को पढ़ता हुआ बाजीगर वेशधारी शिवराम जाता है]

शिरा०—(मनसि) अघटितघटनापटीयसः परमात्मनो विचित्रमेव चरित्रम् । (प्रकाशम्) कः कोऽत्र भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो । (जयतु जयतु देवः ।)

शिरा०—दौवारिक ! मीरजाफरमाह्वय ।

दौवारिकः—जं देवो आणवेदि । (यद्देव आज्ञापयति ।) (निष्क्रम्य मीरजाफरमाह्वयति) (पुनः प्रविश्य) महाराज ! कंपणीपहिओ क्लाइवस्स पत्तं गहिऊण दूओ समागमो । (महाराज ! कम्पनीप्रहितः क्लाइवस्य पत्रं गृहीत्वा दूतः समागतः ।)

शिरा०—प्रवेशय (ततः प्रविशति दूतेन सह दौवारिकः । दूतः प्रविश्य सप्रणयमुपविशति ।) दौवारिक ! दुर्लभरायं मीरमदनं च समानय ।

दौवारिकः—(द्वाराभिमुखं निर्दिशन्) महाराअ ! एसो क्खु दुल्लहराओ आगच्छइ । (महाराज ! एष खलु दुर्लभराय आगच्छति ।)

शिरा०—प्रवेशय । (ततः प्रविशति दुर्लभरायेण सह दौवारिकः ।)

शिराज—(मन में) अघटित घटना के करने में चतुर परमात्मा का चरित्र विचित्र ही है । (प्रकाश) यहाँ कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) जहाँपनाह की जय हो ।

शिराज—द्वारपाल ! मीर जाफर को बुलाओ ।

द्वारपाल—जो आज्ञा । (जा कर) मीर जाफर को बुलाता है । फिर प्रवेश कर कम्पनी से भेजा गया दूत क्लाइव का पत्र ले कर आया है ।

शिराज—बुलाओ । (इसके अनन्तर दूत के साथ द्वारपाल आता है । दूत आ कर नम्रता के साथ बैठ जाता है !) द्वारपाल ! दुर्लभराय और मीर मदन को बुलाओ ।

द्वारपाल—(दरवाजे की ओर बताता हुआ) यह दुर्लभराय आ रहा है ।

शिराज—बुलाओ । (तदनन्तर दुर्लभराय के साथ द्वारपाल आता है ।)

दौवारिक ! त्वमपि स्वनियोगमशून्यं कुरु । (निष्क्रान्तो दौवारिकः ।) (दूताभिमुखं पश्यन्)दूत ! किमुक्तं कम्पनीप्रतिनिधिना क्लाइवेन ।

दूतः—महाराज ! सप्रणयं निवेदयति क्लाइवः । अयं कम्पन्या सह ते सन्धिः । यत्कम्पन्या व्यापारे कोऽप्यन्तरायो न भविष्यति । इदानीं फ्रांसदेशोद्भवा मम व्यापारस्यान्तरायाः शत्रवश्च । त्वं ताँल्लाप्रभृतीन् अनुगृह्णासि । अतस्तान् गृहीत्वा मह्यं देहि । नो चेत्,

पुत्रभृत्यादिसहितं मदान्धं वीरमानिनम् ।
त्वां क्षणेनैव मत्खड्गः शाययिष्यति संयुगे ॥१७॥

शिरा०—दुर्लभराय ! किमत्र युज्यते ?

दुर्लभः—महाराज ! फ्रांसदेशीयानां रक्षणेन वृथैव विरोधं मा कार्षीः

शिरा०—सत्यम्, परन्तु ममैवैते शरणागताः ।

शत्रुभीत्या समेतानां दुःखिनां शरणार्थिनाम् ।
परित्यागे तु यत्पापं न तत्केनापि मीयते ॥ १८ ॥

द्वारपाल, तुम भी अपने काम पर जाओ । (द्वारपाल जाता है) (दूत की ओर देख कर) दूत, कम्पनी के प्रतिनिधि क्लाइव ने क्या कहा है ?

दूत—जहाँपनाह क्लाइव ने प्रेमपूर्वक यह निवेदन किया है कि आपकी कम्पनी के साथ यह सन्धि है कि कम्पनी के व्यापार में कोई भी बाधक न होगा । इस समय फ्रांसीसी मेरे व्यापार में बाधा डालनेवाले हैं, और मेरे शत्रु हैं । तुम उन ला इत्यादिकों को शरण देते हो । अतः उन्हें पकड़ कर मुझे दे दो, नहीं तो— संग्राम में मद से अन्धे एवं अपने को वीर समझनेवाले तुमको पुत्र नौकर इत्यादि के साथ क्षणभर में मेरी तलवार सुला देगी ॥ १७ ॥

शिराज—दुर्लभराय, यहाँ पर क्या ठीक है ।

दुर्लभ०—जहाँपनाह, फ्रांसीसियों की रक्षा के लिये वृथा ही विरोध न कीजिये ।

शिराज—सत्य है, लेकिन ये मेरे ही शरण आए हुए हैं ।

शत्रु के भय से आये हुए दुःखी शरणार्थियों के छोड़ने में जो पाप लगता है, वह अतुलनीय है ॥ १८ ॥

दुर्लभः—यद्यपीदं युज्यते, तथापि वृथैव विरोधं मा कार्षीः।

शिरा०—(किं कर्त्तव्यताविमूढ़ इव दीर्घं निःश्वस्य) संदेशहारक ! गच्छ, क्लाइवं निवेदय। तवाभिमतं विधास्यामि। (ततो निष्क्रान्तो दूतः।) पुनः कः कोऽत्र भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो। (जयतु जयतु देवः।)

शिरा०—फ्रांससेनाधिपतिं लामहोदयमाह्वय। (निष्क्रान्तो दौवारिकः।) दुर्लभ ! कथमधुनाऽप्याहूतो जाफरो न समायातः।

दुर्लभः—श्रूयते केनापि कारणेन स रुष्टः, अतोऽपि युद्धारम्भो न युज्यते।

शिरा०—एवमेव विधास्यामि। (ततः प्रविशति दौवारिकेण सह फ्रांस-सेनाधिपतिः। अथ निष्क्रान्तो दुर्लभरायदौवारिकौ) फ्रांससेनाधिपते ! तवेह स्थित्या क्लाइवो वैरायते इत्यतः ससैनिकस्त्वं किञ्चित्कालमजीमावादनगरे तिष्ठ। पुनः समयानन्तरमाह्वास्यामि।

फ्रांससेनाधिपतिः—महाराज ! इतो गमने नास्माकं काचिद्धानिः,

दुर्लभ—यद्यपि यह ठीक है, तो भी व्यर्थ में विरोध न कीजिये।

शिराज—(किंकर्तव्यताविमूढ़ के समान दीर्घ साँस लेकर) दूत जाओ, क्लाइव से कह दो कि तुम्हारी इच्छा के अनुसार ही करेंगे। (तब दूत चला जाता है।) कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) जहाँपनाह की जय हो।

शिराज—फ्रांससेनापति ला नामवाले को बुलाओ। (द्वारपाल चला जाता है)। दुर्लभ ! बुलाने पर भी जाफर अभी तक क्यों नहीं आये।

दुर्लभ—सुनते हैं कि वह किसी कारण आपसे रुष्ट हो गये हैं, इसलिये भी युद्ध छेड़ना ठीक नहीं है।

शिराज—ऐसा ही करेंगे। (तदनन्तर द्वारपाल के साथ फ्रांस सेनापति आता है। फिर दुर्लभराय और द्वारपाल जाते हैं।) फ्रांस सेनापति, तुम्हारे यहाँ रहने से क्लाइव विरोध करते हैं इसलिये कुछ समय तक तुम अपनी सेना के साथ अजीमाबाद नगर में ठहरो, फिर कुछ दिनों के अनन्तर बुला लेंगे।

फ्राँस सेनापति—जहाँपनाह, यहाँ से चले जाने में हमारी कोई हानि नहीं,

परं तव मन्त्रिवर्गः कतिचन सेनापतयश्च भवतोऽभ्यन्तरतो विरुद्धाः।

शिरा०---अत एव युद्धनिवारणाय अनभिमतमप्येतद्विदधामि।

फ्रांससे---महाराज! कपटिन एते इङ्गलैण्डभवाः; अस्माकं स्थिति-स्तु व्याजोऽयम्। तैर्भवतो मन्त्रिवर्गं उत्कोचेन विभेदितः। अत एव युद्धाय संनह्यन्ते, मयि गतेऽप्यन्यव्याजेन युद्धं करिष्यन्ते।

शिरा०---यथा युद्धं न भवेत्तथा प्रयतितव्यम्। यतः---

सति युद्धे प्राणिहिंसा, शान्तिभङ्गः, प्रजाक्षयः।
आयनाशी, व्ययाधिक्यं नास्माद् युद्धं समर्थये ॥१९॥

फ्रांससे०---महाराज! किन्न श्रुतमेषां कापट्यम्। यदग्राह्यनामधेय-ष्टेरान उत्कोचेन विभेदितः। स चात्मघातमापन्नः। नैते व्यापारमभिल-पन्ति, किन्तु भारतसाम्राज्यलिप्सया इतस्ततो मायाजालं विस्तारयन्ति,

---

परन्तु तुम्हारा मन्त्रिमण्डल तथा कुछ सेनापति भीतर ही भीतर तुम्हारा विरोध कर रहे हैं।

शिराज---अत एव युद्ध से बचने के लिये इस अनभिलषित कार्य को कर रहा हूँ।

फ्रांस सेना०---जहाँपनाह, ये अंग्रेज कपटी हैं। यहाँ पर हमारा रहना तो बहाना है। उन्होंने आपके मन्त्रिमण्डल को घूस दे कर फोड़ लिया है। अत एव युद्ध के लिये तैयार हैं। मेरे चले जाने पर भी किसी और बहाने से युद्ध करेंगे।

शिराज---जिस प्रकार युद्ध न हो, उस प्रकार प्रयास करना चाहिये।

क्योंकि---

युद्ध के होने पर प्राणियों की हिंसा होती है, शान्ति नहीं रहती है, प्रजा की बरबादी होती है, आय का नाश होता है, और खर्चा अधिक होता है, अतः मैं युद्ध का समर्थन नहीं करता ॥ १९ ॥

फ्रांस सेना०---जहाँपनाह, क्या आपने इनका कपट नहीं सुना कि टेरान जिसका नाम नहीं लेना चाहिये---वह भी घूस दे कर फोड़ लिया गया, उसने आत्महत्या कर ली है। ये व्यापार नहीं चाहते, किन्तु भारत में साम्राज्य की इच्छा से माया का जाल फैला रहे हैं। अधिक क्या कहूँ---घूस देकर फोड़े

किं बहुना, उत्कोचेन विभेदिता बहवो भवतामनुचराः, न किमपि भवतां साहाय्यं विधास्यन्ति। (सोत्साहं खड्गं निष्कास्य) अहं तु प्रतिजाने—

वित्तं पुत्राः कलत्राणि स्वः सर्वे चानुजीविनः।
भवतामेव रक्षायै सर्वमित्यवधार्यताम् ॥२०॥

शिरा०—यद्यपि सर्वमेवमेव। परमथापि किञ्चित्कालमजीमाबाद-नगरे गन्तव्यम् , पुनः कालान्तरेणाह्वास्यामि।

फ्रांससे०—(दीर्घं निःश्वस्य) महाराज ! यदि भवत एवमेवाभिमतं, तदा गमिष्यामि। परं कपटपटूनामुत्कोचदानेन विभेदकानामेषां मायाजालान्मुक्तिरतिदुष्करा। (सखेदम्।) अयमस्माकमन्तिमः प्रणामः (इति पुनः प्रणमन्निष्कामति।)

शिरा०—(मनसि) कथं मीरजाफरो नागतः, अस्त्वेनं गत्वा प्रसादयिष्यामि, अनुकूलं च विधास्यामि। (प्रकाशम्) कः कोऽत्र भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो। [जयतु जयतु देवः]

हुए आपके बहुत से नौकर आपकी कुछ भी सहायता न करेंगे, (उत्साह के साथ तलवार निकाल कर) मैं तो प्रतिज्ञा करता हूँ कि—

धन, पुत्र, स्त्रियाँ तथा आत्मा और सब नौकर जो कुछ संसार में मेरे अधीन है, वह आपकी रक्षा के लिये ही है, इसे निश्चय समझो ॥ २० ॥

शिराज—यद्यपि यह ऐसा ही है, परन्तु फिर भी कुछ समय के लिये अजीमाबाद नगर चले जाओ, फिर कुछ समय के अनन्तर बुला लेंगे।

फ्रांससेना—(दीर्घ साँस लेकर) जहाँपनाह, यदि आपको यही अभीष्ट है तो चला जाऊँगा, परन्तु कपट रचना में चतुर एवं घूस दे कर फोड़नेवाले इन लोगों के मायाजाल से छुटकारा अत्यन्त कठिन है। (खेद के साथ) यह हमारा अन्तिम प्रणाम है। (प्रणाम करता हुआ चला जाता है।)

शिराज—(मन में) मीर जाफर क्यों नहीं आये। अच्छा, जाकर उसे मनाऊँगा और उसे अपने अनुकूल बनाऊँगा। (प्रकाश) यहाँ पर कोई है ?

द्वारपाल—(आ कर) जहाँपनाह की जय हो।

शिरा०—जाफरगृहं गन्तुमभिलषामि, मार्गमादेशय।

दौवा०—इदो इदो देवो। (इत इतो देवः।)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति जाफरेण सह शिराजः।)

शिरा०—किमिदानीं रुष्टोऽसि।

मीरजाफरः—कथमिदं संभाव्यते। (रुष्टः सन्) को नाम शमनातिथित्वकामस्त्वां विरुद्धमुद्बोधयति।

भवतामनुकम्पार्थी रुष्टः स्यामित्यसद् वचः।
कदाचिदपि वारुण्यां दिशि नोदयते रविः ॥२१॥

शिरा०—यद्यपीदं सर्वं सत्यम्, तथापि यवनगौरवं प्रतिपालय इदं मातामहप्रदत्तं मुकुटं च रक्ष। (इति मुकुटमुत्तार्य तत्पदे स्थापयति)

जाफ०—किमिदं विधीयते, इदं त्वच्छिरसि एव शोभने (इति तच्छिरसि स्थापयति)

शिराज—जाफर के घर जाना चाहता हूँ। मार्ग बतलाओ।

द्वारपाल—जहाँपनाह, इधर आइये।

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर जाफर के साथ शिराज आते हैं।]

शिराज—इस समय क्यों रुष्ट हो गये हो ?

मीर जाफर—इसकी सम्भावना क्यों है ? (क्रुद्ध होकर) ऐसा कौन सा यमराज का अतिथि है जो मुझे तुम्हारे विरुद्ध बतलाता है।

आपकी कृपा चाहनेवाला मैं क्रुद्ध हो जाऊँगा यह झूठ बात है। पश्चिम दिशा में कभी भी सूर्य का उदय नहीं होता ॥ २१ ॥

शिराज—यद्यपि यह सब सत्य है, तो भी मुसलिम-सम्मान का पालन करो, और इस नाना के दिये हुए मुकुट की रक्षा करो।

[मुकुट को उतार कर पैरों पर रख देता है।]

जाफर—यह क्या करते हो ? यह तुम्हारे सिर पर ही शोभा देता है। (उसे उसके सिर पर रखता है।)

शिरा०—कुरानशरीफेण शपथं कुरु।

जाफ०—(मनसि) अस्तु शपथेन प्रतारयाम्येनम्। (प्रकाशम्) (कुरानशरीफं स्पृष्ट्वा) 'यावज्जीवं तेऽनुचरो भविष्यामि। इङ्गलैण्डजातान् विपक्षिणो विजेष्ये। इति शपथं करोमि।

शिरा०—श्रूयते सवाट्सनः क्लाइवो योद्धुमभ्यागच्छति।

जाफरः—मयि शौर्यसमापन्ने धृतासौ संगरोन्मुखे।
कातरः क्लाइवः कोऽयं को वा भीरुःसवाट्सनः॥२५॥

अहं क्षणेनैव क्लाइवं वाट्सनं च ग्रहीष्यामि। दुर्लभरायं च पश्चादाक्रमितुं नियोक्ष्ये। मीरमदनो यद्यपि शूरः, परं रणविद्यायामकुशलः, मोहनस्तु उत्कोचेन विपक्षपक्षाश्रित एव संवृत्तः।

शिरा०—न हि न हि, स तु वाढं प्रभुभक्तोऽस्ति।

जाफ०—आसीत् स तथा, इदानीं तु वाह्याडम्बरमात्रग्राही, कुरानेन शपथं करोमि। (इति कुरानं स्पृशति।)

शिराज—कुरान शरीफ की कसम खाओ।

जाफर—(मन में) अच्छा कसम खाकर इसे धोखा देता हूँ। (प्रकाश) (कुरान शरीफ को छू कर) 'जब तक जीवित रहूँगा, तुम्हारा नौकर रहूँगा, अंग्रेज शत्रुओं को जीतूँगा।' यह कसम खाता हूँ।

शिराज=सुनते हैं कि वाट्सन के साथ क्लाइव युद्ध करने आ रहे हैं।

जाफर—संग्राम में शूरता से सम्पन्न मुझे तलवार के ले लेने पर, कायर क्लाइव क्या है, और डरपोक वाट्सन क्या है॥ २५॥

मैं क्षणभर में क्लाइव और वाट्सन को पकड़ लूँगा, दुर्लभराय को पीछे से हमला करने के लिये नियुक्त करूँगा। यद्यपि मीर मदन वीर है, परन्तु रण विद्या में अकुशल है। मोहन तो घूस ले कर शत्रु की ओर मिल गया है।

शिराज—नहीं, नहीं। वह तो पक्का स्वामिभक्त है।

जाफर—वह बात हो चुकी। इस समय केवल बाहरी दिखावा है। कुरान की सौगन्ध खाता हूँ। (कुरान शरीफ छूता है)

शिरा०—किमसौ बाह्याडम्बरमेव करोतीति सत्यम् ?

जाफरः—अथ किम् । शपथेन प्रत्याययामि ।

शिरा०—स यदभिलषति तत्करोतु, अहं तु तवाश्रितोऽस्मि ।

जाफ०—निश्चिन्तेन स्थीयताम् , क्षणेन विजेष्ये ।

शिरा०—(तदभिमुखं पश्यन्) त्वयि विश्वासेन दृढीभूतः ।

(उभावपि निष्क्रान्तौ)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशतो जाफरदूतेन सह क्लाइववाट्सनौ)

क्लाइवः—(दूताभिमुखं पश्यन्) श्रूयते शिराजो युद्धाय सन्नह्यते, जाफरश्च तत्प्रबन्धकः ।

जाफरदूतः—इदमुक्तं जाफरेण, निश्चिन्तमेवाभियातु भवान् । मया शपथेन प्रतारितः शिराजः । यत्पूर्वं प्रतिज्ञातं न वयं योत्स्यामहे इति तन्निश्चितमेव ।

शिराज—क्या यह सच है कि वह केवल बाहरी दिखावा भर करता है।

जाफर—और क्या । सौगन्ध खा कर विश्वास दिलाता हूँ ।

शिराज—वह जो चाहे सो करे, मैं तो तुम्हारे अधीन हूँ ।

जाफर—निश्चिन्त रहिये, क्षण भर में जीत लूँगा ।

शिराज—(उसकी ओर देखता हुआ) तुम्हारे पर विश्वास के कारण मैं अटल हूँ ।

[वह अनसुनी-सा करता हुआ चला जाता है ।]

[परदा गिरता है]

[तदनन्तर जाफर के दूत के साथ क्लाइव और वाट्सन आते हैं ।]

क्लाइव—(दूत की ओर देखता हुआ) सुनते हैं कि शिराज युद्ध के लिए तैयार है । जाफर उसका प्रबन्धक है ।

जाफर का दूत—जाफर ने यह कहा है कि आप निश्चिन्त हो चढ़ाई करें। सौगन्ध से शिराज को धोखा दिया है । पहले जो हमने यह प्रतिज्ञा की है कि हम युद्ध नहीं करेंगे, वह निश्चित ही है ।

क्लाइवः—गच्छ, अनुपदमेवाभियास्यामि, (ततो निष्क्रामति दूतः ।) वाट्सन ! किमयं मां प्रतारयति शिराजं वेति संशेते मनः ।

वाट्सनः— तत्प्रतारणे तु राज्यलाभः, तव प्रतारणे को वा गुणः ।

क्लाइवः—यद्यपि मम प्रतारणे न कोऽपि गुणः, तथापि प्रतारकत्व-मस्यावलोक्य संशेते मनः ।

वाट्सनः—तथाप्यभियातव्यम् । परावर्तने महती हानिः । सेनायाः समुत्साहभङ्गे न किञ्चिदवशिष्येत, व्यापारोऽपि समूलमुन्मूल्येत ।

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो—(जयतु जयतु देवः ।) सिरा-अदूओ समागओ दुआरि चिट्ठइ (शिराजदूतः समागतो द्वारि तिष्ठति ।)

क्लाइवः—प्रवेशय । (दौवारिकः प्रवेश्य निष्क्रामति)

दूतः—सप्रणयं निवेदयति शिराजः । युद्धे प्राणिनां हिंसा, प्रजासु कष्टमित्यालोच्य न युद्धं समर्थये । व्यापारिणो भवन्तो लाभार्थमेवागताः,

---

क्लाइव—जाओ, अभी ही चढ़ाई करूँगा । (इसके अनन्तर दूत जाता है ।) वाटसन्, मन में इस सन्देह का उदय होता है कि क्या यह मुझे छल रहा है, या शिराज को ।

वाट्सन—उसके छलने से तो राज्य की प्राप्त होगी, तुम्हारे छलने से क्या लाभ होगा ?

क्लाइव—यद्यपि मुझे धोखा देने में कोई लाभ नहीं, तथापि इसकी दगा-बाजी देख कर मन में सन्देह होता है ।

वाट्सन—तौ भी चढ़ाई करनी चाहिये लौट जाने पर बड़ी हानि है, सेना के उत्साह के नाश होने पर कुछ नहीं बचता, व्यापार भी समूल नष्ट हो जायगा।

द्वारपाल—(प्रवेश कर) साहब की जय हो, शिराज का दूत आया है ।

क्लाइव—बुलाओ ।

[द्वारपाल उसे अन्दर करके चला जाता है ।]

दूत—प्रेमपूर्वक शिराज निवेदन करते हैं कि युद्ध होने पर प्राणियों की हिंसा होती है और प्रजा में कष्ट । यह सोच कर मैं युद्ध का समर्थन नहीं करता ।

अतो भवन्तोऽपि व्यर्थमेव युद्धं न समर्थयिष्यन्ते। भवतामनुरोधाल्लाप्रभृतयो निष्कासिताः, सर्वाऽपि व्यापारव्यवस्था भवतामनुकूलमाकल्पिता। मन्ये ईश्वरसाक्षिकं प्रतिज्ञातं समर्थयिष्यन्ते भवन्तः।

क्लाइवः—दूत! गच्छ, निवेदय, तथैव विधास्यामि। (ततो निष्क्रामति दूतः।)

वाट्सनः—(अभिमुखं पश्यन्।)

मन्त्रिभिः सैन्यपतिभिर्भृत्यैश्चापि विभेदितः।
सुजयोऽयमतोऽनेन नव सन्धिं समर्थये ॥ २६ ॥

क्लाइवः—यद् भवद्भ्यो रोचते। (इत्यभियातुं निष्क्रामति)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति सचिन्तः शिराजः)

शिरा०—आः सन्धौ सर्वतो व्यापारानुकूल्यकल्पनेऽपि नैते युद्धाद्विरमन्ति। को नामेदानीं मत्पक्षे को वा नेति ज्ञातुं नैव शक्यते।

लाभ के लिये आये हुए आप लोग व्यापारी हैं, अतः आप लोग भी निरर्थक ही युद्ध का समर्थन न करेंगे। आपके अनुरोध से ला इत्यादि निकाल दिये गये हैं, सम्पूर्ण व्यापार की व्यवस्था भी आपके ही अनुकूल कर दी गई है। मेरे विचार से ईश्वर-साक्षिक इस प्रतिज्ञा का आप समर्थन करेंगे।

क्लाइव—दूत, जाकर कह दो वैसा ही करेंगे। (तदनन्तर दूत जाता है।)

वाट्सन—(सामने देखकर)

इसके मन्त्रियों, सेनापतियों एवं नौकरों को अपनी ओर फोड़ लेने से इसका जीतना सुगम है, अतः ये सन्धि का समर्थन नहीं करता ॥ २६ ॥

क्लाइव—जो आपको अच्छा लगे।

[आक्रमण के लिये जाता है।]

(परदा गिरता है)

[इसके अनन्तर चिन्तित शिराज आता है।]

शिराज—ओह, सन्धि में सर्वतोभाव से व्यापार में अनुकूलता कर देने पर भी ये युद्ध से नहीं रुकते। मेरी ओर कौन है और कौन नहीं—इसका पता

आः लाप्रभृतयो व्यर्थमेव निष्कासिताः (विचिन्त्य) कथमद्यापि युद्ध-स्थानान्नैव कोऽपि समायातः ।

चरः---(सहसा प्रविश्य) जयतु जयतु देवः ।

शिरा०---किमिदानीं युद्धवृत्तम् ।

चरः--- महाराज ! मीरमदनः ससैन्यो युध्यमानः सर्वानपि इङ्गलैण्ड-जातान्विजयते । मोहनलालोऽपि तत्सहायभूतः पराक्रमते । परन्तु मीर-जाफरदुर्लभरायलतीफाश्चित्रवस्थिता एव। यदि किञ्चिदप्येते पराक्रमन्तां तदा न जाने ससैन्यः क्लाइवः, सर्वे इङ्गलैण्डजाताश्च क्व समेयुः । अपि च दैवप्रकोपाद् भवतो बलोदं (बारूदं) मेघवर्षणाज्जलक्लिन्नमित्यप्रयोजकं जातम् । अथापि मीरमदनः क्लाइवं ग्रहीतुं पदातिरेवाभियातीति निवेद-यितुमुपागतः । (ततो निष्क्रामति चरः) (अथ गुलिकाहतो मुमूर्षुर्मीरमदनः पुरुषाभ्यामुत्थापितो दौवारिकेण सह प्रविशति ।)

नहीं चलता । ओह ला इत्यादि को व्यर्थ ही निकाल दिया । (सोच कर) अभी तक युद्धस्थल से कोई नहीं आया ?

जासूस---(सहसा आ कर) जहाँपनाह की जय हो ।

शिराज---इस समय युद्ध का क्या समाचार है ?

जासूस---जहाँपनाह, सेना सहित युद्ध करता हुआ मीर मदन सभी अंग्रेजों को जीत रहा है । मोहनलाल भी उसका सहायक बन कर पराक्रम दिखा रहा है । परतु मीर ज्ञाफर, दुर्लभराय और लतीफा चित्र से ही खड़े हैं । यदि ये जरा-सी भी बहादुरी दिखाते, तो न जाने सेना सहित क्लाइव और सभी अंग्रेज कहाँ होते; और दुर्भाग्यवश आपकी बारूद मेघ बरस जाने के कारण पानी में भींग जाने से व्यर्थ हो गई है । तौभी क्लाइव के पकड़ने के लिये मीर मदन पैदल ही जा रहा है--- यह बतलाने के लिये मैं आया हूँ ।

[इसके अनन्तर जासूस चला जाता है । फिर गोली के लगने के कारण दो आदमियों से उठाया हुआ, मरणासन्न मीर मदन द्वारपाल के साथ आता है ।]

शिरा०—आः किमिदं जातम् ?

मीर०—क्लाइवं ग्रहीतुमुपगच्छन्नाहतोऽस्मि । मीरजाफरप्रभृतयः सेनापतयश्चित्रवत्स्थिता न किञ्चिदपि कुर्वन्ति। यदि नाममात्रतोऽपि तुपकं संचारयेयुस्तदा नामावशेषाः क्लाइवप्रभृतयो भवेयुः ।

(इति मुमूर्षुर्मीरमदनः पुरुषाभ्यामुत्थापितो निष्क्रामति)

शिरा०—आः किं जातम् (मनसि)

शत्रुविध्वंसविक्रान्तः क्रममाणो रणाङ्गणे ।
मदनोऽयं विनिहतो विजेष्येऽहं कथं पुनः ॥२७॥

(प्रकाशम्) (सनिर्वेदं निःश्वस्य) दौवारिकः ! जाफरमानय ।

दौवा०—जं देवो आणवेदि—(यद्देव आज्ञापयति) (निष्क्रम्य सपुत्रेण जाफरेण सह प्रविशति)

शिराज—यह क्या हुआ ?

मीर मदन—क्लाइव को पकड़ने के लिये जाता हुआ मैं मार दिया गया हूँ। मीर जाफर इत्यादि सेनापति चित्र-से स्थित हो कुछ भी नहीं कर रहे हैं। यदि नाममात्र के लिये भी तोप चला देते, तो आज क्लाइव इत्यादि का नाम ही अवशिष्ट रह जाता।

[इसके अनन्तर दो आदमियों से उठाया गया मरणासन्न मीर मदन जाता है।]

शिराज—ओह, क्या हो गया। (मन में)

शत्रुओं के विध्वंस के लिये पराक्रम करता हुआ, एवं रणस्थली विचरण करता हुआ यह मदन यदि मार डाला गया है, तो मैं फिर किस भाँति जीतूँगा ॥ २७ ॥

(प्रकाश)—(निर्वेद से साँस लेकर) द्वारपाल, जाफर को बुलाओ ।

द्वारपाल—जो आज्ञा ।

[जा कर जाफर और उसके पुत्र के सहित आता है।]

शिरा०—किमिदं विधीयते। त्वदधीनोऽस्मि। एषां विजये कालान्तरेण भारते समूलमेव यवनसाम्राज्यमुन्मूलयिष्यते। मायाविनामेषां विश्वासं मा कार्षीः।

जाफर०—महाराज! कोऽयं वराकः! क्षणेनैव विजेष्ये। विश्वस्यताम्। अद्य सेना श्रान्ता। परावर्त्यतामेषा। श्वः सूर्योदयसमनन्तरमेव—

क्लाइवः स्वपृतनाशमन्वितो वाट्सनोऽपि रणमानचूर्णितः।
संगरे तव वरूथिनीधृतौ दुष्कृतान्यनुभविष्यतो ध्रुवम् ॥२८॥

शिरा०—किमिदानीं सेनापरावर्तने नाक्रमिष्यन्ति?

जाफर०—आक्रामन्तु नाम, क्षणेनैव सर्वान् ग्रहीष्यामः। कियन्तस्तेऽस्माकं बलानामुन्मुखम्। अथेदानीं सेनायामेव गमिष्यामि। यतो मीरमदनविनाशाद्विपक्षिणो न पराक्रमेरन् (उत्थाय निष्क्रान्तः सपुत्रो जाफरः।)

शिराज—यह क्या कर रहे हो। इनकी विजय हो जाने पर कालान्तर में भारतवर्ष में मुसलिम साम्राज्य का समूल नाश हो जायगा। इन मायावियों का विश्वास न करो।

जाफर—जहाँपनाह, यह वेचारा क्या है, क्षण भर में जीत लेंगे। विश्वास कीजिये। आज सेना थक गई है। इसे लौटा लें। कल सूर्योदय के अन्तर ही—

आपकी सेना द्वारा संग्राम-मैदान के मार लेने पर, अपनी सेना सहित क्लाइव और युद्धस्थली के मान से मदोन्मत्त वाट्सन भी अपने पापों का फल अवश्य भोगेंगे ॥ २८ ॥

शिराज—क्या सेना के लौटाने पर वे आक्रमण नहीं करेंगे?

जाफर—चाहे आक्रमण करें, पर क्षणभर में ही पकड़ लेंगे। हमारी सेना के सामने वे वेचारे कितने हैं? इस समय मैं सेना ही में जा रहा हूँ, जिससे कि मीर मदन के मरने के कारण शत्रु पराक्रम न करें।

[उठ कर पुत्र के साथ जाफर जाता है।]

शिरा०—दौवारिक ! दुर्लभमानय । (निष्क्रम्य दुर्लभेन सह प्रविशति)

दुर्लभः—विजयतां देवः ।

शिरा०—दुर्लभ ! भवन्तो न तथा पराक्रमन्ते, येनैतेषां पराजयः स्यात् ।

दुर्लभः—महाराज ! अद्य सायं संवृत्तम्, इदानीं परिश्रान्ता सेना समावर्त्यताम् । श्वः सर्वानिमान्नाशयितास्मि ? ।

शिरा०—परावर्तने कदाचिदभियास्यन्ति ?

दुर्लभः—तर्हि अहं किमर्थोऽस्मि । सर्वानिमान् ग्रहीष्यामि । इदानीं सेनासंचालनार्थं गमिष्यामि (उत्थाय निष्क्रान्तो दुर्लभः ।)

(शिराजः मोहनलालसेनापतये पत्रं लिखित्वा रणभूमेः सेनां परावर्त्तयति ।)

दुर्लभः—(पुनः सहसोपसृत्य) महाराज ! आक्रामन्ती विपक्षसेना इत एवाभिगच्छति ।

शिराज—द्वारपाल, दुर्लभ को बुलाओ ।

[जा कर दुर्लभ के साथ आता है]

दुर्लभ—जहाँपनाह की जय हो ।

शिराज—दुर्लभ, आपलोग ऐसी बहादुरी नहीं दिखाते जिससे इनकी पराजय हो जाय ।

दुर्लभ—जहाँपनाह, आज शाम हो गई है, इस समय थकी हुई सेना लौटा लें । कल इन सब को मार डालेंगे ।

शिराज—लौटाने पर शायद ये आक्रमण करेंगे ।

दुर्लभ—तो मैं किस लिये हूँ ? इन सब को पकड़ लूँगा । इस समय सेना के संचालन के लिये जा रहा हूँ ।

[उठ कर दुर्लभ जाता है]

(शिराज मोहनलाल नामक सेनापति को पत्र लिखकर रणस्थली से सेना को लौटा लेता है ।)

दुर्लभ (सहसा आ कर) जहाँपनाह, आक्रमण करती हुई शत्रुओं की सेना इधर ही आ रही है ।

शिरा०—मोहनः क गतः ?

दु०—स तु भवदाज्ञासमनन्तरमेव 'अस्तं यवनसाम्राज्यं दृढं निबद्धा भारतमाता' इत्यादि सनिर्वेदं सोच्छ्वासञ्च वदन्निष्क्रान्तः। ततः सर्वं सैन्यं विशृङ्खलितम्, अतो मुर्शिदाबादमपसरतु भवान्।

शिरा०—नाहं पलायितुं समुत्सहे। स्वयं सेनां संचालयिष्ये।

दुर्ल०—न त्वां स्थापयितुं समुत्सहे। विशृङ्खलिता सेना। स्थानान्तरमपसरतु भवान्। अहं श्वः सूर्योदयसमनन्तरमेव शीघ्रं सर्वानिमान्विजेष्ये। (निःश्वस्य निष्क्रामति शिराजः)।

दुर्लभः—"आः संपादित इदानीं मीरजाफरो राजा" (इति प्रसीदन्निष्क्रामति)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति क्लाइवेन सह सिंहासनस्थो मीरजाफरः)

शिराज—मोहन कहाँ गया ?

दुर्लभ—'मुसलिम साम्राज्य का अस्त हो गया है और भारतमाता खूब कस कर बाँध ली गयी है' यह निर्वेद के साथ कहता हुआ वह आप की आज्ञा के अनन्तर ही लंबी सांस लेकर कहीं चला गया। तदनन्तर सारी सेना में भगदड़ मच गई। इसलिये आप मुर्शिदाबाद भाग जाँय।

शिराज—मैं भागना नहीं चाहता। स्वयं सेना का संचालन करूँगा।

दुर्लभ—मैं तुम्हें ठहरने नहीं देना चाहता। सेना में भगदड़ मची हुई है। आप दूसरी जगह चले जाय। मैं कल सूर्योदय के अनन्तर ही इन सब को जीत लूँगा।

[उसासें भरता हुआ शिराज चला जाता है।]

दुर्लभ—अहह ! अब मीरजाफर को राजा बना दिया है।

[प्रसन्न हो जाता है]

(परदा गिरता है)

[इसके अनन्तर सिंहासन पर बैठे हुए मीरजाफर का प्रवेश क्लाइव के साथ होता है]

मीरजाफरः—महाराज ! वङ्गविजयस्य महोत्सवं विधित्सामि ।

क्लाइ०—किं विजितम् ? यदि किञ्चित्कालं मीरमदनोऽस्थास्यत् तदा सर्वमपि व्यनङ्क्ष्यत् यावच्छिराजस्तिष्ठति तावन्न किमपि कर्त्तव्यम्। न जाने लाप्रभृतीनामन्येषां वा साहाय्यात्पुनराक्रामेत् ।

जाफरः—यथा युष्माकमभिरुचिः । भवदुक्तमेव विधास्यामि ।

(ततः प्रविशति वाट्सनेन सहामीचन्द्रः)

वाट्०—(सप्रेम) जाफर ! पूर्वं प्रतिज्ञातं देहि सर्वेषां भागम् ।

जाफरः—यथा युष्माकमनुमतिः । सन्धिपत्रं गृहीत्वा यथालेखं कोशाध्यक्षायाज्ञापत्रं ददाति ।)

अमी०—ममांशः ।

जाफरः—तवांशस्तु न प्रतिज्ञातः (इति सन्धिपत्रं दर्शयति) ।

मीरजाफर—साहब, बंगाल विजय का महोत्सव मनाना चाहता हूँ ।

क्लाइव—क्या जीत गए ? यदि मीर मदन थोड़ी देर और ठहरता, तो सभी का नाश हो जाता । जब तक शिराज जीवित है, तब तक कुछ नहीं करना चाहिए । न मालूम, वह ला इत्यादिकों की अथवा दूसरों की सहायता से फिर आक्रमण कर दे ।

जाफर—जैसा आप चाहें । आपके कथन के अनुसार ही कार्य करेंगे ।

[इसके अनन्तर वाट्सन के साथ अमीचंद आता है ।]

वाट्सन—(प्रेम पूर्वक) जाफर, पूर्व प्रतिज्ञात सब लोगों का हिस्सा दे दो ।

जाफर—जैसी आप की आज्ञा ।

[संधि पत्र को लेकर लेख के अनुसार खजानची को आज्ञापत्र (हुक्म नामा) देता है ।

अमीचन्द—मेरा भाग ?

जाफर—तुम्हारा हिस्सा तो नहीं लिखा गया है ।

[सन्धि पत्र दिखलाता है ।]

क्लाइ०—(सन्धिपत्रं दृष्ट्वा) तवांशस्तु न प्रतिज्ञातः ।

वाट्०—तवांशोऽपि दातुं प्रतिज्ञात इति नैव स्मर्यते, मह्यमपि सन्धिपत्रं दर्शय । (क्लाइवः सन्धिपत्रं ददाति) (दृष्ट्वा) तुभ्यं दातु न किमपि लिखितम् । त्वमपि पश्य (इति सन्धिपत्रं ददाति ।)

अमी०—(सन्धिपत्रमवलोक्य) अत्र तु नैव लिखितम् । द्वितीयमिदं सन्धिपत्रम् । प्रतारितोऽस्मि, (मनसि) किमकार्यं कदर्याणाम् । (प्रकाशम्) परावर्तितमिदं सन्धिपत्रम् । नैतद्भवद्भिः स्वरूपानुरूपमाचरितम् । (इति वदन्निष्क्रामति)

जाफरः—महाराज ! किमप्यस्मै अपि देयम, अन्यथा विरुद्धः सन्नुपद्रोष्यति ।

क्लाइवः—आः, किमसौ वराको विधास्यति, स्वस्थमास्यताम् । किञ्चिदपि न देयम् ।

जाफरः—यथा युष्माकमाज्ञा । (ततो निष्क्रान्तौ क्लाइववाट्सनौ)

क्लाइव—(सन्धि पत्र को देखकर) तुम्हारा हिस्सा तो नहीं लिखा गया है ।

वाट्सन – तुम्हें भी हिस्सा देने के लिये लिखा गया है, यह स्मरण नहीं आता । मुझे भी सन्धि पत्र दिखाओ । (क्लाइव सन्धि-पत्र देता है ।) (देख कर) तुम्हें देने के लिये कुछ भी नहीं लिखा गया है । तुम भी देखो ।

(सन्धि पत्र देता है)

अमीचंद—यहाँ तो नहीं लिखा गया है । यह दूसरा सन्धि पत्र है । मेरे साथ दगा की गई है । (मन में) नीच क्या नहीं कर सकते । (प्रकाश) यह सन्धि पत्र बदल दिया गया । यह आप लोगों के अनुरूप आचरण नहीं है ।

(यह कहता हुआ जाता है ।)

जाफर—साहब, इसे भी कुछ देना चाहिये, अन्यथा विरुद्ध हो कर उपद्रव करेगा ।

क्लाइव—यह बेचारा क्या करेगा । आनन्द से बैठिये, कुछ भी नहीं देना चाहिये ।

जाफर—जैसी आप की आज्ञा ।

[तदनन्तर क्लाइव और वाट्सन जाते हैं]

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो। महाराअ! सिराअं बन्धिऊण साणुअरो सेणाहिवई समुवट्ठिओ।

(जयतु जयतु देवः। महाराज! शिराजं बद्ध्वा सानुचरः सेनाधिपतिः समुपस्थितः।

जाफरः—(सहर्षम्) तथाभूतमेव प्रवेशय। युवराजं चाह्वय।

(निष्क्रम्य सेनाधिपतिना सह प्रविशति)

(पुनर्निष्क्रम्य युवराजेन सह प्रविशति।) दौवारिक! स्वनियोगमशून्यं कुरु। (निष्क्रान्तो दौवारिकः।) सेनापते! शिराजः केन दण्डेन दण्ड्यताम्।

सेनापतिः—प्राणदण्डेन, यत आमूलमेव भयकथा विच्छिद्येत।

शिरा०—जाफर! किमिदं विधित्ससि। मातामहेन तव हस्ते समर्पितोऽस्मि। निबद्धस्तवाधीन एवाहम्। किं नाम मत्सकाशाद्भयम्, येनेदं चिकीर्षसे। मदर्थं किञ्चित्प्राणाधारमात्रं देयम्। यत एकत्र कोणे स्थित ईश्वरमाराधयिष्यामि।

द्वारपाल—(आ कर) जहांपनाह की जय हो। हजूर, शिराज को बांधकर सेनापति नौकर के साथ आया है।

जाफर (हर्ष से उसे वैसा ही ले आओ। शाहजादे को भी बुलाओ।

[द्वारपाल जा कर सेनापति के साथ आता है, फिर जा कर शाहजादे के साथ आता है।]

जाफर—द्वारपाल तुम अपने काम पर जाओ। द्वारपाल जाता है।) सेनापति शिराज को क्या सजा देनी चाहिये।

सेनापति—इसका वध होना चाहिये, जिससे भय की बात ही जड़ से समाप्त हो जाय।

शिराज—जाफर, यह क्या करना चाहते हो? नाना ने मुझे तुम्हारे हाथों में समर्पित किया था। बंधा हुआ मैं तुम्हारे अधीन हूँ। मुझसे क्या डर जिससे यह करना चाहते हो। मेरे लिये केवल कुछ गुजारा दे दो जिससे एक कोने में पड़ा परमेश्वर की अराधना करता रहूँगा।

जाफरः—सेनापते ! एवं भवतु का हानिः ।

युवराजः—गच्छतु भवान्, अहमुचितं विधास्यामि । (ततस्तद्वधाभिप्रायमवगम्य निष्क्रामति जाफरः ।) (अथ प्रविशति पूर्वमाज्ञप्तो घातुकवेषधारी मुहम्मदवेगः ।)

मुहम्मद०—जयतु जयतु युवराजः ।

युव०—मुहम्मदवेग ! हन्यतामेष शिराजः ।

शिराजः—युवराज ! मीरन ! शरणागतं मां रक्ष । किं मां मारयितुमाज्ञापयसि ? प्राणभिक्षुकोऽहम्, नाहं राज्याभिलाषी ।

यतः—शरणं स्व प्रपन्नानां भयार्तानां विरागिणाम् ।
धृतानां चापि यद्घाते पातकं तन्महत्तमम् ॥ २६ ॥

युवराजः—मुहम्मद ! नीयतां हन्यतां चैषः ।

शिराजः—(मुहम्मदमभिलक्ष्य रुदन्)

जाफर—सेनापति, ऐसा हो, क्या हानि है ?

शाहजादा—आप जाईये, मैं ठीक ही करूँगा ।

[तब उसके वध के अभिप्राय को समझ कर जाफर चला जाता है। तदनन्तर पहले से बुलाया गया घातक वेषधारी मुहम्मद वेग आता है ।]

मुहम्मद०—शाहजादे की जय हो ।

शाहजादा—मुहम्मद वेग, इस शिराज को मार डालो ।

शिराज—युवराज, मीरन, शरण में आए हुए मेरी रक्षा करो। मुझे मारने के लिये क्यों आज्ञा देते हो ? मैं प्राणों का भिखारी हूँ। मैं राज्य नहीं चाहता । क्योंकि—

शरणागत, भयार्त, राग शून्य, एवं बंदी के मारने में जो पाप है, वह बहुत बड़ा है ॥ २६ ॥

शाहजादा—मुहम्मद, इसे ले जाओ, और मार डालो ।

शिराज—(मुहम्मद की ओर देख कर रोता हुआ)

हा हा मया त्वं परिपालितोऽसि मामेव हन्तुं कथमुद्यतोऽसि।
यद्वा स्वकीयां कृतिमेव भोक्तुं संवर्धितोऽयं पयसा भुजङ्गः॥२७॥

(मुहम्मद्वेगः अशृण्वन्निव शिराजमादाय निष्क्रामति।

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति जाफरेण समन्वितः क्लाइवः।)

क्लाइवः—वङ्गाधिपते! शिराजस्य काचिद् वार्तोपलब्धा ?

जाफरः - स तु दानाशाहमज्जिने गतः, कृसरं (खिचड़ीं) पचमानः कलत्रपुत्रसहितो धृतः सेनापतिना बद्ध्वाऽऽनीतो हतश्च।

क्लाइवः—तस्य पुत्रकलत्रादयः क सन्ति ?

जाफरः—सर्वान्निहत्य निष्कण्टकीकृतं राज्यम्।

क्लाइवः—(मनसि) श्रूयते कम्पनीपुरुषा वङ्गराजस्य परिवर्त्तनेन वङ्गशोषणमभिलपन्ति। (प्रकाशम्) यथाभिलपितमाचर्यताम्। (ततो

हाय, हाय, मैंने ही तुम्हारा पालन-पोषण किया है और तुम मुझे ही क्यों मारने के लिये उद्यत हो गए हो? अथवा अपने ही कर्मों के भोगने के लिये, मैंने दूध पिला कर सांप को बड़ा किया है॥ २७॥

मुहम्मद वेग अनसुनी-सी करता हुआ शिराज को लेकर चला जाता है।

परदा गिरता है।

[फिर जाफर के साथ क्लाइव आते हैं।]

क्लाइव—वंगराज, शिराज का कोई समाचार मिला ?

जाफर—दानाशाह की मस्जिद में जाकर खिचड़ी पकाते हुए वह स्त्री पुत्र सहित पकड़े गए, सेनापति द्वारा बाँधकर लाए गए, और मार डाले गए।

क्लाइव–उसके स्त्री पुत्र कहाँ हैं?

जाफर—सब को मार कर निष्कंटक राज्य कर लिया है।

क्लाइव—(मन में) सुनते हैं कि कंपनी के आदमी बंगाल के नवाब के परिवर्तन के कारण बंगाल को चूसना चाहते हैं। (प्रकाश) इच्छानुसार कीजिये।

निष्क्रान्तौ जाफरक्लाइवमहोदयौ)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति हालवेलेन सहितः कम्पनीनियुक्तस्तात्कालिकगवर्नरो ह्वे निस्टार्टः)

ह्वेनि०—कः कोऽत्र भोः !

दौवा०—जेदु जेदु देवो (जयतु जयतु देवः)।

ह्वेनि०—सेनापतिरानीयताम्।

दौवा०—जं देवो आणवेदि (यद् देव आज्ञापयति)। (निष्क्रम्य तेन सह प्रविशति)

सेनापतिः—(प्रविश्य) जयतु जयतु देवः।

ह्वेनि०—सेनापते! श्रूयते जाफरेण सैनिकानां वेतनमपि न दत्तमिति सेनायां विद्रोहः संजायते।

सेना०—अथ किम्। मदान्धेन तेन मनागपि राज्यप्रबन्धो नावलोक्यते।

[फिर जाफर और क्लाइव चले जाते हैं]

(परदा गिरता है।

[तदनन्तर कंपनी द्वारा नियुक्त उस समय के गवर्नर पद पर समासीन ह्वे निस्टार्ट हालवेल के साथ आते हैं]

ह्वेनि०—कोई है ?

द्वारपाल—(आ कर) साहब बहादुर की जय हो।

ह्वे नि०—सेनापति को बुलाओ।

द्वारपाल—जो आज्ञा।

[जा कर सेनापति के साथ आता है।]

सेनापति—साहब बहादुर की जय हो।

ह्वे नि०—सेनापति, सुनते हैं कि जाफर ने सैनिकों को वेतन नहीं दिया है, इसलिये सेना में विद्रोह हो रहा है।

सेनापति—और क्या, वह मदोन्मत्त जरा-सा भी राज्य का प्रबन्ध नहीं देखता।

ह्वेनि०—तर्हि राज्याधिपतिर्मीरकासिमो विधीयताम् ?

सेना०—योग्यतरः सः, समुचितं राज्यप्रबन्धं विधास्यति।

ह्वेनि०—आह्वयतु, तावत्।

सेना०—यथा युष्माकमनुमतिः (इति बहिर्गत्वा दौवारिकेणाह्वाययति) पुनः प्रविश्योपविशति।

ह्वेनि०—स्वभावादिभिः कीदृग्, कथं वा राज्यं करिष्यति।

सेना०—गुणी कृतज्ञः साधीयान् धीरो वीरः कुशाग्रधीः।
धर्मज्ञो नीतिनिपुणः सम्यग् राज्यं करिष्यति ॥ २८ ॥

(ततः प्रविशति दौवारिकेण सह मीरकासिमः)

कासिमः—नमो नीतिनिपुणाय ह्वेनिस्टार्टमहोदयाय।

ह्वेनि०—(हस्तं मेलयित्वा) कासिम! उपविशतु भवान्। दौवारिक! स्वनियोगमशून्यं कुरु (निष्क्रान्तो दौवारिकः) कासिम! त्वां वङ्गाधिपतिं कर्त्तुमभिलषामि।

ह्वेनि०—तो मीर कासिम को नवाब बनाइये।

सेनापति—वह अधिक योग्य है। राज्य का अच्छा प्रबन्ध करेगा।

ह्वेनि०—बुलाओ तो।

सेनापति—जैसी आपकी आज्ञा।

[बाहर जा कर द्वारपाल द्वारा बुलवाता है। फिर आ कर बैठ जाता है।]

ह्वेनि०- स्वभाव का कैसा है ? कैसा राज्य करेगा ?

सेना०—गुणी, एहसान मंद, अत्यन्त सज्जन, धीर, वीर, कुशाग्रबुद्धि, धर्मज्ञ, और नीतिनिपुण पुरुष राज्य भली भाँति करता है ॥ २८ ॥

[इसके अनन्तर द्वारपाल के साथ मीर कासिम का प्रवेश होता है।]

कासिम—नीतिनिपुण ह्वेनिस्टार्ट महोदय को सलाम।

ह्वेनि०—(हाथ मिला कर) कासिम, बैठिये। द्वारपाल, तुम अपने काम पर जाओ। (द्वारपाल जाता है) कासिम, तुमको बंगाल का नवाब बनाना चाहता हूँ।

काशि०—यथा भवद्भ्यो रोचते।

हेनि—अस्माकमुपकारो न विस्मर्तव्यः।

काशि०—नहि नहि, यथावसरं प्रत्युपकरिष्यामि।

हेनि०—सेनापते! एनं वङ्गाधिपतिं विधास्यामीत्यसौ वङ्गाधिपतित्वेन सेनायां वङ्गप्रजासु चोद्घुष्यताम्।

सेना०—यथा युष्माकमाज्ञा।

(ततो निष्क्रान्ताः सर्वे।)

इति श्रीमहामहोपाध्याय-विद्यावारिधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-पं० मथुराप्रसाद-दीक्षितकृतौ भारतविजयनाटके द्वितीयोऽङ्कः।

कासिम—जैसा आपको अच्छा लगे।

हे नि०—हमारे उपकार को न भुलाइयेगा।

कासिम—नहीं-नहीं, अवसर आने पर प्रत्युपकार करेंगे।

हे नि०—सेनापति, इसे बंगाल का नवाब बनाता हूँ इसलिए सेना में तथा बंगाल की प्रजा में इसे बंगाल का नवाब उद्घोषित कर दो।

सेनापति—जैसी तुम्हारी आज्ञा।

[सब चले जाते हैं]

इति श्रीमहामहोपाध्याय विद्यावारिधि सर्वतन्त्रस्वतन्त्र
पं० मथुराप्रसाददीक्षित द्वारा विरचित भारतविजय
नाटक का द्वितीय अंक समाप्त।

तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति मीरकासिमो विभवतश्च परिवारः)

दौवारिकः—जेदु जेदु देवो। ह्वेनिस्टार्टमित्रं दुआरि चिठ्ठइ। (जयतु जयतु देवः। ह्वेनिस्टार्टमित्रं द्वारि तिष्ठति।)

कासि०—प्रवेशय। (निष्क्रम्य पुनर्ह्वेनिस्टार्टमित्रेण सह प्रविशति)

कासि०—दौवारिक! स्वनियोगमशून्यं कुरु। (ततो निष्क्रान्तो दौवारिकः)

गवर्न० मित्रम्—कासिम! ह्वेनिस्टार्टगवर्नरो विज्ञापयति। किमत्र प्रत्युपक्रियते!

कासिमः—यथा भवद्भ्यो रोचते, तद् गृह्यताम्।

गवर्न० मित्रम्—(सप्रेम कासिमं पृष्ठे परामृशन् चाटुकारेण) वंगाधिपते! अस्माकं कम्पन्यै कर्णाटकयुद्धव्ययो, वर्धमानमेदिनीपुरे सप्रान्तश्चित्तग्रामश्च (चटगाँव के परगने) दीयन्ताम्।

तृतीय अंक

[इसके अनन्तर मीर कासिम शान से प्रवेश करता है और परिवार भी।]

द्वारपाल– राजन्, जय हो। ह्वेनिस्टार्ट का मित्र द्वार पर खड़ा है।

कासिम—बुलाओ।

[बाहर जा कर फिर ह्वेनिटार्ट के मित्र के साथ आता है।

कासिम—द्वारपाल, तुम अपने काम पर जाओ।

[इसके अनन्तर द्वारपाल चला जाता है।]

गवर्नर का मित्र कासिम, गवर्नर ह्वेनिस्टार्ट कहते हैं कि यहाँ पर क्या प्रत्युपकार करते हो?

कासिम—जो आप लोगों को अच्छा लगे, वह ले लीजिये।

गवर्नर का मित्र—(प्रेमपूर्वक कासिम की पीठ पर हाथ फेरता हुआ चापलूसी से) हे बंगराज, हमारी कम्पनी का कर्णाटक की लड़ाई में जो व्यय हुआ है, उसके लिए वर्धमान, मेदनीपुर और चटगाँव के परगने दिये जायँ।

कासिभः—महाराज ! केयं कम्पनी ?

गवर्नरमित्रम्—सा तु कतिचिदस्मद्देशीयानां व्यापारे संघीभूतानां गोष्ठी, सैव कम्पनीत्यभिधीयते ।

कासि०—भगवंस्तत्तु जानामि, परं कुतस्तस्यै दाप्यते ?

गवर्न० मि०—आः, सा त्वस्माकं स्वामिनी तस्या एवाहमत्रत्याः सर्वे मद्देशीयाश्च भृत्याः । तस्यै स्वामिन्यै त्वेतदवश्यं देयम् ।

कासि०—(मौनस्थितः) (मनसि)

भारतीयकलया समन्वितान् रत्नमौक्तिकसुवर्णपूरितान् ।
सर्वशास्त्रविदुषां गणैर्युतान् हा ! कथं जनपदानिमान् ददे ॥१॥

(प्रकाशम्) अत्यधिकमेतत् ।

गवर्न० मि०—महाराज ! तस्या एव कृपाकटाक्षत एतदैश्वर्यं प्राप्यते ।

कासि०—एवं चेत् प्रसन्नचेतसा सर्वमिदं ददामि ।

कासिम—महाराज, यह कौन सी कम्पनी है ?

गवर्नर का मित्र—वह व्यापार के लिये एकत्रित कुछ हमारे देश के निवासियों की सभा है । उसे ही कंपनी कहा जाता है ।

कासिम—महोदय, यह तो विदित है । पर उसे क्यों दिलाते हैं ।

गवर्नर का मित्र—आः, वह हमलोगों की मालकिन है, उसका ही मैं और यहाँ पर स्थित हमारे सब देशनिवासी नौकर हैं । उस मालकिन को तो यह अवश्य देना चाहिये ।

कासिम—(चुप रह जाता है ।) (मन में)

भारतीय कला से समन्वित, रत्न, मोती और सोना से परिपूर्ण, तथा सम्पूर्ण शास्त्रज्ञ विद्वानों से अभिव्याप्त इन जिलों को कैसे दे दें ? ॥ १ ॥

(प्रकाश) यह बहुत अधिक है ।

गवर्नर का मित्र—महाराज, उसी के ही कृपा कटाक्ष से यह ऐश्वर्य प्राप्त हुआ है ।

कासिम—यदि ऐसा है, तो प्रसन्न चित्त से यह सब देता हूँ ।

गवर्नरमि०—अथास्मभ्यं किं प्रदीयते ?

कासि०—यथा युष्माकमभिरुचिः, (इति वदन् सेनापत्यभिमुखं पश्यति)।

सेना०—महाराज ! हेनिस्टार्टगवर्नराय सार्धसप्त लक्षाणि, हालवेलाय चत्वारि लक्षाणि पञ्च सहस्राणि, कर्नलकैलोडाय च त्रिंशत्सहस्राणि प्रदेयानि। अथान्येभ्यो यथारुचि प्रदीयतामिति समयो विहितः।

कासि०—यथा युष्माकमभिरुचिरिति [कोषाध्यक्षाय स्वमुद्राङ्कितं पत्रं ददाति] (ततो निष्क्रान्तं गवर्नरमित्रम्) सेनापते ! सेनायाः वेतनं देयम्। सुप्रबन्धश्च विधेयः।

सेना०—यथा युष्माकमाज्ञा। (ततो निष्क्रान्तः सेनापतिः, सपरिवारो (मीरकासिमश्च)

(पटीक्षेपः)

गवर्नर का मित्र—अच्छा हम लोगों को क्या देते हो।

कासिम—जो आपकी इच्छा।

[यह कहता हुआ सेनापति की ओर देखता है।]

सेनापति—महाराज गवर्नर हेनिस्टार्ट को ७½ लाख, हालवेल को चार लाख पाँच हजार, तथा कर्नल कैलोड को तीस हजार देने चाहिये। एवं औरों को इच्छानुसार दीजिये—ऐसी शर्त हुई है।

कासिम—जैसी तुम लोगों की इच्छा।

[खजानची को अपनी मोहर लगा हुआ पत्र देता है। इसके अनन्तर गवर्नर का मित्र चला जाता है।]

सेनापति, सम्पूर्ण सेना का वेतन देना चाहिये, और सुप्रबन्ध रखना चाहिये।

सेनापति—जो आपकी आज्ञा।

[इसके अनन्तर सेनापति चला जाता है, और परिवार के साथ मीर कासिम भी।]

[परदा गिरता है।]

(ततः प्रविशन्ति कम्पनीनियुक्ता वारेट्सनप्रभृतयः ।)

एकः—वारेट्सन ! आः कथमद्यापि भारतव्यापारः सरस इव प्रतिभाति ।

व्यापारो भारतीये क्वचिदपि च भवेत्किं कृतं स्याद्भवद्भि—

मूलानुच्छेदनेऽपि स्वकजनकृतितां मन्यमानान् धिगस्मान् ।

दारिद्र्यं दासतां च प्रखरतरतरैः साधनैर्भारतेऽहं

विद्वेषं चालसत्वं सकलमपि जनेष्वेष नूनं विधास्ये ॥ २ ॥

द्वितीयः—करमदत्त्वाऽस्माभिः, सर्वैरपि कम्पनीपुरुषैर्वाणिज्यं कर्त्तव्यम्, भारतीयास्तु करदानेनास्माभिः सह प्रतिस्पर्धितुमक्षमाः स्वयमेव विनङ्क्ष्यन्ति ।

गव०—करादानमुक्तिस्तु वङ्गप्रान्ते कम्पन्या एव ।

तृतीयः—आः, वङ्गप्रान्ते कासिमस्त्वस्माभिरेव स्थापित इत्यस्मा-

---

[इसके अनन्तर कम्पनी से नियुक्त वारेट्सन इत्यादि आते हैं]

पहिला—वारेट्सन ! ओह, आज भी भारत का व्यापार सरस-सा क्यों प्रतीत होता है ।

यदि कहीं भी भारत में व्यापार होता है तो आप लोगों ने क्या किया है । उसकी जड़ न काटने पर भी अपने लोगों की बुद्धिमत्ता माननेवाले हमलोगों को धिक्कार है । मैं भारत के लोगों में अत्यन्त तीक्ष्ण उपायों से दरिद्रता, दासता, विद्वेष और आलस्य को अवश्य फैला दूँगा ॥ २ ॥

दूसरा—टेक्स न दे कर हम सब कंपनी के आदमियों को व्यापार करना चाहिये । भारतवासी तो टैक्स दे कर हमारे साथ मुकाबला करने में असमर्थ हो स्वयं ही नष्ट हो जायंगे ।

गवर्नर—टैक्स के देने की छूट तो कम्पनी के लिये ही बंगाल में दी गई है ।

तीसरा—ओह, बंगाल में कासिम को तो हम ही ने बैठाला है, इसलिये

भिर्वङ्गप्रान्ते यथेच्छं विधेयम् ।

गव०---युज्यते चैवम् । अस्मद्देशीयानां सर्वेषामत्र भाग इति सर्वेऽपि वङ्गप्रान्ते करमदत्त्वा व्यापारं कर्त्तुं क्षमन्ते ।

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो । (जयतु जयतु देवः)

महाराअ ! कम्पणीनिउत्तो वावहारिओ दुआरि चिट्ठइ ।

(महाराज ! कम्पनीनियुक्तो व्यावहारिको द्वारि तिष्ठति)

गव०—प्रवेशय (ततो व्यावहारिकं प्रवेश्य निष्क्रान्तो दौवारिकः ।)

व्याव०-- महाभागा ! युष्मद्देशीयाः वहवः पुरुषाः समागताः करमदत्त्वा व्यापारं कर्तुं प्रार्थयन्ते ।

गवर्नरः—(सदस्यानामभिमुखं पश्यन्) किमत्र युज्यते ।

सर्वे—करमदत्त्वा व्यापारं कर्त्तुमाज्ञापत्रं प्रदेयम् ।

गव०—यथा युष्माकमनुमतिः ।

व्याव०—महाराज ! अस्माकमप्येकः पुरुषः करं दातुमक्षमो

बंगाल में हमको स्वेच्छापूर्वक करना चाहिये ।

गवर्नर—यह ठीक है । हम सब लोगों का यहाँ पर हिस्सा है, अतः सभी वङ्गाल में टैक्स न दे कर व्यापार करने में समर्थ हैं ।

द्वारपाल—(प्रवेश कर) महाराज जय हो । महाराज, कम्पनी से नियुक्त व्यावहारिक दरवाजे पर हैं ।

गवर्नर—बुलाओ ।

[इसके अनन्तर व्यावहारिक को अन्दर कर द्वारपाल चला जाता है]

व्यावहारिक—महोदयो ! तुम्हारे देश के बहुत से आए हुए आदमी बिना टैक्स दिये व्यापार करने की प्रार्थना करते हैं ।

गवनर—[सदस्यों की ओर देखता हुआ] यहाँ पर क्या ठीक है ?

सब—बिना टैक्स दिये, व्यापार करनेके लिये आज्ञापत्र (फरमान) देना चाहिये ।

गवर्नर—जैसी तुम लोगों की आज्ञा ।

व्याव०—महाराज, टैक्स देने में असमर्थ हमारा भी एक आदमी व्यापार

व्यापारं कर्त्तुमभिलषति, तस्मै अपि प्रमाणपत्रं दाप्यतामिति मे प्रार्थना।

गव०—(सहर्षम्) यथेच्छं भवान् ददातु।

व्याव०—अनुगृहीतोऽस्मि (इति ब्रुवन् जिगमिषति)

गव०—व्यावहारिक! इदमप्युद्घोष्यताम्, यत्खलु वङ्गदेशे वस्त्रतमालपत्रलवणादि समुद्भवति, यद्वा वङ्गद्वारेण समायाति, तत्सर्वमस्मद्देशीयानां पुरुषाणां द्वारेणैव क्रयविक्रियादि विधेयम्। अस्मद्देशीया एव तत्र प्रभवः। अपि च स्वनियुक्तैः पुरुषैः राजपुरुषैश्च प्रतिषेधो विधातव्यः, यत्खलु न कोऽपि प्रतिषिद्धेषु तेषु प्राधान्येन किञ्चिदपि गृह्णीयात्; अन्यथा दण्डभाग् भविष्यति।

व्याव०—यथा युष्माकमाज्ञा। (इति निष्क्रान्तो व्यावहारिकः।) (निष्क्रामन्ति कम्पनीपुरुषाश्च।)

(पटीक्षेपः।)

करने की इच्छा रखता है, उसे भी प्रमाणपत्र दिलाया जाय—यह मेरी प्रार्थना है।

गवर्नर—(हर्ष से) आप यथेच्छ दीजिये।

व्या०—अनुगृहीत हूँ।

[यह कहता हुआ जाना चाहता है]

गवर्नर—व्यावहारिक, ठहरो। यह घोषणा कर दो कि बंगाल में कपड़ा, तमाखू, नमक आदि जो उत्पन्न होते हैं, अथवा बंगाल के मार्ग से आते हैं उन सबकी खरीद-फरोक्त (खरीदना और बेचना) हमारे देश के लोगों द्वारा करना चाहिये। हमारे देश वाले ही उसके मालिक हैं, और आपसे नियुक्त आदमियों से और राजपुरुषों से इसकी मनाही करा देनी चाहिये कि जो कोई इन मना की गई वस्तुओं में से खुद जरा-सा भी लेगा, उसे सजा दी जायगी।

व्याव०—जो आज्ञा।

[व्यावहारिक जाता है, कंपनी के आदमी भी जाते हैं]

[परदा गिरता है]

(ततः प्रविशति सखीसहिता भारतमाता ।)

भारतमाता—(निर्धनमिव वङ्गं निर्वर्ण्य)

त्वं शिराज ! बत घातितः कथं प्रत्ययात्स्वजनमित्रबान्धवैः।
राज्यभोगसुखलिप्सयैव तैः कारितं निगडमद्य मे दृढम् ॥३॥

सखि ! अनेन निगडेन पीड्येते मे चरणौ, इति किञ्चित् शिथिलय।

(सखी तथा करोति)

सखी—ओहो ! कसरि बाधिई छौ। फुकाउनै सकिन्दै न। सखि। भारति ! कस्ले यसरी बलियो गराये छ। (हा ! दृढं निबद्धाऽसि नैव शिथिलयितुं पार्यते । हला भारति ! केनेदमित्थम्भूतमतिदृढं कारितम् ।

भारत०—अम द्रोहिणा बुद्धिपराङ् मुखेन जाफरेण ।

सखी- आः परमदुष्ट छ, अंमा को बलिओ करी बँधावे छ। (आः परमनीचो मातरमपि दृढं बन्धयति ।)

कासिमः—सेनापतिसहितः तदन्तरा प्रविश्य भारतमातरं वन्दमानः)

[सखी सहित भारत माता आती हैं]

भारतमाता (दरिद्र बंगाल का वर्णन कर) हाय शिराज, तुम विश्वास करने के कारण अपने ही लोगों से, मित्रों से और बान्धवों से किस प्रकार मार डाले गए हो, राज्य-सुख की अभिलाषा से उन्होंने मेरी बेड़ी को (बन्धन को) मजबूत ही करा दिया है ॥ ३ ॥

सखी इन बेड़ियों से मेरे पैर पिराते हैं, इसलिये जरा-सा बन्धन ढीला कर दो।

[सखी वैसा ही करती है।]

सखी—हाय बहुत मजबूत बाँधी गई हो, ढीले करने में असमर्थ हूँ। सखी भारती (भारतमाता) किसने इस प्रकार अत्यन्त मजबूत बन्धन कराया है ?

भारतमाता—बुद्धि विहीन मेरे द्रोही जाफर ने।

सखी—ओह, अत्यन्त नीच माता को भी बँधाता है।

[इस बीच में सेनापति सहित कासिम प्रवेश कर भारतमाता की वन्दना

हा, माता दृढं निबद्धा। (इति किञ्चित् शिथिलयति।) (ततः कश्चित् यूरूपीयः कम्पनीपुरुषः सहसा प्रविश्य)

कम्प० पु०—रे कासिम! किमेतत्क्रियते?

कासिमः—मातुर्बन्धनानि शिथिलीक्रियन्ते।

कम्प० पु०—आः यवनापसद!

रे रे तस्कर! पश्य पश्य कुटिलं त्वां हन्तुमेष क्षमः

कासिमः—किन्ते चोरितम्?

कम्प० पु०—एतदेव यदिदं कार्यं समाश्रीयते।

कासिमः—मातुर्बन्धविमोक्षणेऽपि किमहो चौर्यं त्वया मन्यते।

हा किं स्यादुचितं कृतघ्नसमये लोकैर्यदाचर्यताम्॥ ४॥

कम्प० पु०—रे नीच!

राज्ये त्वं स्थापितः पूर्वमधुनैव निपात्यसे।

करता है, और हाय माता तुम कस कर बाँधी गई हो, ऐसा कह कर बन्धन को कुछ ढीला करता है। इसके अनन्तर कोई यूरोपनिवासी कंपनी का आदमी सहसा प्रवेश करता है।]

कम्पनी का आदमी—रे कासिम, ये क्या कर रहे हो?

कासिम—माता के बन्धन ढीले कर रहा हूँ।

कं० आदमी—अरे नीच मुसलिम रे चोर, देख, तुझ दुष्ट के मारने में मैं ही समर्थ हूँ।

कासिम—तुम्हारा क्या चुराया है?

कं० आदमी—यही कि यह कार्य कर रहे हो।

कासिम—माता के बन्धन के खोलने में भी तुम चोरी समझते हो, तो इस (कृतघ्न) तुम्हारे समय में क्या उचित है जिसे लोगों को करना चाहिए॥ ४॥

कं० आदमी—अरे नीच, पहले तुम साम्राज्य पर हमी लोगों से संस्थापित किये गये थे, और अब उससे हटा दिये जाओगे।

६

कासिमः—ममेदं पूर्ववंश्यानां कस्त्वमत्र निपातकः ॥ ५ ॥

(ततः क्रुधाविष्टो निष्क्रामति कम्पिनीपुरुषः)

भारतमाता—(रुदती)

प्रतारिताऽहं मधुरैरभिभाषणैर्विलक्षणैः स्वान्तहरैः प्रवञ्चनैः ।
शिवः स्वयं सर्वजगन्नियामको मदीयदुःखान्तकरः प्रजायताम् ॥६॥

सखी—मत रोओ, वखत् का वाटो देख ।

(मा रोदीः प्रतीक्षितव्यः समयः)

भारतमाता—इदानीमार्थिकं संकटमापन्ना वह्वो मदीयाः सुताः पापानुगामिनः संवृत्ताः । वङ्गदेशीयाश्च भयत्रस्ताः कातरतामेवापन्नाः । अहं च निगडिताऽस्मीति किं कुर्याम् । (इति दीर्घतरमुच्छ्वसिति)

कासिमः—धैर्यमवलम्बस्व । अहं ते स्वातन्त्र्यं रक्षिष्यामि ।

सेनापतिः—(भारतमातुश्चरणौ स्पृष्ट्वा यूरूपीयान् लक्ष्यीकृत्य)

कासिम—यह हमारे पूर्व पुरुषों का है, इसमें तुम्हारा क्या है ॥ ५ ॥

[इसके अनन्तर क्रोध से भरा कंपनी का आदमी चला जाता है ।]

भारतमाता—(रोती हुई) मधुर भाषणों से, विचित्र हृदयहारी चालों से मैं ठगी गई हूँ । सम्पूर्ण संसार के संचालक मेरे दुःख के नाशक साक्षात् शिव ही हो ॥ ६ ॥

सखी—मत रो समय की प्रतीक्षा करो ।

भारतमाता—इस समय आर्थिक कष्ट में पड़े हुए बहुत से मेरे लड़के पापी हो गए हैं और भय से संत्रस्त बंगाली कायर हो गए हैं, मैं जकड़ दी गई हूँ, अतः क्या करूँ ।

[दीर्घ सांसे भरती है]

कासिम—धीरज धरो ।

सेनापति—(भारतमाता के चरणों को छू कर और यूरोपनिवासियों को लक्ष्य कर)
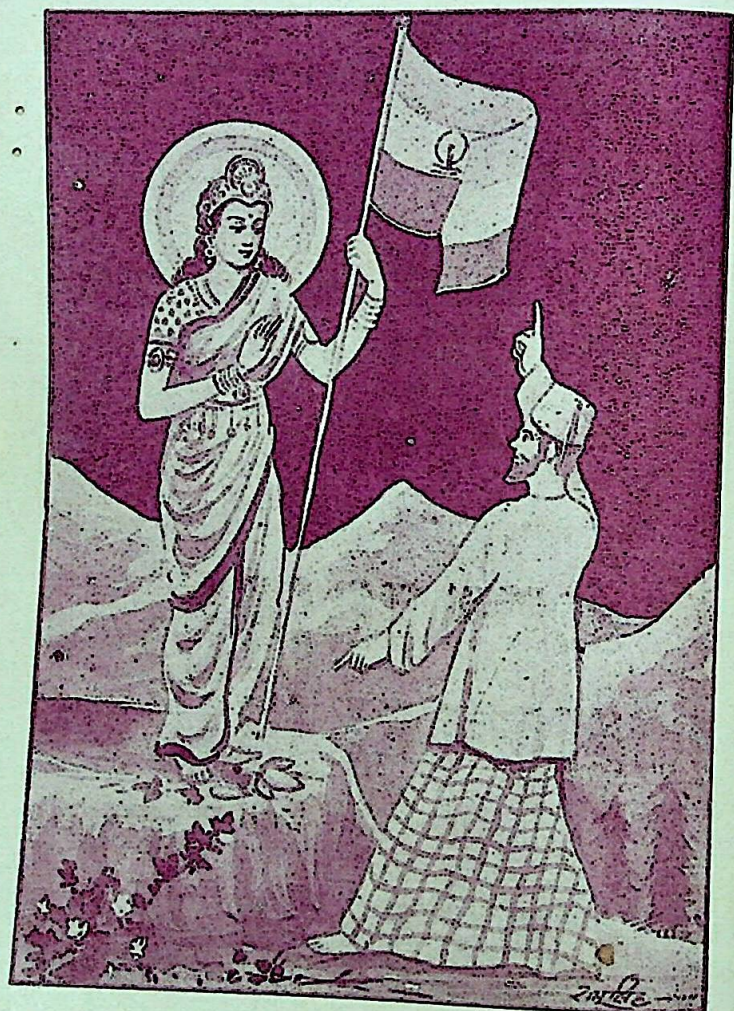
मातस्त्वच्चरणारविन्दकृपया सर्वानिमान् वञ्चकान्,
दुष्टाचारपरायणान् कुपथगान् भूमौ क्षणात्पातये।
ये चान्ये धनलोलुपाः क्षितिभृतः पश्यन्तु ते स्वात्मना
किं जातं किमु वा भविष्यति परं यत्त्वं प्रसूर्वीरभूः ॥७॥

भारतमाता—(उभयोः पृष्ठे हस्तौ दत्त्वा) सफलमनोरथौ स्याताम्। परमिदानीं नैव युद्धं समर्थये। यतो मदीयतनयाः प्रकृत्या सरलाः, कम्पनीपुरुषास्तु युद्धकुशलाः कपटिनश्च।

कासिमः—यथा भवत्या अनुमतिः।

सेनापतिः—अहमपि युद्धं नैव समर्थये, परं तैस्तु योद्धुं निश्चितमेव सैनिकाश्च शिक्षिताः, तेषां वचने नैव प्रत्ययो विधेयः, शिराजे तेषां कापट्यं दृष्टमेव।

कासिमः—तथापि युद्धप्रतिरोधाय प्रयतितव्यम्। (इति मसी पत्र-

हे माता, तुम्हारे चरण कमलों की कृपा से इन वंचकों को असत् आचार और विहार करनेवालों को, कुमार्गगामियों को एक क्षण में भूमिशायी बना दूंगा, और जो दूसरे धन लोभी राजा हैं वे अपने हृदय में देखें कि क्या हो गया है, और क्या होगा, क्योंकि तुम वीरों की जननी वीरभूमि हो ॥ ७ ॥

भारतमाता—(दोनों की पीठ पर हाथ रख कर) तुम दोनों अपने मनोरथों में सफल हो, परन्तु इस समय मैं युद्ध का समर्थन नहीं करती, क्योंकि मेरे लड़के स्वभावतः सरल हैं और ये कंपनी के आदमी युद्ध में चतुर हैं, और कपटी हैं।

कासिम—जो आपकी आज्ञा।

सेनापति—मैं भी युद्ध का समर्थन नहीं करता, परन्तु उन्होंने तो युद्ध का निश्चय ही कर लिया है, और सैनिकों को शिक्षित किया है। उनके वचन पर विश्वास नहीं करना चाहिए। शिराज पर उनका कपट देख लिया गया है।

कासिम—तौभी युद्ध के रोकने के लिए प्रयास करना चाहिए।

[स्याही और कागज को मंगा कर, पत्र लिख कर उसे कंपनी के पास

ञानाय्य पत्रं लिखित्वा तस्मै दत्त्वा कम्पनीसविधे प्रेषयति। ततो निष्क्रामति सेनापतिः। सखीसहिता भारतमाता जवनिकायां प्रविशति।]

पटीक्षेपः

(ततः प्रविशन्ति कम्पनीपुरुषैः सहिता हेस्टिङ्ग-वाट्सन-प्रभृतयः; यथास्थानमुपविशन्ति च।)

हेस्टिङ्गः—महाभागाः कासिमस्येदं पत्रं केनचित्पुरुषेणानीतम्।

वाट्सनः—वाचय।

हेस्टिङ्गः—कम्पनीपुरुषान् सप्रणयं प्रार्थयते कासिमः, किमपराद्धं मया, यद् मां विश्वासघातकमुद्घोष्य युद्धाय भवन्तः संनह्यन्ते। किं जाफरकोशात् मया किञ्चिदपि गृहीतम, किं वा जाफरगृहीतं मया ऋणं न दत्तम्? किं वा कर्णाटके जातस्य भवतां युद्धस्य व्ययो न दत्तः, मया तु ईदृशः सरसः प्रदेशो दत्तः यस्यायः कोटेरप्यधिकः। सर्वमेतत्कम्पनीपुरुषाणामनुकम्पार्थमेव, युष्मद्देशीयानामन्यायेन धनोपार्जनमवलोक्य

भेजता है। इसके अनन्तर सेनापति चला जाता है। सखी सहित भारतमाता परदे के अन्दर चली जाती हैं।

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर कंपनी के आदमियों के साथ हेस्टिङ्ग वाट्सन आदि आते हैं, और अपनी अपनी जगह पर बैठ जाते हैं।]

हेस्टिङ्ग—महोदयो, कासिम के इस पत्र को कोई आदमी लाया है।

वाट्सन—बाँचो—

हेस्टिङ्ग—कंपनी के पुरुषों से कासिम प्रेम पूर्वक प्रार्थना करता है कि मैंने क्या अपराध किया है कि जिसके कारण मुझे विश्वासघातक बता कर आप लोग युद्ध के लिए तैयार हो रहे हैं। क्या मैंने जाफर के खजाने से कुछ भी लिया है? क्या मैंने जाफर के लिए हुए कर्जे को नहीं चुकाया है? क्या कर्णाटक युद्ध में हुए आप के खर्चे को मैंने नहीं दिया है? मैंने तो हरा भरा वह प्रदेश आपको दे दिया है, जिसकी आय एक करोड़ से भी अधिक है। यह सब आप लोगों की कृपा के लिए ही किया है। आप के देशवासियों को अन्याय से

पूर्वं प्रार्थिता अपि नैव भवन्तः शृण्वन्तीति व्यापारे सर्वेभ्योऽपि करग्रहणं त्यज्यते ।

प्रथमः कम्प० पु०—आः अस्मभ्यमसावीर्ष्यति ।

द्वितीयः कम्प० पु०—अथ किम्, दुष्टोऽसौ राज्यादपनेतव्यः । पुनः स एव जाफरः स्थापयितव्यः ।

हेस्टिङ्गः—नहि नहि सुप्रबन्धकोऽसौ कासिमः ।

तृतीयः कं० पु०—कथं व्यापारे करो मुक्तः ।

हेस्टिङ्गः—उचितमेव तेन कृतम्, यतस्तत्प्रजाः करप्रदानाद् भवद्भिः सह प्रतिस्पर्धितुमक्षमा दरिद्राः संजायन्ते । भवद्भिर्बृहत्तमानि पत्तनानि ग्रामटिकाः क्रियन्ते ।

तृतीयः कं० पु०—(उत्थाय बद्धमुष्टिकया तद्वक्षसि आहते)

हेस्टिङ्गः—आः मृतोऽस्मि । (इति स्वकीयं वक्षो हस्तेन मृद्नाति)

वाट्सनः—क्षमस्वैतदपराधम् । (इति बद्धाञ्जलिरनुनयते)

धनोपार्जन करते देख कर, पहले आप से प्रार्थना भी की, पर आप नहीं सुनते, इस लिये सभी से टैक्स लेना छोड़ दिया है ।

कंपनी का एक पुरुष—ओह यह हमसे जलन रखता है ?

कपनी का दूसरा पुरुष—और क्या, इस दुष्ट को राजगद्दी से उतार दो, फिर उसी जाफर को बैठाओ ।

हेस्टिङ्ग—नहीं नहीं, कासिम सुन्दर प्रबन्ध करनेवाला है ।

कंपनी का तीसरा पुरुष—व्यापार में इसने टैक्स क्यों हटा दिया ?

हेस्टिङ्ग—यह उचित ही किया है, क्योंकि उसकी प्रजा टैक्स देने के कारण आप लोगों के साथ मुकाबला (लाग डांट) करने में असमर्थ हो दरिद्र होती जा रही है । आप लोगों ने बड़े बड़े नगरों को खेड़े (छोटे गांव) बना दिये हैं ।

कं० तीसरा पुरुष-(उठ कर मुट्ठी बाँध कर उसकी छाती में मारता है]

हेस्टिङ्ग—हाय, मरे [अपनी छाती को हाथ से मलता है]

वाट्सन—इसका अपराध क्षमा करो । (हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता है)

पुनः प्र० कं० पु०—

विभेद्य मन्त्रिणो वर्गं यत्नादुद्दूष्य सैनिकान् ।
अभियातव्यमेवैवं जयोऽस्माकं भविष्यति ॥ ८ ॥

हेस्टिङ्गः–(साश्रुः) तेन तु सर्वमपि युष्मदनुकूलमेव स्वीकृतम् ।

घृ० कं० पु०—नहि नहि दुष्टोऽसौ, अभियातव्य एव ।

द्वि० कं० पु०—

गाह्यन्तां मम सैनिकैः प्रतिदिशं राज्येऽस्य शौर्योद्धतै-
र्लुट्यन्तां जनसंकुला जनपदाः संपत्तिसस्यान्विताः ।
दह्यन्तां निलयाः सुधाधवलिताः कादम्बिनीचुम्बिनो
गृह्यन्तामरिवंशजाः क्षितिभुजः सर्वेऽपि युद्धोद्यताः ॥ ९ ॥

(ततो निष्क्रामन्ति वाट्सनप्रभृतयः, हेस्टिङ्गोऽपि किंकर्तव्यताविमूढ इव शनैः शनैर्निष्क्रामति ।

पटीक्षेपः ।

कं० प्रथम पुरुष—इसके मन्त्रि-मण्डल को फोड़ कर और सैनिकों को भड़का कर, चढ़ाई कर ही देनी चाहिये । इस प्रकार हमारी जय होगी ॥ ८ ॥

हेस्टिङ्ग—(आँसू भरे हुए) उसने तो सब कुछ आप से अनुकूल ही माना है ।

कं० तृतीय पुरुष—नहीं, नहीं, यह दुष्ट है । चढ़ाई करनी चाहिये ।

कं० द्वितीय पुरुष—

वीरता से उन्मत्त हमारे सैनिक चारों ओर से इसके राज्य में प्रवेश करें, धन धान्य से परिपूर्ण एवं मनुष्यों से भरी हुई बस्तियों को लूटें, अमृत के समान शुभ्र (अथवा चूने से पुते होने से शुभ्र) गगन चुम्बी भवनों को जलायें और युद्ध के लिये उद्यत एवं शत्रुवंशोत्पन्न सभी राजाओं को पकड़ें ॥ ९ ॥

[तदनन्तर वाट्सन इत्यादि चले जाते हैं, हैस्टिङ्ग भी किंकर्तव्यविमूढ़-सा धीरे धीरे जाता है)

[परदा गिरता है]

(तत प्रविशति चिन्तान्विता सखीद्वितीया भारतमाता ।)

भारत०—कथमद्यापि समरभूमेर्न कोप्यागच्छति । सखि ! इङ्गलैण्ड-जानामधिपतेः कृत्यमवलोक्योद्विजते चेतः ।

पश्य—

व्यापारेणात्मकृत्यं द्रढयति जनतां वर्तयन्नीशुधर्मे,
स्वं सङ्घं देशभक्त्योन्नमयति विकिरन्नस्मदीयेषु वैरम् ।
आत्मज्ञातिं प्रियोक्त्या प्रथयति विषयं मोहयन् दास्यभावे,
बुद्धेरस्य प्रभुत्वं किमु कुनयविदः स्यान्नु दौरात्म्यमेतत् ॥१०॥

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु भारहमाआ । जुज्झत्थलाओ कासिमाणुअरो संपत्तो । (जयतु जयतु भारतमाता । युद्धस्थलात् कासिमानुचरः संप्राप्तः ।)

भारत०—प्रवेशय । (ततः प्रविशति कासिमानुचरेण सह दौवारिकः ।) अनुचर ! अपि कुशलं कासिमप्रभृतीनाम् ?

[इसके अनन्तर चिन्तासमन्वित भारतमाता सखी के साथ आती है]

भारतमाता—आज भी संग्राम भूमि से कोई क्यों नहीं आ रहा है । सखि, अंग्रेजों के गवर्नर के कार्य को देख कर मेरा चित्त घबड़ाता है । देखो—

लोगों में ईसाई धर्म का प्रचार करते हुए ये लोग अपने कार्यों को व्यापार से मजबूत करते हैं; हम लोगों में वैर फैलाते हुए ये अपने समुदाय को देश-भक्ति से उन्नत करते हैं, देश को दासता से मोहित करते हुए ये प्रिय वचनों से अपनी जाति की प्रसिद्धि करते हैं । इसे इनकी बुद्धि की श्रेष्ठता कहें, या कुनीतिविशारद इनकी दुष्टता ॥ १० ॥

द्वारपाल—(आकर) भारत माता की जय हो । रणस्थली से कासिम का नौकर आया है ।

भारतमाता—बुलाओ । (इसके अनन्तर द्वारपाल के साथ कासिम का नोकर आता है ।] अनुचर ! कासिम इत्यादिकों की कुशल है ?

अनुचरः—उत्कोचदानेन विभेदनपटूनां कम्पनीपुरुषाणां विद्यमानत्वे कुतः कुशलम्।

भारत०—तर्हि कथय आमूलचूलं समरवृत्तान्तम्।

अनुचरः—सर्वथा कम्पन्याः प्रभुत्वस्वीकारेऽपि कासिमं निष्कासयितुं वङ्गे स्वाधिपत्यं स्थापयितुं च दुराग्रहा कम्पनीपुरुषा यदा न विरता आसन्, तदा कासिमोऽपि स्वसैन्यं सज्जयामास।

भारत०—युज्यते चैतत्,

सर्वापहारे ग्रहिलान् अत्याचारपरान् परान्।
विलोक्य सर्वलोकस्य चेतो मुञ्चति मार्दवम् ॥११॥

ततस्ततः,

अनुचरः—ततो वाट्सनो मद्रासबाम्बेसूरतादिपत्तनप्रान्तेषु स्थितान् स्वकीयानिङ्गलैण्डजानाहूय युगपत्पाटलिपुत्रमाक्रम्य जितवान्, सहसाऽऽक्रमणतो वित्रस्ता कासिमसेना पलायमाना पाटलिपुत्राद्बहिरागत्य

द्वारपाल—घूस दे कर फोडने में चतुर कंपनी के आदमियों के रहते कुशल कहाँ ?

भारतमाता—तो सम्पूर्ण समर के समाचार को सुनाओ।

नौकर—कम्पनी की पूर्ण रूप से प्रभुता मान लेने पर भी जब ये कंपनी के पुरुष कासिम को निकालने से और बंगाल में अपने आधिपत्य स्थापन करने से बाज न आए, तब कासिम ने भी अपनी सेना तैयार की।

भारतमाता—यह उचित ही है—

सारे का सारा छानने के लिये दुराग्रही अत्याचारी शत्रुओं को देख कर सब लोगों का चित्त नम्रता का परित्याग कर देता है ॥ ११ ॥

फिर !

नौकर—इसके अनन्तर वाट्सन ने मद्रास, बम्बई, सूरत आदि नगर और प्रान्तों में स्थित अपने अंग्रेजों को बुला कर, और पटना पर एक साथ आक्रमण कर के उसे जीत लिया। सहसा आक्रमण करने के कारण डरी हुई कासिम की

पुनः सज्जीभूय चाक्रामत्, परं न जाने तदानीमिङ्गलैण्डजानां शौर्यं क्व गतम्? यतो बहवस्तत्रस्थाः पलायिताः, परं केचनात्मानं समर्पितवन्तो, वन्दिनश्च संवृत्ताः।

सखी—हला सखि, उने वन्दीपण अपणे समर्पणे ते कोइ रहस्य मालूम करियै छे। (हला सखि! तेषां वन्दित्वेन आत्मनः समर्पणे च किंचिद् रहस्यं लक्ष्यते।)

भारत०—अथ किम्। यतस्ते तत्र स्थिताः सर्वमपि रहस्यं विज्ञाय कम्पनीसविधे प्रेषयिष्यन्ते, उपद्रोष्यन्ति च यथावसरम्, विभेदयिष्यन्ति चञ्चलचित्तवृत्तीनिति। (चिरं लक्षयित्वा) ततस्ततः।

अनुचरः–ततः कासिमोऽपि युद्धारम्भः संजात एवेति निश्चित्य स्वसैन्यं सज्जीकृत्य इङ्गलैण्डजानां भवनेष्वाक्रम्य तान्विजित्य च बन्दीचकार। इतस्ततः स्थितानां तेषां दौरात्म्यं चावलोक्येति आज्ञापयामास च।

सेना भाग खड़ी हुई। तदनन्तर पटने के बाहर निकल कर और तैयार हो कर उसने फिर आक्रमण किया, उस समय न जाने अंग्रेजों की बहादुरी कहाँ चली गई, क्योंकि वहाँ पर रहने वाले बहुत से भाग गए, और कुछ आत्मसमर्पण कर बन्दी हो गए।

सखी—सखि, उनके बन्दीरूप से आत्मसमर्पण में कुछ रहस्य मालूम पड़ता है।

भारतमाता–और क्या! क्योंकि वहाँ पर रहते हुए वे सम्पूर्ण रहस्य को जान कर कंपनी के पास भेजेंगे, अवसर मिलने पर उपद्रव करेंगे, और चञ्चल चित्त के लोगों को फोड़ेंगे भी। फिर।

नौकर—तदनन्तर 'युद्ध आरम्भ ही हो गया है' इसका निश्चय कर कासिम ने भी अपनी सेना सजाई और अंग्रेजों के घरों पर आक्रमण कर एवं उनको जीत कर कैद कर लिया; इधर उधर रहने वाले उन लोगों की दुष्टता को देखकर उसने यह आज्ञा दी कि—

असद्भावसमायुक्ताः सर्वे रणदुराग्रहाः ।
एते आङ्ग्ला ग्रहीतव्या निहन्तव्याश्च संगताः ॥ १२ ॥

भारतमाता—ततस्ततः ।

अनुचरः—ततः कम्पनीपुरुषा द्रव्यलोलुपान्भवत्याः कतिचन सुतान् प्रलोभ्य स्वसैनिकांश्च विधाय कासिमसैन्येन योद्धुमारभन्त । कासिमसैन्येऽपि कतिपयपुरुषैरुद्घोष्य तथा विक्रान्तं, येन सकलमपीङ्गलैण्डजानां सैन्यं वित्रस्तमेवाभवत् ।

खड्गाखड्गि ततश्चासीदुभयोः सैन्ययोर्महत् ।
कुन्ताकुन्त्यश्ववारेषु दारुणं साम्परायिकम् ॥ १३ ॥

ततो रणविद्याविशारदवीरसमन्विता विजयमानाऽपि कासिमसेना सेनापतेराज्ञासमनन्तरमेव पलायत् ।

भारतमाता—(सतर्कम्) कथमेतज्जातम् ? आम् मन्ये कोऽप्यत्र

असद् विचारों से समन्वित संग्राम दुराग्रही इन सब अंग्रेजों को पकड़ लो और मिलने पर मार डालो ॥ १२ ॥

भारतमाता—फिर—

नौकर—तदनन्तर कंपनी के पुरुष धनलोभी आपके कुछ लड़कों को प्रलोभन दे कर और उनसे अपनी एक सेना बना कर, कासिम की सेना से युद्ध करने लगे । कासिम की सेना के कुछ लोगों ने ललकार कर वह बहादुरी दिखाई कि सम्पूर्ण अंग्रेजों की सेना भयभीत ही हो गई ।

उन दोनों सेनाओं में तलवार वालों से तलवार वालों का महान् युद्ध हुआ, और असवारों में भाले वालों से भाले वालों का भयानक संग्राम हुआ ॥ १३ ॥

तदनन्तर रणविद्या में दक्ष, वीरों से समन्वित, एवं विजयी हो रही कासिम की सेना, सेनापति की आज्ञा के अनन्तर ही भाग खड़ी हुई ।

भारतमाता—[तर्क—किसी वस्तु के विषय में अज्ञात तत्त्व को कारणोत्पत्ति

गूढाभिसन्धिः स्यात् । (विचिन्त्य, निःश्वस्य रुदती च)

हा वीर ! कासिम ! कथं निजबन्धुवर्गैर्मुक्तो रणे प्रखरशौर्यभृतां वरेण्यः
उत्कोचतःकृतमिदं यदि वेर्ष्ययैव भीत्या नु मे न तनयाः समरात्प्रयान्ति।

(ततः कुतोऽपि कोलाहलमाकर्ण्य) अनुचर ! पश्य, कुतोऽयं कोलाहलः ।

अनुचरः—(बहिर्गत्वा पुनरागत्य) अमायटनामकस्य कस्यचिद् यूरूपीयस्य शिरश्छित्त्वा सानन्दं सबहुमानं मुँगेरपत्तने नीयते । मातः ! अस्माकम्—अज्ञानादेवानुबन्धेन वेदं संजातम ।

भारतमाता—आपतन्तीनामापदां नैव पादौ समुत्पद्येते । ततस्ततः ।

अनुचरः—ततो मुर्शिदावादपत्तनं विजित्य क्रमशः कटकादिनगर-ग्रामग्रामटिकाखर्वटे विजयमाना कम्पनीसेना गिरियाग्रामे सं-गताऽऽसीत् । तत्र घोरतरमुभयोः सैन्ययोः साम्परायिकमभूत्, अथ

द्वारा निश्चित करने वाले विचार—के साथ] यह कैसे हो गया ? मालूम पड़ता है कि इसमें कोई रहस्य होगा । (विचार कर और उसांसे भर कर, रोती हुई)—

हाय वीर कासिम, संग्राम में आकर भाग खड़े हुए अपने बन्धु बान्धवों से क्यों परित्यक्त हुए हो ? उन्होंने यह कार्य घूस से किया है, या जलन से; क्योंकि मेरे पुत्र डर कर संग्राम से नहीं भागते ॥ १४ ॥

(फिर कहीं से शोर को सुन कर) नौकर देखो, यह शोर कहाँ हो रहा है ?

नौकर—(बाहर जाकर फिर आकर) अमायट नामक किसी यूरोपियन् का सिर काट कर आनन्द और गर्व के साथ मुंगेर नगर ले जा रहे हैं । माता जी हमारे अज्ञानवश अथवा दुर्भाग्यवश यह हो गया है ।

भारतमाता—आती हुई आपत्तियों के पैर नहीं होते; फिर ।

नौकर—तदनन्तर मुर्शिदावाद नगर को जीत कर क्रमशः कटक इत्यादि नगर, गाँव, कसबे और खेड़े को जीतती हुई कंपनी की सेना गिरिया गाँव में पहुँची । वहाँ पर उन दोनों सेनाओं का युद्ध हुआ । इसके अनन्तर भाग्यवश

दैवानुबन्धाद् गुलिकाभिर्हतस्य मीरवदरुद्दीनसेनापतेः पतनसमनन्तरमेव समस्तं सैन्यं पलायिष्ट ।

भारतमाता—ततस्ततः ।

अनुचरः—तदनन्तरं पलायमानाऽस्माकं सेना उदयानले समवेता ऽभूत् । अथ च कम्पनीकौटिल्यकलुषितानां वहूनां सामन्तानां सैन्यं समेत्य पञ्चाशत्सहस्रेभ्योऽप्यधिकं समजायत ।

भारतमाता—तत्र कः सेनापतिः ?

अनुचरः—(रुदन्) अस्माकं भाग्यदोषात् विश्वासघातको गुरगखनानामकः सेनापतिः संजातः । रात्रौ पञ्चसहस्रैरेव कम्पनीसैनिकैर्दुर्गं प्रविश्य शयानाऽस्माकं सेना कृत्ता ।

भारतमाता—आः प्रसुप्तानां मारणं नितान्तमनुचितम् ।

ततस्ततः—

गोली से मारे गए मीर बदरुद्दीन नामक सेनापति के गिरने के अनन्तर ही सम्पूर्ण सेना भाग खड़ी हुई ।

भारतमाता—फिर ।

नौकर—तदनन्तर भागती हुई हम लोगों की सेना उदयानल में एकट्ठी हुई । तदनन्तर कंपनी की कुटिलता से पीड़ित बहुत से सामन्तों की सेना मिल कर ५० हजार से भी अधिक हो गई ।

भारतमाता—उसका कौन सेनापति है ?

नौकर—(रोता हुआ) हमारे दुर्भाग्य से विश्वासघातक 'गुरगखना' नामक सेनापति हुआ है । रात्रि में ५ हजार ही कंपनी के सैनिकों ने दुर्ग के भीतर प्रवेश कर सोती हुई हमारी सेना काट डाली ।

भारतमाता—सोए हुओं का मारना अत्यन्त ही अनुचित है ।

फिर ।

अनुचरः—ततोऽवशिष्टा अस्माकं सैनिकाः पलायमानाः स्वस्वगृहमगच्छन्। कासिमोऽपि पलाय्य पाटलिपुत्रे गतः, ततो वन्दीकृतानामिङ्गलैण्डजानां दौरात्म्यमवलोक्य तान् प्राणदण्डेन दण्डयामास। ततो रुष्टः एडममहोदयः पाटलिपुत्रं निरुध्य कासिमं ग्रहीतुं संनद्धः, परं सकुटुम्बः कासिमोऽपि पलाय्य अवधराजं शरणं प्रपन्नः। मन्ये स महतीं सेनामादाय वङ्गराज्यमुद्धरिष्यति।

भारतमाता—यदि दैवमनुकूलं स्यात्।

सखी—किस तरह दैव को प्रतिकूल तर्कण गर्द छ्यौ।

(कथ खलु दैवं प्रतिकूलं तर्कयसि।)

भारतमाता—यतः सरलोऽसौ कासिमः। स हि—

दृढैः प्रतिभटोन्मुखैः समरसद्भिरसिपण्डितैः,
प्रभोः प्रणतिसंगतैः कलिकलानिगमशिक्षितैः।
ममैव चतुरात्मजैः सह गतं समरचत्वरे,
प्रपञ्चरचनानुगं कथमिदं रिपुकुलं जयेत्॥ १५॥

नौकर—तदनन्तर बची हुई सेना भाग कर अपने अपने घर चली गई। कासिम भी भाग कर पटना चला आया, फिर कैद किये गए अंग्रेजों की दुष्टता को देख कर उसने उन्हें मौत की सजा दी। तदनन्तर क्रुद्ध हो कर एडम महोदय ने पटना को घेर लिया और वह कासिम को पकड़ने के लिये तैयार हुआ, परन्तु सकुटुम्ब कासिम भी भाग कर अवध के नवाब का शरणार्थी हो गया। मालूम पड़ता है कि वह बहुत बड़ी सेना को ले कर बङ्गाल का उद्धार करेगा।

भारतमाता—यदि भाग्य अनुकूल हुआ तो।

सखी—भाग्य को प्रतिकूल कैसे समझती हो ?

भारतमाता—क्योंकि यह कासिम सीधा है।

सुदृढ, प्रतिभट के सम्मुख खड़े हो दहाड़ते हुए, तलवार चलाने में कुशल, प्रभु की जी हजूरी करनेवाले, एवं कलियुग की कला, (अथवा कलह-कला) तथा तद्विषयक शास्त्र में दक्ष मेरे ही चतुर पुत्रों के साथ संग्राम में खड़े हुए इस प्रपंच-रचना के अनुगामी शत्रुओं को कासिम कैसे जीतेगा। १५॥

सखी—यो ठीक छ (युज्यते खल्वेवम् ।)

(ततः प्रविशति क्रुद्धः सानुचरो हेस्टिङ्गः । तमवलोक्य शनैर्निष्क्रान्तोऽनुचरः ।)

हेस्टिङ्गः—आः कोऽस्माकं । विरुद्धं मन्त्रयते ।

(भारतमाता भीतभीतेव तिष्ठति । स तां निबध्नाति)

सखी—महाराज ! मैंणो ये सुणा हे कि कासिम कहीं से सेणा-सहायता लेने हउन ।

(महाराज ! श्रूयते कासिमः कुत्रापि सेनासाहाय्यमानेतुं गतः ।)

हेस्टिङ्ग वृत्तं तत् । स हि अवधपतिना शाहआलमेन सहागतो चक्सरयुद्धे पराजितो न जाने कुत्र गतः ।

(ततः प्रविशति सानुचरो नन्दकुमारः)

नन्दकुमारः—आः क एष मातरं निबध्नाति ।

हेस्टिङ्गः—(उत्थाय खड्गं निष्कास्य) रे दुष्टापसद ! कस्त्वं मम कार्ये परिपन्थी भवसि । अहमेनामाङ्ग्लायत्तशासनां विधास्यामि ।

सखी—यह ठीक है ।

[इसके अनन्तर क्रुद्ध हेस्टिङ्ग नौकर के साथ आता है । उसको देख कर नौकर धीरे से चला जाता है ।]

हेस्टिङ्ग—हमारे विरुद्ध मन्त्रणा कौन कर रहा है ?

[भारतमाता डरी-सी रह जाती है, वह उसे बाँधता है ।]

सखी—साहब, मैंने सुना है कि सेना की सहायता लाने के लिये कासिम कहीं गया है ।

हेस्टिङ्ग—वह बात हो चुकी । अवध के नवाब शाहआलम के साथ आ कर वह बक्सर की लड़ाई में हार गया, और फिर न जाने कहाँ चला गया ।

[इसके अनन्तर नौकर के साथ नन्दकुमार आता है ।]

नन्दकुमार—अरे, यह माता को कौन बाँध रहा है ?

हेस्टिङ्ग—(उठ कर और तलवार निकाल कर) रे दुष्ट, मेरे इस कार्य में तुम बाधक बनने वाले कौन हो ? मैं इसे इंगलैंड गवर्नमेंट के अधीन करूंगा ।

नन्दकुमारः—पश्य पश्य ।

वाणिज्यं प्रहृतं हृता कुशलता शौर्यं समुन्मूलितं,
विद्वेषोऽत्र जनेष्वपि प्रतिदिशं सम्यक् त्वयैवाहितः ।
विश्वासादबलामिमां वसुमतीं निःस्वां विधायाधुना,
बध्नन्नेष न लज्जसेऽतिसरलां किं स्यादकार्यं नु ते ॥ १६ ॥

हेस्टिङ्गः–रे नीच! अनुभविष्यस्यचिरेणैवास्याः परिपन्थितायाः फलम्।

(इति वदन्निष्क्रान्तो हेस्टिङ्गः । ततो निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

इति श्रीसर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि-महामहोपाध्याय—पण्डित-मथुराप्रसाददीक्षितकृतौ भारतविजयनाटके तृतीयोऽङ्कः ।

नन्दकुमार—देखो, देखो ।

तुमने इसका व्यापार छीन लिया, इसके कला-कौशल को हर लिया, इसकी वीरता का नाश कर दिया, और तुम्हीं ने उसके लोगों में चारों ओर से विद्वेष फैला दिया । इस समय विश्वास के कारण इस अबला (शक्तिहीन स्त्री) वसुमती (धन सम्पन्न पृथ्वी) को निर्धन बना कर इसकी अति सरलता के कारण इसे बाँधते हुए तुम नहीं लजाते हो, तो फिर तुम्हारे लिये अकार्य ही क्या है ।१६ ॥

हेस्टिङ्ग - रे नीच, इस विरोध का फल शीघ्र ही मिलेगा ।

[यह कहता हुआ हेस्टिङ्ग जाता है । तदनन्तर सब जाते हैं]

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि म० म० पं० मथुराप्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित भारतविजय नाटक का तृतीय अंक समाप्त ।

चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति न्यायाधिपतिना सर एलिजाख्येन सह हेस्टिङ्गः)

हेस्टिङ्गः—न्यायाधिपते ! नन्दकुमारो मम कार्ये परिपन्थी भवतीति शिक्षणीयोऽसौ ।

एलिजाः—यथावसरं संपादयिष्यामि, परं किमसौ विदधातीति ज्ञातुं समुत्कण्ठते मे चेतः । चन्द्रनगरे अस्यैव परावर्तनेन फ्रान्सयुद्धे जितवान् क्लाइवमहोदयः, अन्यथा किं स्यादिति त्वनिर्वचनीयमेव ।

हेस्टिङ्गः—वृत्तं तत, इदानीं विधवया मीरजाफरपत्न्या लक्षाणि, मुन्नीवेगमादिभिश्च यन्मह्यं दश लक्षाणि उत्कोचेन दत्तानि, तदेतत्सर्वं रहस्यं फ्रान्सभवानां सविधे समुद्घाटयतीति-तदेतत्पत्रम् । (इति पत्रं दर्शयति)

एलिजाः—तथाप्यसौ युष्मद्राज्यस्थापकं मित्रम् ।

हेस्टिङ्गः—कण्टकोऽसौ मूलतः शोधनीयः ।

चतुर्थ अङ्क

[इसके अनन्तर सर एलिजा नामक जज के साथ हेस्टिंग प्रवेश करता है]

हेस्टिंग—जज साहब ! नन्दकुमार मेरे कार्य में बाधक होता है—अतः उसे शिक्षा देनी है ।

एलिजा—अवसर मिलने पर कर दूंगा, परन्तु वह क्या करता है–इसके जानने के लिये चित्त उत्कण्ठित है । चन्द्रनगर में इसीके ही लौटने से फ्रांस-युद्ध में क्लाइव ने विजय प्राप्त की थी, नहीं तो क्या होता यह अवर्णनीय ही है ।

हेस्टिंग--वह तो हो चुका । इस समय मीर जाफर की विधवा स्त्री ने एक लाख रुपये तथा मुन्नी बेगम इत्यादि ने दस लाख रुपये जो मुझे घूस में दिये थे, उस सब का रहस्य यह फ्रांस निवासियों से प्रकट करता है, वह यह पत्र है । (पत्र दिखलाता है)

एलिजा--तौ भी यह तुम्हारे राज्य का स्थापन करनेवाला मित्र है ।

हेस्टिंग—इस काँटे को जड़ से निकाल देना चाहिये ।

एलिजा न्यायाधिपतिः—अहं तव संतोष्यं इति युष्मदभिलषितमेव विधास्यामि ।

(ततः प्रविशति बद्धहस्तः कोटपालगृहीतः वाकीलेन सहितो नन्दकुमारः)

न्याया०—कोऽस्यापराधः ?

कोट०—महाराज ! मोहनप्रसादपत्न्या आभूषणानि गृहीत्वा प्रतिवदति ।

न्याया०—किमिदं सत्यम् ?

कोट०—अथ किम् ।

न्याया०—तर्हि मोहनप्रसादं प्रवेशय ।

(ततः प्रविशति आकारितो मोहनः)

मोहनप्रसाद ! किं तव पत्न्या आभूषणानि गृहीत्वा प्रतिवदति ?

मोहनः—अथ किम ।

न्याया०—कस्ते साक्षी ? साक्षिणं प्रवेशय ।

एलिजा जज—मैं आपका सहपाठी हूँ, अतः तुम्हारा अभिलषित पूर्ण करूँगा ।

[इसके अनन्तर बंधा हुआ, कोतवाल से पकड़ा हुआ नन्दकुमार वकील के साथ आता है ।]

जज—इसका क्या अपराध है ?

कोतवाल—महाराज, मोहन प्रसाद की स्त्री के गहने ले कर देने से इन्कार करता है ।

जज—क्या यह सच है ?

कोत०—और क्या !

जज—तो मोहनप्रसाद को बुलाओ ।

(इसके अनन्तर बुलाया गया मोहन प्रसाद आता है ।)

मोहनप्रसाद—क्या यह तुम्हारी स्त्री के गहने को ले कर मुकरता है ?

मोहन—और क्या ?

जज—तुम्हारा कौन गवाह है ? गवाह को बुलाओ ।

(ततः प्रविशति शिक्षितो मिथ्यासाक्षी ।)

साक्षिन् ! त्वमिदं जानासि ? अनेन नन्दकुमारेण मोहनस्य पत्न्या आभूषणानि गृहीतानि ।

साक्षी—बहुतरमस्मिन्विषये जानामि, अवहितः शृणु ।

न्याया०—सम्यग् अवहितोऽस्मि, कथय ।

साक्षी—एकदाऽसौ नन्दकुमारो मम मित्रमाभूषणानि गृहीत्वा मया साकं सुवर्णकारसविधेऽगच्छत् ।

न्याया०—नन्दकुमार ! किमिदं सत्यम् ?

नन्दकुमारः—सर्वमसत्यम्, एनमेव न जानामि, मित्रतायाः का वार्ता

न्याया०—साक्षिन् ! अग्रे कथय ।

साक्षी—तस्य सुवणकारस्य सविधे तानि दर्शितानि । तेषां मूल्यं पृष्टम्, पुनस्तेन स्वणकारेण कस्येदमिति पृष्टम् । (ततः साक्षिणं प्रलोभयितुं कश्चिन्नन्दकुमारसम्बन्धी अङ्गुल्या इङ्गितेन द्विसहस्रं दास्यामीति निर्दिशति, स शिरःकम्पनेन न स्वीकरोति ।)

[इसके अनन्तर सिखाया गया झूठा गवाह प्रवेश करता है]

जज—क्या तुम यह जानते हो कि इस नन्दकुमार ने मोहन की स्त्री के गहने ले लिये थे ?

गवाह—इसके विषय में बहुत कुछ जानता हूँ, एकाग्रचित्त हो कर सुनिए।

जज—एकाग्रचित्त हूँ, कहो ।

गवाह—एक बार यह मेरा मित्र नन्दकुमार गहनों को ले कर मेरे साथ सुनार के पास गया ।

जज—नन्दकुमार, क्या यह सच है ?

नन्दकुमार—सब झूठ है । मैं इसे ही नहीं जानता, फिर दोस्ती कैसी ?

जज—गवाह, आगे कहते जाओ ।

गवाह—उस सुनार को उन्हें दिखाया, उनकी कीमत पूछी । फिर उस सुनार ने पूछा कि ये किसके हैं ।

[इसके अनन्तर गवाह को फुसलाने के लिये नन्दकुमार का कोई संबंधी अंगुली के इशारे से यह कहता है कि दो हजार दूँगा, वह सिर हिला कर उसे नहीं स्वीकार करता है ।

नन्दकुमार-सम्बन्धी दश सहस्राणि निर्दिशति । पृ० ९१
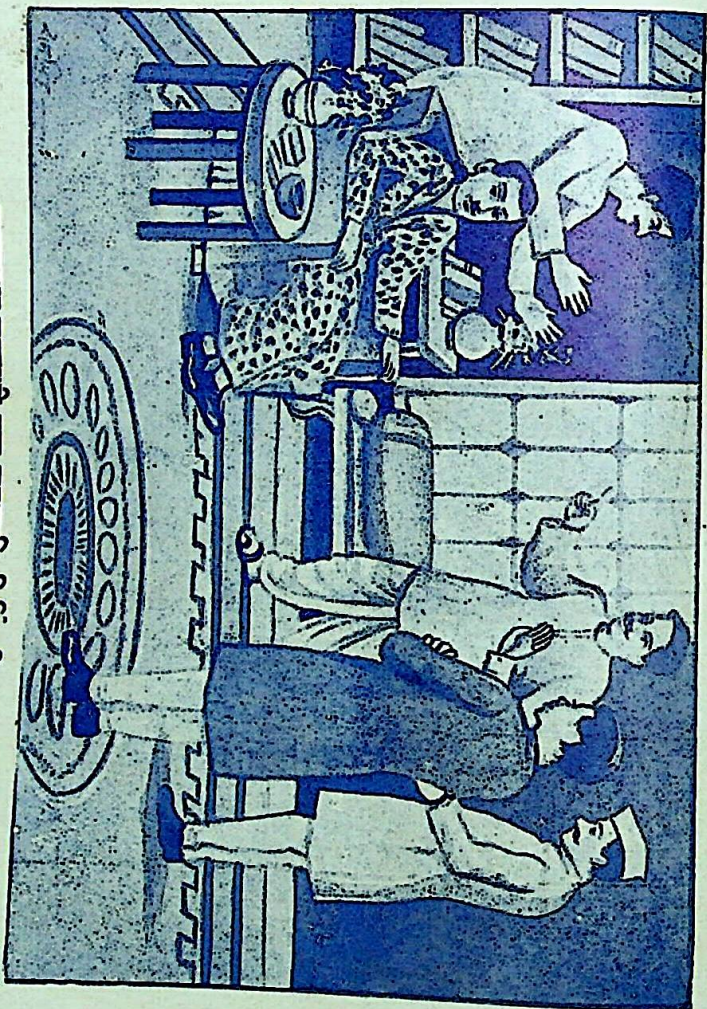
न्याया०—साक्षिन्! पुनरग्रे कथय।

साक्षी—नन्दकुमारः स्वर्णकारमवदत्कस्यापीदं भवेत्, तत्तु निष्प्रयोजनम्। अथापि तव सन्तोषार्थं नाम कथयामि। (पुनः नन्दकुमारसंबंधी अङ्गुलीनामिङ्गितेन पञ्च सहस्राणि निर्दिशति। स न स्वीकरोति। ततो दश सहस्राणि निर्दिशति। ततः स साक्षी शिरःस्पन्दनेन स्वीकरोति)

न्याया०—(लिखित्वा) पुनरग्रे कथय साक्षिन्! त्वं धार्मिकः सत्यवादी च। तव वचनानुसृत एवास्य न्यायः।

साक्षी०—तदनन्तरं मम पत्नी मां बाहुभ्यां गृहीत्वा उदतिष्ठिपत् अवोचच्च। सुसम्पन्नं भोजनम्। तदानीमुन्मीलिते मम चक्षुषी।

न्याया०—किमिदं कथयसि?

साक्षी—यदेतत्स्वप्ने दृष्टं तत्तथैव सर्वमुक्तम्।

न्याया०—गच्छ। मोहनप्रसाद! अस्त्यपरःकोऽपि साक्षी?

मोहनः—अपरस्तु कोऽपि नास्ति।

जज—फिर आगे कहो।

गवाह—नन्दकुमार ने सुनार से कहा कि किसी का भी हो—यह तो व्यर्थ है। तो भी तुम्हारे सन्तोष के लिये नाम कहता हूँ।

[फिर नन्दकुमार का रिस्तेदार अंगुली के इशारे से पाँच हजार बताता है। वह उसे नहीं स्वीकार करता है। फिर दस हजार बतलाता है। उसके अनन्तर वह गवाह सिर हिला कर उसे स्वीकार करता है।

जज—(लिख कर) फिर आगे कहो गवाह! तुम तो धार्मिक और सत्यवादी हो। तुम्हारे वचनों पर ही इसका फैसला है।

गवाह—इसके अनन्तर मेरी स्त्री ने मुझे बांह पकड़ कर उठा दिया और कहा कि भोजन तैयार है। उस समय मैंने आँखें खोलीं।

जज—यह क्या कह रहे हो?

गवाह—जो कुछ सपने में देखा था, वह सब वैसा ही कह दिया।

जज—मोहनप्रसाद, जाओ। और कोई दूसरा गवाह है?

मोहन—और तो कोई नहीं।

न्याया०—तथाप्ययं विश्वासघातक इति प्राणदण्डेन दण्ड्यते (इति श्रावयति)

वाक्कीलः—अयुक्तोऽयं दण्डः साक्षिणोऽभावात्। यदप्येकेनोक्तम्, तदपि स्वप्नकथनम्। यदि तद्वचनं प्रमाणं, तदा स्वप्नदृष्टत्वादभियोगोऽप्रमाणम्। अथ तद्वचनमेवाप्रमाणम्, तदाऽभियोगेऽपि प्रामाण्याभावात् अप्रमाणमेव। किञ्च सप्तदशशताधिके त्रिसप्ततितमे ईशवीये वर्षे स्थापितस्य न्यायालयस्य कतिचिद्वर्षपूर्वं जातेऽपराधेऽनधिकाराच्च। अपि च। पूर्वकालिकेऽप्यपराधे न्यायव्यवस्थायाममीचन्द्रप्रतारकः क्लाइवः प्राणदण्डेन किन्न दण्ड्यते। अन्यच्च अभ्युपेत्य वादेऽपि नायं तथाभूतोऽपराधः, येन प्राणदण्डेन दण्ड्यताम्।

न्याया०—यूरूपदेशे तु एतादृशेऽपराधेऽयमेव दण्डः।

वाक्कीलः—नायं यूरूपीयः, नापि यूरूपीयाणां न वा कम्पन्याश्चानुचर इति सर्वथा निर्दोषोऽयम्।

जज—तौ भी यह विश्वास घातक है। इसलिए इसे फांसी की सजा दी जाती है।

(यह सुनाता है)

वकील—गवाह के न होने पर यह सजा ठीक नहीं है। यद्यपि एक ने कहा है पर वह सपने की बात है। यदि उसके वचन सबूत में हैं तो सपने में देखने के कारण मुकदमा झूठा है। और यदि उसके वचन ही झूठे हैं तो प्रमाण के अभाव में मुकदमा ही झूठा है। १७७३ सन् में स्थापित न्यायालय (कोर्ट) की स्थापना से कुछ वर्ष पूर्व होने वाले अपराध पर उसका अधिकार ही नहीं है। उसमे पूर्व होने वाले अपराध के विषय में न्याय की व्यवस्था मान लेने पर अमीचंद के ठगने वाले क्लाइव को फांसी क्यों नहीं दी जाती। और अपराध मान लेने पर भी यह ऐसा अपराध नहीं है जिसमें फांसी की सजा दी जाय।

जज—यूरोप में तो ऐसे अपराध होने पर यही सजा है।

वकील—यह यूरोपवासी नहीं है, और न यह यूरोपवासियों का अथवा कंपनी का नौकर है। अतः यह सर्वथा निर्दोष है।

न्याया०—अस्त्वेतत्, कम्पन्याः सविधे प्रष्टव्यम्, कोऽत्र न्यायो युज्यते। तावत्प्रतीक्षितव्यम्।

वाक्कीलः—एवं भवतु। ते न्यायिनः, युक्तमेव भविष्यति (ततो नन्दकुमारः वाक्कीलस्वसम्बन्धिभ्यां सह निष्क्रामति।)

न्याया०—(हेस्टिङ्गस्य कर्णे किमप्युक्त्वा कोटपालेन सह निष्क्रामति।)

(हेस्टिङ्गाऽपि किमपि चिन्तयति)

(पटीक्षेपः)

(अथ हेस्टिङ्गो भारतमातरमुपेत्य दृढं निबध्य निष्क्रामति)

भारतमाता—आः सखि !

सौम्याकृतिं समवलोक्य तु वञ्चिताऽहं,
हा हा हले मधुरभाषणमोहिताऽस्मि।
जाता ममापि तनयाः कुनयप्रवृत्ताः
कुर्यां किमत्र निगडैश्च दृढं निबद्धा॥ १॥

जज—अच्छा यही सही। कम्पनी से पूछेंगे कि यहाँ पर क्या फैसला होना चाहिये, तब तक प्रतीक्षा कीजिये।

वकील—अच्छा ऐसा ही सही। वे इंसाफ-पसंद लोग हैं। ठीक ही होगा।

वकील—अच्छा ऐसा ही सही। वे इंसाफ-पसंद लोग हैं। ठीक ही होगा। वकील अपने रिस्तेदार के साथ जाता है।

[इसके अनन्तर नन्दकुमार वकील और अपने रिस्तेदार के साथ चला जाता है—हेस्टिङ्ग जज हेस्टिङ्ग के कान में कुछ कह कर कोतवाल के साथ चला जाता है—हेस्टिङ्ग भी कुछ सोचता है।]

परदा गिरता है।

[अब हेस्टिङ्ग भारतमाता के पास आकर उसे खूब बांध कर चला जाता है।]

भारतमाता—हाय सखि !

इसके मनोहर आकार को देख कर मुझे धोखा हुआ है। हाय री सखी ! इसके मधुर भाषण को सुन कर मुझे मोह हुआ है। मेरे लड़के भी कुनीति पर चलने लगे हैं। मैं यहाँ पर क्या करूँ? मैं तो बेड़ियों से कस कर बाँधी गई हूँ॥ १॥

(इति दीर्घमुच्छ्वसिति । ततः प्रविशति चरः, दूरतोऽवलोक्य)

निगडियपयारविन्दा विक्किण्णवमणा मिलाणमुहकन्ती ।
चिन्तेन्ती किं पि मणम्मि सुदुक्खिया भारही माया ॥२॥

निगडितपदारविन्दा विकीर्णवसना म्लानमुखकान्तिः ।
चिन्तयन्ती किमपि मनसि सुदुःखिता भारती माता ॥ २ ॥

सखी—सन्ताप दूर करो । समय की बाट जोओ । थोड़े समय में ही छूट कर स्वतन्त्र हो जाउगी ।

(सन्तापमपनय समयः प्रतीक्षितव्यः । स्वल्पेनैव समयेनोन्मुक्ता भविष्यसि)

चरः—(सविधे प्रविश्य) पणओऽम्हि । (प्रणतोऽस्मि)

(इत्युक्त्वा उपविशति)

भारत०—कथय किमिदानीं वङ्गवृत्तान्तम् ।

चरः—(रुदन्) सव्वत्थ वङ्गदेसम्मि धनलोलुवेहिं कम्पणीपुरिसेहिं तिउणिओ करो पवड्ढिओ ।

(सर्वत्र वङ्गदेशे धनलोलुपैः कम्पनीपुरुषैस्त्रिगुणितः करः प्रवर्धितः)

भारत०—आः कथमेते निर्धनास्तावन्तं दास्यन्ति ? ततस्ततः ।

[लंबी उसासे भरती है । इसके अनन्तर जासूस का प्रवेश होता है] ।

जासूस—(दूर से देख कर)

जिसके पैरों में बेड़ियाँ पड़ी हुई हैं, जिसके वस्त्र अस्तव्यस्त हैं, जिसकी मुख की कान्ति मैली हो गई है—ऐसी दुःखिनी भारतमाता मन में कुछ सोच रही है ॥ २ ॥

सखी—सन्ताप दूर करो, समय की प्रतीक्षा करो । थोड़े समय में छूट कर स्वतन्त्र हो जाओगी ।

जासूस—(पास आकर) प्रणाम हो ।

(कह कर बैठ जाता है)

भारतमाता—कहो, इस समय बंगाल का क्या समाचार है ?

जासूस—(रोता हुआ) बंगाल में सब जगह कंपनी के धनलोभी लोगों ने तिगुना टैक्स बढ़ा दिया है ।

भारतमाता—हाय, ये गरीब इतना कैसे देंगे, फिर ।

चरः—तदो पवड्ढियकरदाणम्मि असमत्थाओ वङ्गदेसीयपुरिसाओ कम्पणीपुरिसेहिं वहु कुट्टियाओ। तदो वि धणाभावेण तिउणियकरधणं अददमाणाओ सव्वओ कंडगाइण्णेहिं विल्लदण्डेहिं एव्वं कुट्टियाओ जेण के वि मिया, के वि मुच्छिआओ जायाओ।

(ततः प्रवर्धितकरदाने असमर्थाः वङ्गदेशीयपुरुषाः कम्पनीपुरुषैर्बहु कुट्टिताः। ततोऽपि धनाभावेन त्रिगुणितकरधनमददानाः सर्वेऽपि कण्टकाकीर्णैर्विल्वदण्डैरेवं कुट्टिताः, येन केऽपि मृताः, केऽपि मूर्च्छिता जाताः)

भारतमाता—(सोद्वेगम्)

तन्वा शान्त इति प्रमुह्य करुणाक्रान्तात्मनाऽसौ मया,
भस्मच्छन्न इवानलस्तृणचये देशे सुखं स्थापितः।
किं कुर्यां परितो ममापि तनयानन्योऽन्यतो भेदयन्,
प्राणैर्हन्ति नियोजयत्यविनये सर्वात्मना बाधते ॥३॥

ततस्ततः।

चरः—तदो पुत्तकलत्ताइसयलजणेसु पवट्टमाणं दुक्खमवलोइय

जासूस—तब बढ़े हुए टैक्स देने में असमर्थ बंगालियों को कंपनी के अनुचरों ने खूब पीटा। इसके बाद भी धन के न होने के कारण तिगुने टैक्स के रुपयों को न देने वाले वे सब काँटों से परिपूर्ण वेल के डंडे से इस प्रकार कूटे गए कि कुछ तो मर गए और कुच मूर्च्छित हो गए।

भारतमाता (घवड़ाहट के साथ)

हाय! इनकी प्रशान्त मूर्ति को देख कर दया से परवश होकर मैंने इनको देश में सुखपूर्वक उस प्रकार रख लिया जिस प्रकार राख से ढकी हुई आग को घास की गंजी में। मैं क्या करूँ। मेरे बच्चों को एक दूसरे से लड़ा कर उनके प्राणों का अपहरण करता है, उन्हें उद्दण्डता में लगाता है, और सर्वतोभाव से यह कष्ट दे रहा है ॥ ३ ॥

जासूस—फिर स्त्री पुत्र आदि सब लोगों में प्रवर्तित दुःख को देख कर

दीणाजपुरणिवासिणो जणाओ विद्दोहियाओ संवट्टाओ । तत्थ दयारामनूरमहम्मदाओ कंपणीपुरिसगुलियाहिं पलयं गयाओ । अम्हेहिं वंगदेसीएहिं सव्वे वि तत्थ ठिआओ कंपणीपुरिसाओ विणासियाओ ।

(ततः पुत्रकलत्रादिसकलजनेषु प्रवर्तमानं दुःखमवलोक्य दीनाजपुरनिवासिनो जना विद्रोहिताः संवृत्ताः । तत्र दयाराममनूरमहम्मदौ कम्पनीपुरुषगुलिकाभिः प्रलयं गतौ । अस्माभिर्वङ्गदेशीयैः सर्वेऽपि तत्र स्थिताः कम्पनीपुरुषा विनाशिताः ।

भारत०—(सोच्छ्वासं सहर्षं च) ततस्तः ।

चरः—तदो कंपणीसेणिएहिं पुणो समाक्कमियं कंपणीराएण य थायिकरपत्तम् (इस्तमरारीपट्टा) पवट्टियं । पडिण्णायं य रण्णा, अओ परं करवड्ढी ण होस्सइ, पुव्वानुरूवं चेव करं देंतु । ततो लोगो उवसमिओ । सव्वे अप्पणो ठाणं णिवट्टियाओ ।

ततः कम्पनीसैनिकैः पुनः समाक्रान्तम्, कम्पनीराजेन च स्थायिकरपत्रम् (इस्तमरारोपत्रं) प्रवर्तिम्, प्रतिज्ञातं च राज्ञा, अतः परं करवृद्धिर्न भविष्यति, पूर्वानुरूपमेव करं ददतु । ततो लोक उपशान्तः सर्वेऽपि आत्मनः स्थानं निवर्तिताः ।

भारत०—कथं पाश्चात्त्यैः स्वाग्रहं विहाय एवं कृतम्, मन्ये कोऽप्यत्र गूढाभिसन्धिः स्यात् ।

दीनाजपुर के रहनेवाले बागी हो गए । वहाँ पर दयाराम और नूर मुहम्मद कम्पनी के आदमियों की गोलियों के शिकार हुए । हम बंगालियों ने वहाँ पर स्थित कंपनी के सारे आदमियों को मार डाला ।

भारतमाता—(टंढी सांस ले कर तथा हर्ष से) फिर ।

जासूस—इसके अनन्तर कम्पनी के आदमियों ने फिर आक्रमण किया । कम्पनीराज ने इस्तमरारी पट्टा चलाया, और राजा ने प्रतिज्ञा की कि अब इससे अधिक टैक्स की वृद्धि न होगी । पहिले के अनसार ही आप लोग टैक्स दें । इसके अनन्तर लोग शान्त हो गए । सब अपने अपने स्थान पर लौट गए ।

भारतमाता –उन लोगों ने अपने आग्रह को त्याग कर ऐसा कैसे किया ? मालूम पड़ता है कि इसमें कोई चाल होगी ।

चरः—जुत्तं तुए संभावियं, तेण रुहेलखण्डाइपदेसेहिंतो सयलधण-ग्गहणेच्छाए सव्वत्थ अप्पणो रज्जाहियारं ठावइउं सव्वाओ खिस्टधम्मा-णुगाओ कतुं चेव एव्वं कियं।

(युक्तं त्वया संभावितम्, तेन रुहेलखण्डादिप्रदेशेभ्यः सकलधनग्रहणेच्छया सर्वत्र आत्मनो राज्याधिकारं स्थापयितुं सर्वान् खिस्टधर्मानुगान् कर्तुमेव एवं कृतम्।)

भारत०—सर्वानप्यसौ स्वधर्मानुगान् कर्तुं नैव प्रभविष्यति। कथमपि मम सुता आत्मनो धर्मं नैव त्यक्ष्यन्ति। हठाद् धर्मत्याजने स्वातन्त्र्याय यतिष्यन्ते।

चरः—जुत्तं तुएणाअं। (युक्तं त्वया ज्ञातम्)

भारत०—आः कण्टकाकीर्णैर्बिल्वदण्डैर्मम पुत्रास्ताडिताः अतिदारुणोऽसौ दण्डप्रकारः, स्मृत्वा वेपते मे हृदयम्।

आः सखि! पश्य,

विक्रीय स्वसुतं विहाय भवनं त्यक्त्वा च सर्वां भुवं,
निर्वाढं कुसमृद्धदुःसहमिमं दातुं करं त्वक्षमाः,

जासूस—तुम्हारा अनुमान ठीक है। रुहेलखण्ड आदि प्रदेशों से सम्पूर्ण धन लेने की कामना से सब जगह अपने राज्याधिकार के स्थापन करने के लिये तथा सबको इसाई-मतावलम्बी बनाने के लिये उसने ऐसा किया है।

भारतमाता—सब को अपना मतावलम्बी बनाने में यह समर्थ न होगा। मेरे लडके अपने धर्म को किसी तरह भी नहीं छोड़ेंगे। बलपूर्वक धर्म के छुड़ाने पर स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न करेंगे।

जासूस— तुमने ठीक जाना।

भारतमाता—हाय काँटों से परिपूर्ण बेल के दण्डों से मेरे लड़के पीटे गए। यह दण्ड का प्रकार अत्यन्त भयानक है। इसका स्मरण कर हृदय काँपता है। हे सखी, देखो—

अपने पुत्र को बेंच कर, अपने घर को छोड़ कर तथा सम्पूर्ण पृथ्वी का परित्याग कर मेरे लड़के खूब बढ़े हुए टैक्स के देने में असमर्थ हैं, अतः आर्यों में

दण्डप्राणभियाऽपमानभयतश्चार्येषु संभाविता,
निर्गच्छन्ति कलत्रमात्रसहिता राज्यान्तरे मत्सुताः ॥४॥

हाय सखि ! पश्य ।

रुग्णान्धान् ज्वरपीडितान् जठरिणो वृद्धान्महारोगिणः
पङ्गूंश्चैव नयन्ति दण्डविधये विद्रोहशून्यानिमान् ।
किं कुर्यां धनलोलुपः क्षितिभृतां दासा ममैवात्मजाः
स्वान्भ्रातॄनपि ताडयन्ति बहुशो राज्ञां कृपाकाङ्क्षिणः ॥५॥

(ततः प्रविशति कम्पनीनियुक्तो न्यायाधिकारी गौराङ्गः। सखीसहिता भारतमाता एकत्र उपविशति ।)

गौरा०—(चरमभिलक्ष्य) केयं निगडिता ? ।

चरः—भारहमाया (भारतमाता) ।

गौरा०—दौवारिक ! प्रवेशय अभियोगिनः ।

सम्मानित ये प्राणों के दण्ड के भय से और अपमान के डर से केवल अपनी स्त्री के साथ दूसरे राज्यों में चले जा रहे हैं ॥ ४ ॥

हाय सखी, देखो देखो—

रोगी, अंधे, ज्वर से पीड़ित, दुर्बल, वृद्ध, महारोग से ग्रस्त, एवं लूले—इन विद्रोह से शून्यों को सजा देने के लिये ये ले जा रहे हैं। क्या करूँ ? धनलोभी और राजाओं के दास मेरे ही लड़के राजाओं की दया चाहने के लिये अपने भाइयों को भी खूब पीट रहे हैं ॥ ५ ॥

[इसके अनन्तर कमेटी से नियुक्त गोरे जज का प्रवेश होता है, सखी के साथ भारतमाता एक ओर बैठ जाती है]

गोरा—(जासूस को लक्ष्य कर) यह कौन बन्दिनी है ?

जासूस—भारतमाता ।

गोरा—द्वारपाल, मुकदमे वालों को बुलाओ ।

(ततः प्रविशन्ति नागरिकेण निबध्य गृहीताः, दौवारिकेण सह रुग्णान्धादयः)

गौरा०—आः क इमानदण्ड्यान् दण्डयितुं प्रभवति। नागरिक! कथमेते रुग्णान्धादयो गृहीताः?

नाग०—एते विद्रोहिणो राज्यं परिवर्त्तयितुं यतन्ते।

गौरा०—कथमेते रुग्णान्धादयो विद्रोहं कर्तुं प्रभवन्ति? एते तु पदात्पदमपि गन्तुं न प्रभवन्तीति कथं विद्रोहिणो भविष्यन्ति। अनौचित्यकारी भवान्। सर्वानिमान्मुञ्चतु। भवानपि निर्गच्छतु।

(ततो रुग्णान्धादिभिः सह निर्गतो नागरिकः)

चरः—(उपगम्य) कहं खु इमाणां णिद्दयाणां हियअपडिवुट्टी।

(कथमेषां निर्दयानां हृदयपरिवृत्तिः)

भारतमा०—अत्रापि गूढाभिसन्धिः। विद्रोहशमनम्, राज्यपरिवर्धनञ्चेति।

गौरा०—(भारतमातरमवलोक्य) कथं गाढं निगडिताऽसि?

[इसके अनन्तर पुलिस अफसर द्वारा बाँध कर पकड़े गए रोगी अन्धे आदि द्वारपाल के साथ प्रवेश करते हैं।]

गोरा—आः, इन अदण्डनीयों को कौन सजा दे सकता है। नागरिक, इन रोगी अन्धे आदि को किसलिये पकड़ा है?

पुलिस अफसर—ये विद्रोही राज्य पलटने का प्रयास करते हैं।

गोरा०—ये रोगी अन्धे आदि किस तरह विद्रोह कर सकते हैं। ये तो एक कदम भी नहीं चल सकते हैं, अतः ये विद्रोही कैसे होंगे? आप उचित करने वाले नहीं हैं। इन सब को छोड़ दें। आप भी जाँय।

[इसके अनन्तर रोगी अन्धे आदि के साथ पुलिस अफसर चला जाता है।]

गोरा—(भारतमाता को देख कर) किसने तुम्हें कसकर बेड़ी क्यों पहनाई है?

भारत०—

मदान्धैर्दुष्टपुरुषैर्दुराग्रहपरायणैः ।
स्वाधिपत्यमदोन्मत्तैः प्रापिताऽस्मि दशामिमाम् ॥ ६ ॥

गौरा०—(भारतमातरं किञ्चिच्छिथिलयति ।)

भार०—एतादृशमौदार्यं सर्वेष्वपि कम्पनीपुरुषेषु भूयात् ।

(ततो निष्क्रामति गौराङ्गः । सखीसहिता भारतमाता च)

(पुनर्हेस्टिङ्गः प्रविश्य इतस्ततोऽवलोक्य न्यायासने तिष्ठति ।)

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो । कंपणीपेसियाणि इमाणि पत्ताणि । (जयतु २ देवः । कम्पनीप्रेषितानीमानि पत्राणि)

(इति तत्सविधे स्थापयति ।)

हेस्टिङ्ग—(नन्दकुमाराभियोगपत्रमवलोक्य) (मनसि ।) आः कम्पन्या मुक्तोऽसौ, एतन्मोक्षणे न मे लोके प्रभविष्यति । अस्तु । निह्नोष्ये एतत्पत्रम् । (प्रकाशम् ।)

भारतमाता—मदान्ध, दुराग्रही, और अपनी प्रभुता के मद में उन्मत्त दुष्ट पुरुषों से मेरी यह दशा हुई है ॥ ६ ॥

[गोरा भारत माता के बन्धन को कुछ ढीला करता है ।]

भारतमाता—कंपनी के सभी आदमियों में ऐसी उदारता हो जाय ।

[इसके अनन्तर गोरा चला जाता है, और सखी सहित भारतमाता भी ।]

[फिर हेस्टिङ्ग आ कर इधर उधर देख कर न्यायासन पर बैठता है ।]

द्वारपाल—(आ कर) साहब बहादुर की जय हो । कंपनी से आए हुए ये पत्र हैं ।

[उन्हें उनके पास रखता है ।]

हेस्टिङ्ग—(नन्दकुमार के मुकदमे के पत्र को देख कर मन में) ओह, कंपनी ने इसे छोड़ दिया है। इसके छुट जाने पर संसार में मेरी प्रभुता न रहेगी । अच्छा इस पत्र को छिपाता हूँ । (प्रकाश)

दौवारिक ! नन्दकुमारमानय ।

(दौवारिको निष्क्रम्य नागरिकवाकीलनन्दकुमारैः सह प्रविशति ।)

हेस्टि०—नन्दकुमार ! न तेऽभियोगस्य पत्रं समागतम् इति प्राणदण्डः स्थिरीकृतः ।

वाकीलः—पत्रं नागतमिति प्राणदण्डः कम्पन्या न स्वीकृतः ।

हेस्टि०—नहि, नहि स्थिरः प्राणदण्डः, नाहं किमपि श्रोतुमिच्छामि नागरिक ! नयस्वैनं प्राणदण्डाय ।

नन्दकु०—सहर्षं गम्यते । एतदन्यायस्य फलं कालान्तरेण द्रक्ष्यते ।

मम मार्गानुगन्तारो भविष्यन्त्यत्र कोटिशः ।
निष्कासयिष्यसे यैस्त्वं समूलं वञ्चनापटुः ।। ७ ।।

(नागरिको नन्दकुमारं गृहीत्वा निष्क्रामति ।)

वाकीलः—अब्रह्मण्यम् । अब्रह्मण्यम् । अनार्यमाचरितम् ।

द्वारपाल, नन्दकुमार को बुलाओ ।

[द्वारपाल जाकर कोतवाल, वकील तथा नन्दकुमार के साथ आता है ।]

हेस्टिङ्ग—नन्दकुमार, तुम्हारे मुकदमे का पत्र नहीं आया, इसलिए फांसी की सजा ही स्थिर की गई है ।

वकील—पत्र नहीं आया है, इससे प्राणदण्ड (फांसी) कंपनी ने नहीं माना है ।

हेस्टिङ्ग—नहीं नहीं, फांसी ही स्थिर की है । मैं कुछ नहीं सुनना चाहता । कोतवाल, इसे फांसी के लिए ले जाओ ।

नन्दकुमार—मैं सहर्ष जाता हूँ । इस अन्याय का फल कुछ दिनों के अनन्तर तुम देखोगे ।

मेरे मार्ग का अनुसरण करने वाले यहाँ करोड़ो होंगे; उन हमारे मार्ग पर चलने वालों से तुम पूर्णतया निकाल दिए जाओगे ।। ७ ।।

(कोतवाल नन्दकुमार को पकड़ कर चला जाता है ।)

वकील—बहुत बुरा है, बहुत बुरा है । यह बहुत ही बुरा किया गया है ।

(इति वदन्निष्क्रामति)।

(दौवारिकः सभयमिव निष्क्रम्य द्वारि स्थितः ।)

हेस्टि०—(एकाकी स्थितः किमपि चिन्तयते ।)

(ततः प्रविशति कम्पनीप्रेषितः पुरुषः)

कं० पुरुषः—(दूरतोऽवलोक्य ।)

एष प्राज्यधनेप्सया बहुविधव्यापारचिन्तातुरः,
स्वर्गं नाद्रियते न चापि मनुते भीतिं क्वचिद् दुर्गतेः ।
किं तु स्वं विषयं समुन्नततरं कर्तुं सदैवेहते,
सर्वेष्वेव विभीषिकां वितनुते मृद्नाति वङ्गक्षितिम् ॥ ८ ॥

(पुनः सम्मुखमुपगम्य) विजयतां विजयतां देवः ।

हेस्टि०—आगम्यताम् । (इत्युक्त्वा आसन्द्यामुपवेशयति ।) अपि कम्पन्याः क्षेमम् ?

[यह कहता हुआ चला जाता है]

[द्वारपाल भयभीत-सा निकल कर दरवाजे पर बैठ जाता है ।]

[हेस्टिङ्ग अकेला बैठा कुछ सोच रहा है । तदनन्तर कंपनी से भेजा हुआ एक आदमी आता है ।]

कं० का पुरुष—(दूर से देखकर)

खूब धन की अभिलाषा से अनेक प्रकार के व्यापार की चिन्ताओं से व्याकुल यह न तो स्वर्ग का आदर करता है, और न कहीं नरक से ही डरता है। किन्तु अपने देश को अधिक समुन्नत बनाने की सदा ही चेष्टा किया करता है और भयानक काण्डों का करता हुआ बंगाल की भूमि को मसलता है ॥ ८ ॥

[फिर सामने जाकर] साहब बहादुर की जय हो ।

हेस्टिङ्ग—आइए (यह कह कर एक कुरसी पर बैठाता है ।) कंपनी कुशल से तो है ?

कं० पुरुष—भवत्सु साहाय्यकारिषु सत्सु कथं न क्षेमं स्यात्। परमथापि कम्पन्या व्यापारो न प्रसरतीति यथाकथंचित् त्रिंशल्लक्षाण्युपार्ज्य प्रदीयतामिति तत्रत्यैः सादरमुक्तम्, प्रेषितश्चाहम्।

हेस्टि०—(मनसि।)

व्याजात्सान्त्वनयाऽथ मानकलया लोकानिमान्मृद्नता
प्राज्यं कुप्यमकुप्यकं च वसु तत्सर्वं मयाऽऽपादितम्।
वाणिज्यं बहुधा च भारतगतं भूमेरधः प्रापितं,
किं कुर्यां कथमद्य निःस्वविषयाद् भूयो धनं प्राप्नुयाम् ॥९॥

(प्रकाशम्) महानुभाव! सर्वोऽप्यस्य देशस्य व्यापारो विनष्टप्राय एव। कथं नाम निःस्वादस्माद्देशादेतावद्धनमुपागतं स्यात्, सर्वेभ्योऽपि हठाद् गृहीत्वा पूर्वमेव प्रेषितम्।

कं० पुरुष—कम्पनीपुरुषैः सबहुमानमुक्तम्, निश्चितं च तैरवश्यमेव

कं० पुरुष—आप लोगों के सहायक रहने पर, कुशल कैसे न होगी, परन्तु फिर भी कंपनी का व्यापार नहीं फैलता, इस लिए किसी तरह तीस लाख रुपये पैदा कर दीजिये। यह कंपनी वालों ने कहा है और मुझे भेजा है।

हेस्टिङ्ग—(मन में)

व्याज से, आश्वासन से और मान की कला से मैंने सोना चाँदी आदि सम्पूर्ण धन की प्राप्ति कर ली, भारतीय व्यापार को बहुधा मैंने मिट्टी में मिला दिया, अब मैं क्या करूँ कि इस निर्धन देश से फिर मुझे धन का अधिगम हो ॥ ९ ॥

(प्रकाश) महाशय, इस देश का सम्पूर्ण व्यापार नष्टप्राय है, इस निर्धन देश से इतना धन कैसे मिले, क्योंकि सभी से बलपूर्वक छीन कर, धन मैंने पहले ही भेज दिया है।

कं० पुरुष—कंपनी के आदमियों ने आपके प्रति अत्यन्त संमान प्रदर्शन

भवानिदं कार्यं संपादयिष्यति । त्रिंशल्लक्षाणामादानं तु भवतां वामहस्तक्रीडनमेव ।

हेस्टि०—अतिकठिनमेतावद्धनोपादानम् । अधुनैव निर्धनीकृतोऽसौ देश इति कथमेतावद्धनोपादानं स्यात् !!! (पुनः किञ्चिद्विचार्य ।)

..कः कोऽत्र भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो । (जयतु जयतु देवः)

हेस्टि०—गङ्गासिंहमानय ।

दौवा०—जं देवो आणवेदि । (यद्देव अज्ञापयति) (इति निष्क्रम्य दृष्ट्वा च)

आः गङ्गासिंहो सुयं आगच्छइ (तमुपसृत्य) देवो भवन्तं दंसिउं अहिलसइ ।

(आः गङ्गासिंहः स्वयमागच्छति । देवो भवन्तं द्रष्टुमभिलषति)

(इति तेन सह प्रविशति ।)

हेस्टि०—दौवारिक ! स्वनियोगमशून्यं कुरुष्व ।

इति निष्क्रान्तो दौवारिकः ।

पूर्वक यह कहा है, और निश्चय किया है कि आप यह कार्य कर देंगे। तीस लाख रुपये लेना तो आपके बायें हाथ का खेल है ।

हेस्टिङ्ग—इतना धन पाना अत्यन्त कठिन है । अभी ही यह देश निर्धन किया गया है । इस लिए इतना धन किस भाँति प्राप्त हो ! (फिर कुछ विचार कर,) कोई है ?

द्वारपाल—साहब बहादुर की जय हो ।

हेस्टिङ्ग—गङ्गासिंह को बुलाओ ।

द्वारपाल—जो आज्ञा । (बाहर जा कर और देख कर) अरे गङ्गासिंह स्वयं ही आ रहे हैं । साहब बहादुर आपसे मिलना चाहते हैं ।

[उसके साथ प्रवेश करता है ।]

हेस्टिङ्ग—द्वारपाल, अपने काम पर जाओ । (द्वारपाल चला जाता है)

गङ्गा०—किमाज्ञापयितुमनुगृहीतोऽयं जनः ?

हेस्टि०—कम्पनीपुरुषैस्त्रिंशल्लक्षाणि प्रार्थितानि, एतत्संपादने भवतां बाढं पारितोषिकलाभो भविष्यति ।

गङ्गा०—पञ्चषलक्षाणि तु यथाकथंचित्संपादयितुं शक्यन्ते परं तु त्रिंशल्लक्षाणीत्यधिकम् ।

(ततः प्रविशति रुहेलखण्डावधवृत्तपरिज्ञानाय प्रेषितो रामनाथचारः)

चारः—(मनसि) अहो अज्ज वहुधणलाहलिच्छाए अप्पणो रुहेलखण्डाइदेसम्मि कम्पणीपहुत्तं संपाएस्सामि । जदत्थु अम्हे धणी सुही य होस्से ।

(अहो अद्य वहुधनलाभलिप्सया आत्मनो रुहेलखण्डादिदेशे कम्पनी-प्रभुत्वं संपादयिष्यामि । यदस्तु, अहं धनी सुखी च भविष्यामि ।)

(प्रकाशम्)

जेदु जेदु देवो । (जयतु जयतु देवः ।)

हेस्टि०—अहो रामनाथः संप्राप्तः, सर्वमतः परं सेत्स्यति । रामनाथ ! कथय तावद् रुहेलखण्डप्रदेशस्य वृत्तान्तम् ।

गंगासिंह— कौन सी आज्ञा देने के लिये इस मनुष्य पर कृपा की गई है ?

हेस्टिङ्ग—कंपनी के आदमियों ने तीस लाख रुपये मांगे हैं । इसके सम्पादन में आप को खूब इनाम मिलेगा ।

गङ्गासिंह—पाँच छ लाख तो किसी प्रकार मिल सकते हैं परन्तु तीस लाख तो अत्यन्त अधिक हैं ।

[इसके अनन्तर रुहेलखण्ड और अवध के समाचार जानने के लिये भेजा गया रामनाथ नामक गुप्त दूत आता है]

जासूस—(मन में) अहो आज बहुत धन की प्राप्ति की कामना से रुहेल-खण्ड आदि देशों में कंपनी की प्रभुता करा देंगे, चाहे जो हो, मैं तो धनी और सुखी हो जाऊँगा । (प्रकाश) साहब बहादुर की जय हो ।

हेस्टिङ्ग—अहो रामनाथ, आगए, अब सब सिद्ध हो जायगा । रामनाथ रुहेलखण्ड प्रान्त का समाचार सुनाओ ।

राम०—तत्थ सव्वे चेव वत्थवियधम्माधम्मनाणसुण्णाओ अण्णो-ण्णसमिद्धिमसहमाणाओ परप्परविरोहिणो संवट्टन्ते। अविय तत्थ वहुओ चेव धणसमिद्धितिरक्कियकुवेरविहआओ सुराढुरोदरसेइणो तुंदपरिम्मिआओ अहोरत्तं सुवंति।

(तत्र सर्वे एव वास्तविकधर्माधर्मज्ञानशून्या अन्योन्यसमृद्धिमसहमानाः परस्पर-विरोधिनः संवर्त्तन्ते अपि च, तत्र वहव एव धनसमृद्धितिरस्कृतकुवेरविभवा सुरा-दुरोदरसेविनस्तुन्दपरिमृजाः अहोरात्रं स्वपन्ति।

हेस्टि०—नातः परं प्रतीक्षितव्यम्।

स्वकीयसैन्यं सोत्साहं विधायाडम्वरान्वितम्।
रुहेलखण्डस्यास्माभिर्विजयायाभिषेण्यताम्॥ १०॥

गङ्गासिंह! गम्यताम्, शीघ्रं सर्वान् सज्जीकृत्य स्वयं सज्जीभूय चागम्यताम्।

गङ्गा०—यदाज्ञापयति देवः। (इति निष्क्रम्य सर्वान्सज्जीभवितुमाज्ञाप्य सज्जीभूय च समागतः।)

रामनाथ—वहाँ पर सभी वास्तविक धर्म और अधर्म के ज्ञान से शून्य हो, दूसरों की समृद्धि न सह सकने के कारण आपस में विरोधी हो रहे हैं। वहाँ पर बहुत से अपने धन दौलत से कुवेर के ऐश्वर्य को तिरस्कार कर, मदिरा और द्यूत का सेवन कर तोंद पर हाँथ फेरते हुए आलस्य और मद में दिन रात सोते रहते हैं।

हेस्टिङ्ग—अब और इन्तजार नहीं करना चाहिये।

जोश के साथ अपनी सेना को आडम्बर से परिपूर्ण कर रुहेलखण्ड पर विजय करने के लिये हमें चढ़ाई कर देनी चाहिये॥ १०॥

गङ्गासिंह जाओ, शीघ्र ही सबको तैयार कर और स्वयं तैयार हो कर आ जाओ।

गङ्गासिंह—जो आज्ञा। [बाहर जा कर सबको तैयार होने की आज्ञा दे कर और स्वयं तैयार हो कर आता है]

हेस्टि०—किं किं सज्जीकृतम्।

गङ्गा०—

शतं शतघ्न्योऽसियुताः सहस्रं हयान्विताश्चापि सहस्रमेव।
चतुःसहस्रं त्वतिशौर्ययुक्ताः योधाः समेतास्तुपकान्विताश्च ॥११॥

हेस्टि०—आः तृणप्रायास्ते, पर्याप्तमेतावदस्माकं बलम्।

परस्परं भेदयुक्ता अन्योन्यद्रोहकारिणः।
त्रिभिरेव सहस्रैस्ते विजेतव्या रणाङ्गणे ॥१२॥

(ततो गङ्गासिंहस्य सैन्याधिपतित्वे प्रचलितो हेस्टिङ्गः। रुहेलखण्डमुपेत्य विजयते।)

(पटीक्षेपः)

(एकतः स्थिता भारतमाता रोदिति)

ने० सखी—(उपेत्य) किण जाएल (किं खलु जातम्।)

हेस्टिङ्ग—क्या क्या तैयार किया ?

गङ्गासिंह—

सौ शतघ्नी (प्राचीन काल का एक अस्त्र) एक हजार खड्गधारी सैनिक, एक हजार घुड़सवार एवं अत्यन्त वीरता से युक्त चार हजार तोप वाली सेना एकत्रित है ॥ ११ ॥

हेस्टिङ्ग—आः, वे कुछ भी नहीं हैं, हमारी इतनी सेना पर्याप्त है। आपस में भेद से संयुक्त तथा एक दूसरे से द्रोह करने वाले ये संग्राम में तीन ही हजार से जीत लिये जायंगे ॥ १२ ॥

[इसके अनन्तर गङ्गासिंह के सेनापतित्व में हेस्टिङ्ग जाता है, और रुहेलखण्ड में पहुँच कर उसे जीत लेता है।]

[परदा गिरता है]

[एक ओर स्थित भारतमाता रोती है।]

ने० सखी (आकर) क्या हुआ ?

भारत०—हला सखि ! अत्र रुहेलखण्डे हेस्टिङ्गस्याज्ञया महाननर्थः संजातः । मया स्वचक्षुषा दृष्टो नाद्यापि विस्मर्यते ।

अत्र हि—

कल्पान्तप्रचलन्महाघनघटाघोरायमाणस्वना
निर्मर्यादसमुद्रभीमनिनदप्रोत्तुङ्गधांकारिकाः ।
मध्ये रोदसि नीलधूमवसनप्रस्तारिका मत्सुते-
ष्वत्यौग्रसुज्वलनप्रवर्षणकृतो गोलान् शतघ्न्यः शतम् ॥१३॥

ततः सहस्रशो मदीयतनया हताः ।

ने० स०—फिर २ (ततस्ततः ।)

भारत०—पुनःसर्वान्विजित्य वह्निना दग्धा ग्रामनगरादयो नाद्यापि स्मृतिपथादपसरन्ति ।

तत्र—

वह्निर्दिक्ष्वग् धगधगरवं वर्द्धमानो व्यधत्त,
ज्वालामाली चटिति निनदं क्षोभयन् द्रागकार्षीत् ।

भारतमाता—सखी, इस रुहेलखण्ड में हेस्टिङ्ग की आज्ञा से महान् अनर्थ हो गया है । अपनी आखों से देखा गया वह दृश्य आज भी नहीं भूलता ।

वहाँ तो प्रलय में चलते हुए घनघोर घटाओं के गरजने के समान भयानक ध्वनि करने वाली, मर्यादा विरहित प्रलयपयोधि के भयानक शब्द के समान जोर से धाँय २ करने वाली, तथा पृथ्वी और आकाश में अन्धकार रूपी नीले वस्त्र को फैलाने वाली शतघ्नियों ने आग बरसाने वाले सैकड़ों गोलों की बौछार चारो ओर से हमारे पुत्रों पर की ॥ १३ ॥

इसके अनन्तर हजारों मेरे लड़के मारे गए ।

ने० स०—फिर

भारतमाता—फिर सब को जीत कर उनसे अग्नि द्वारा जलाये गए ग्राम नगर आदि आज भी स्मरण से ओझल नहीं होते । वहाँ पर—

बढ़ती हुई आग ने चारों ओर धग् धग् ध्वनि की ज्वाला रूप में परिणत

सर्वान् ग्रामान् नगरसहितान्भस्मभाञ्जायमानान्,
हा हा मुक्त्वा मम सुतनयाः खेदयुक्ताः प्रयान्ति ॥१४॥
हा किं पुनर्वक्तव्यम्। महाक्रूरतरा ह्येते। एभिः सर्वं विनाशितम्।
(इत्युच्चस्वरेण रोदिति)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति हेस्टिङ्गसविधे गङ्गासिंहः)

गङ्गा०—जयतु जयतु देवः।

हेस्टि०—किमतः परं विधेयम्।

गङ्गा०—एष शुजाउद्दौलानामा यवनश्चत्वारिंशल्लक्षै रुहेलखण्डं क्रीणाति।

हेस्टि०—(मनसि) तावत्त्रिंशल्लक्षैः कम्पन्याः कार्यनिर्वाहो भविष्यति। अहं व्याजान्तरेण सन्धिदूषणं विधाय पुनरेनं विजित्य च स्वायत्तीकरिष्यामि। (प्रकाशम्) तमानय।

हो कर खलमली मचाती हुई उसने चट् चट् आवाज की, नगरों के साथ भस्मीभूत सम्पूर्ण ग्रामों को छोड़ कर, हाय, मेरे लड़के खिन्न हो चले जा रहे हैं॥ १४॥

हाय, फिर क्या कहें, ये महा निर्दयी हैं, इन्होंने सब नष्ट कर दिया।

(जोर से रोती है)

[परदा गिरता है।]

[इसके अनन्तर हेस्टिङ्ग के पास गङ्गासिंह आता है।]

गङ्गासिंह—साहब बहादुर की जय हो।

हेस्टिङ्ग—इसके अनन्तर क्या करना है?

गङ्गासिंह—यह शुजाउद्दौला नामक मुसलमान चालीस लाख रुपयों में रुहेलखण्ड खरीदता है।

हेस्टिङ्ग—(मन में) तीस लाख रुपयों से तो कंपनी का काम चलेगा। फिर किसी बहाने के सन्धि में दोष दिखा कर और उसे जीत कर अपने अधीन कर लूँगा। (प्रकाश) उसे बुलाओ।

(गङ्गासिंहो निष्क्रम्य शुजाउद्दौलायवनेन सह प्रविशति)

हेस्टि०—किं भो ! राजन् ! किञ्चिदधिकं दीयताम् ।

शुजा०—नातः परमधिकं दातुं शक्नोमि ।

हेस्टि०—एतदेव दीयताम् ।

परन्तु

यदि प्रजास्वनाचारमकार्यं वा विधास्यसि ।
तदा स्वस्याधिपत्येन रहितस्त्वं भविष्यसि ॥१८॥

(इति लिखित्वा स्वमुद्राङ्कितं विधाय तस्मै ददाति, ततः स गङ्गासिंहेन सह निष्क्रान्तः ।)

(ततः प्रविशति कम्पनीपुरुषः)

हेस्टि०—गृहीष्व इमानि त्रिंशल्लक्षाणि । मन्ये कम्पन्याः सम्यक् कार्यनिर्वाहो भविष्यति !

कं० पुरुषः—आः सर्वमतः परं संपत्स्यते (इति गृहीत्वा स निष्क्रान्तः)

(ततः प्रविशति गङ्गासिंहः)

[गङ्गासिंह जाकर शुजाउद्दौला नामक मुसलमान के साथ आता है]

हेस्टिङ्ग—राजन्, कुछ अधिक दीजिये ।

शुजा०—इससे अधिक मैं नहीं दे सकता ।

हेस्टिङ्ग— इतना ही दीजिये, परन्तु—

यदि तुम प्रजा में अनाचार अथवा कुकार्य करोगे तो तुम अपने प्रभुत्व से रहित हो जाओगे ॥ १५ ॥

[लिख कर और अपनी मोहर कर, उसे देता है, इसके अनन्तर गङ्गासिंह के साथ वह चला जाता है ।] (इसके अनन्तर कंपनी का आदमी आता है)

हेस्टिङ्ग—इन तीस लाख रुपयों को लो । मेरी समझ में इससे कंपनी का ठीक ठीक काम चल जायगा ।

कं० पुरुष—आः, इससे आगे सब कुछ हो जायेगा ।

[ले कर वह चला जाता है]

गङ्गा०—

नये कविर्बुद्धिमतां वृहस्पतिः पृथासुतः शौर्यभृतां रणाग्रणीः ।
विपत्तिकाले वसुदेवनन्दनः सदा जय त्वं नृप ! भूमिमण्डले ॥१७॥

(इत्युक्त्वा मञ्चे उपविशति)

हेस्टि०-कथमप्ययवधप्रदेशो विजेतव्यः । अलकाकल्पस्यास्य स्वायत्ती-करणे तुभ्यमपि वहु धनं दास्यामि ।

गङ्गा०—श्रूयते खल्ववधाधिपतिः परमवुद्धिशाली सुप्रवन्धकर्त्ता च ।

न चास्य राज्ये क्वचिदस्ति तस्करो
न वा मृषा कोऽपि च भाषते क्वचित् ।
न सेवते कोऽपि दुरोदरं जनः
स कोविदैः साधुजनैश्च संगतः ॥१८॥

किञ्च—

(इसके अनन्तर गङ्गासिंह आता है ।)

गङ्गासिंह—हे राजन्, आप नीति शास्त्र में शुक्राचार्य हैं, बुद्धिमानों में वृहस्पति हैं, वीरों में श्रेष्ठ अर्जुन हैं, और विलक्षण कार्य करने में आप श्री कृष्ण हैं, अतः भूमण्डल में सदा आपकी जय हो ॥ १७ ॥

[यह कह कर मञ्च पर बैट जाता है ।]

हेस्टिङ्ग—अवध प्रान्त किसी तरह जितना चाहिये । कुवेरपुरी के सदृश इसके अधीन होने पर तुम्हें वहुत सा धन देगें ।

गङ्गासिंह—सुनते हैं कि अवध का नवाव अत्यन्त बुद्धिशाली है और सुप्रवन्ध करनेवाला है ।

इसके राज्य में कहीं पर भी चोर नहीं है, कोई कभी भी झूट नहीं बोलता, कोई मनुष्य जुआ नहीं खेलता । वह विद्वानों तथा सज्जनों के साथ रहता है ॥१८॥

और भी—

योद्धारः शतशोऽस्य सन्ति विषये शौर्येण ये संगता,
भक्ता नीतिविदः प्रभोः कृतिविधौ प्रेम्णाऽनुगाः सर्वदा।
भिन्ना नैव न चाप्यभिन्नहृदयाः प्राणैरपि स्वं धनं,
राजानं स्वभुवं च बन्धुसहिता रक्षन्ति सर्वात्मना ॥१९॥

हेस्टि०—यथाकथञ्चिदस्य विजयः कर्त्तव्यः । श्रूयते खलु तत्र कुवेरसंपत्तेरप्यधिकतरा सम्पत्तिः ।

गङ्गा०—इदं तु सत्यमेव, परं तस्य विजयोऽतिदुष्करः ।

हेस्टि०—श्रूयते तद्देशस्याधिपती राजा मृतः, तत्पुत्रश्च विलासिताप्रियः ।

गङ्गा०—सर्वं चैतदेवमेव, परं तु प्रजानां भक्तिवशान्नैव किंचित्कर्तुं पार्यते ।

हेस्टि०—इदं तावद्भवतु ।

इसके देश में सैकड़ों योद्धा हैं, जो वीरता से युक्त हैं, भक्त हैं, नीति के जानने वाले हैं, और प्रेम से प्रभु (मालिक) के कार्य करने लिये सदा अनुगामी हैं । ये न तो भिन्न हैं और न अभिन्नहृदय । ये बन्धुबान्धवों के सहित पूर्ण रूप से अपने धन की, अपने राजा की और अपनी भूमि की रक्षा अपने प्राणों की बाजी लगा कर करते हैं ॥ १९ ॥

हेस्टिङ्ग—किसी तरह इस पर विजय करनी चाहिये । सुनते हैं कि वहाँ पर कुवेर से भी अधिक सम्पत्ति है ।

गङ्गासिंह—यह तो सत्य है, पर इसका जीतना अत्यन्त कठिन है ।

हेस्टिङ्ग— सुनते हैं कि वहाँ का नवाब मर गया है, और उसका लड़का ऐयाश है ।

गङ्गासिंह—यह सब ऐसा ही है, परन्तु प्रजा की भक्ति के कारण कुछ भी नहीं कर पाते ।

हेस्टिङ्ग—इतना ही सही,

सुतमस्य विभेद्यैव साहाय्यव्याजसंगताः ।
विधास्यामः स्वाधिपत्यं ग्रहीष्यामोऽखिलं धनम् ॥१९॥

(पुनरुत्थाय कर्णे एवमेवेति ब्रवीति) (ततो निष्क्रान्तो गङ्गासिंहः)
(अथ प्रविशति राजपुरुषगृहीतः कश्चित् श्रेष्ठी)

राजपु०—महाराज । अयं कम्पन्या विरुद्धमाचरति ।

हेस्टि०—अरे ! कम्पनीद्रोहिन् ! किमर्थं नन्दकुमारानुगामी भवितुमभिलषसि ?

श्रेष्ठी--महाराज ! तेन तु भवतो विरुद्धमाचरितम्, मया तु नैव किञ्चिद्विधीयते ।

हेस्टि०—तर्हि कम्पन्याः कथं विरुद्धमाचर्यते ?

श्रेष्ठी—महाराज ! एते सहस्राण्युत्कोचं गृहीत्वापि व्यापारकरणाया-स्मान्नानुमन्यन्ते, लक्षाधिपतयोऽपि वयं निर्धनाः संवृत्ताः । महान्ति

इसके लड़के को फोड़ कर सहायता के व्याज से मिल कर हम लोग अपनी प्रभुता जमायेंगे और सम्पूर्ण धन को ले लेंगे ॥ १९ ॥

[फिर उठ कर कान में 'इस तरह' यह कहता है, तदनन्तर गङ्गासिंह चला जाता है ।]

इसके अनन्तर पुलिस द्वारा पकड़ा गया एक सेठ आता है ।]

पुलिस—साहब बहादुर, कंपनी के विरुद्ध यह आचरण करता है ।

हेस्टिङ्ग—अरे कंपनी के द्रोही, नन्दकुमार के अनुगामी क्यों होना चाहते हो ?

सेठ—साहब, उसने तो आपके विरुद्ध आचरण किया था, और मैं तो कुछ भी नहीं करता ।

हेस्टिङ्ग—तो कंपनी के विरुद्ध किस भाँति आचरण करते हो ?

सेठ—साहब, हजारों की घूस ले कर ये लोग हमें व्यापार करने की अनुमति नहीं देते, लक्षाधिपति भी हम निर्धन हो गए हैं । बड़े बड़े नगर खेड़े हो गए

नगराणि ग्रामटिकाः संजाताः । न वयमुत्कोचं दास्यामः, नापि व्यापारं करिष्यामः, अयमेवास्माकमपराधो, यदुत्कोचो न दीयते ।

हेस्टि०—श्रेष्ठिन्! गच्छ, निर्दोषो भवान्। अहं कम्पनीसविधे लेखिष्यामि, यतो नैव कम्पन्येवमनार्यमाचरिष्यति । राजपुरुष! त्वमपि गच्छ ।

(ततो निष्क्रान्तौ श्रेष्ठिराजपुरुषौ)

(ततः प्रविशति स्वकीयानुचरेण राजकुमारं विभेद्य तेन सह हेस्टिङ्गसविधे गङ्गासिंहः ।)

कुमारः—

कुशाग्रबुद्धिर्बलशौर्यशाली न्यायानुगस्त्वं परदुःखहारी ।
लोकेष्विमां ते परमां प्रसिद्धिं श्रुत्वैव दीनः शरणं प्रपन्नः ॥२०॥

हेस्टि०—किन्तेऽभिमतम् ।

कुमारः—अस्मन्मातुरधिकारे सर्वं धनं वर्त्तते, न मह्यं किञ्चिदपि ददातीति त्वां शरणमागतोऽस्मि ।

हैं। न हम घूस देंगे और न व्यापार करेंगे। यही हमारा अपराध है कि घूस नहीं देते।

हेस्टिङ्ग—सेट जी, जाइये, आप निर्दोष हैं, मैं कंपनी के पास लिखूंगा, जिससे कंपनी इस प्रकार अनाचार नहीं करेगी। पुलिस, तुम भी जाओ।

[इसके अनन्तर सेठ और पुलिसमैन चले जाते हैं।]

[तदनन्तर अपने नौकर से राजकुमार को फोड़ कर, उसके साथ हेस्टिङ्ग के समीप गङ्गासिं आता है।]

कुमार—आप कुशाग्र बुद्धि हैं, बल और वीरता से सम्पन्न हैं, न्यायमार्गानुगामी हैं और दूसरों के दुःख को दूर करने वाले हैं। लोगों में आपकी यह परम प्रसिद्धि सुन कर दीन मैं आपके शरण आया हूँ॥ २० ॥

हेस्टिङ्ग—तुम क्या चाहते हो?

कुमार—मेरी माता के अधिकार में सारा धन है। वह मुझे कुछ भी नहीं देती। इसलिये मैं आपके शरण में आया हूँ।

रक्ष मां जहि वा प्राप्तं शरणागतवत्सल !
दापयित्वाऽधिकारं मे स्वभागमुपयास्यसि ॥ २१ ॥

हेस्टि०—गङ्गासिंह ! दापयस्वैतदधिकारम् ।

गङ्गा०—यथाऽऽज्ञापयति देवः [इति निष्क्रम्य सज्जीभूय आगत्य च हेस्टिङ्गराजकुमाराभ्यां सह प्रचलितः]

हेस्टि०—[स्वमङ्गुल्या निर्दिशन्] कुमार ! कियदस्मै दास्यसि ?

कुमारः—यद्भवन्तमुचितं प्रतिभाति, तन्मह्यं देहि । अन्यद्भवतामेव ।

हेस्टि०—तथाऽस्तु ।

पटीक्षेपः ।

(अथ हेस्टिङ्गगङ्गासिंहकूटपालाः अवधराजस्य कोशागारात्सर्वं धनं गृह्णन्ति, यवनराजमातरं च सर्वाभरणदानाय भर्त्सयन्ति । सा किञ्चिन्नैव ददाति । ततः कुतश्चित्कशायाश्चटाकशब्दः श्रूयते, सोद्विजते ।)

हे शरण में आए हुए लोगों पर कृपा करनेवाले, आप के पास आए हुए मेरी रक्षा कीजिये अथवा मेरी परित्याग कीजिये । मेरे अधिकार को दिलाने पर आपको आपका हिस्सा मिल जायगा ॥ २१ ॥

हेस्टिङ्ग—गङ्गासिंह, इसका अधिकार दिला दो ।

गङ्गासिंह—जो हजूर की आज्ञा ।

[बाहर जाकर तैयार हो कर और फिर आकर हेस्टिङ्ग और राजकुमार के साथ जाता है ।]

हेस्टिङ्ग—कुमार, इसको कितना दोगे ?

कुमार—जो आपको जचे, उतना मुझे दीजियेगा, अवशिष्ट आपका ही है ।

हेस्टिङ्ग—बहुत अच्छा । [परदा गिरता है ।]

[इसके अनन्तर हेस्टिङ्ग, गंगासिंह और कोतवाल अवधराज के सब धन को ले लेते हैं, सम्पूर्ण आभूषण दे देने के लिए नवाब की माता को भी डाँटते हैं वह कुछ भी नहीं देती । कहीं से कोड़े का चटाक शब्द सुनाई देता है । वह घबड़ा उठती है,]

गङ्गा०—

क्किन्ते मौक्तिकशालिभिर्मरकतप्रोद्भासिभिश्चाङ्गदैः ।
क्किं वा शोणमयूखपद्ममणिमद्ग्रैवेयकाडम्बरैः ।
व्यर्थं किन्तु दधासि रत्नजटितां श्रोणात्रिमां मेखलां,
शीघ्रं स्वीयकरेण साधु सकलं प्रोत्तार्य मे दीयताम् ।।२२।।

राजमाता—हा हा किं धृतान्यपि मदीयाभरणान्युत्तारयसि? हा मृताऽस्मि । रक्ष माम् । (इतस्ततोऽवलोक्य) हा मदीयरक्षका अपि निबद्धाः ।

(गङ्गासिंहः तस्या उपरि कशया पुनश्चटाकशब्दं करोति ।)

राजमाता—हा मृताऽस्मि ।

हेस्टि०—शीघ्रमुत्तार्य दीयताम् । अलं ताडनदुःखसहनेन ।

(सर्वा राजमातरो रुदत्यो भूषणान्युत्तार्य ददते ।)

गङ्गासिंह—मोतियों से समन्वित, और पन्ना रत्नों से चमकते हुए इन बाजूबंदों से तुम्हें क्या लाभ है, लाल कान्ति वाले लाल रत्नों से जटित इन गुलूबन्दों से तुम्हें क्या ? रत्नों से जड़ी हुई इस करधनी को कमर में व्यर्थ ही धारण करती हो । अपने हाथ से शीघ्र ही भलीभाँति उतार कर सब मुझे दे दो ।। २२ ।।

राजमाता—हाय क्या पहने हुए भी मेरे गहने उतराओगे ? हाय मरी, मेरी रक्षा करो । (इधर उधर देख कर) हाय मेरे रक्षक भी बाँध दिये गए हैं ।

(गङ्गासिंह उसके ऊपर फिर कोड़े से चटाक शब्द करता है ।)

राजमाता—हाय, मर गई ।

हेस्टिङ्ग—शीघ्र ही उतार कर दे दो, मार खाने के कष्ट को क्यों व्यर्थ ही सहती हो ?

[सब राजमातायें रोती हुई आभूषणों को उतार कर दे देती हैं ।]

गङ्गा०—
किमूर्मिकाभिर्मुकुटेन किं वा स्यात्कुण्डलैर्वा किमु तालपत्रैः।
किमर्द्धहारैः करभूषणैश्च सर्वाण्यमून्याभरणानि दत्त ॥२३॥

(ततो रुदत्यः सर्वाः स्त्रियः स्वाभरणानि ददते।
गृहीत्वा निष्क्रान्ता हेस्टिङ्गगङ्गासिंहकूटपालः।)

[पटीक्षेपः।]

(ततः प्रविशति कलिकातायां स्थितो गङ्गासिंहद्वितीयो हेस्टिङ्गः।)

हेस्टि०—कियदेतन्मूल्यं स्यात्?

गङ्गा०—कोटेरप्यधिकं मूल्यमेषां स्यादिति मे मतिः।
एतद्देशप्रभुत्वेन गौरवं ते भविष्यति ॥ २४ ॥

हेस्टि०—एवमेवैतत् त्वमप्येतान्याभरणानि गृहाण। (इति तस्मै कानिचिदाभरणानि ददाति) गङ्गासिंह! अहमेनं राजकुमारं नाममात्र·

गङ्गासिंह—इन ऊर्मिकाओं से, मुकुटों से, कुण्डलों से, तालपत्रों से, अर्ध हारों से और हाथ के आभूषणों से तुम्हें क्या लाभ है? इन आभूषणों को उतार कर दे दो ॥ २३ ॥

[तदनन्तर रोती हुई सब स्त्रियाँ अपने २ आभूषणों को दे देती हैं। उनको ले कर हेस्टिङ्ग, गङ्गासिंह और कोतवाल चले जाते हैं।]

(परदा गिरता है।)

(इसके अनन्तर कलकत्ता में हेस्टिङ्ग के साथ गङ्गासिंह आता है।)

हेस्टिङ्ग—इनकी क्या कीमत होगी?

गङ्गासिंह—मेरी बुद्धि से इनकी कीमत एक करोड़ से भी अधिक होगी। इस देश पर प्रभुता के कारण आपका सम्मान होगा ॥ २४ ॥

हेस्टिङ्ग—ऐसा ही है। तुम भी इन आभूषणों को लो [उसे कुछ गहने देता है।] गङ्गासिंह, मैं इस राजकुमार को नाम मात्र का ही नवाब बना कर

तस्तदधिपतिं विधाय कम्पन्याः प्रभुत्वं स्थापयिष्यामि । किञ्च समस्त भारतवर्षे यथा कम्पन्याः प्रभुत्वं स्यात्तथाऽस्माभिः कर्त्तव्यम् ।

गङ्गा०—एवमेव करिष्यामि ।

(ततो निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति श्रीसर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाददीक्षितकृतौ भारतविजयनाटके चतुर्थोऽङ्कः ।

पञ्चमोऽङ्कः

विष्कम्भः ।

(ततः प्रविशतो भारतमातुर्मोक्षणाय भविष्यन्त्यां समितौ जिगमिषू सैनिकौ)

प्रथमः सैनिकः—मित्र ! कम्पनी सर्वमपि भारतं स्वायत्तीकृत्य धर्ममप्यभिबुभूषति ।

कंपनी का आधिपत्य स्थापित करूँगा । और सम्पूर्ण भारतवर्ष में जिस तरह कंपनी की प्रभुता हो जाय, वैसा हमें करना चाहिये ।

गङ्गासिंह—ऐसा ही करूँगा ।

[सब चले जाते हैं,]

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि महामहोपाध्याय पं० मथुरा प्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित भारतविजय का चतुर्थ अंक समाप्त ।

पञ्चम अंक

विष्कम्भक

[तदनन्तर भारत माता को छुटकारा दिलाने के लिये होने वाली सभा में जाने की अभिलाषा से दो सैनिक आते हैं ।]

प्रथम सैनिक—अरे कंपनी सम्पूर्ण भारत को अपने अधीन कर धर्म पर भी हमला करना चाहती है ।

द्विती०—एतदनुचरा बुद्धिमन्तः शौर्यसम्पन्नाश्च ।

प्रथ० आः क्व तैः शौर्यं विहितम्? नन्दकुमारोऽपि हेस्टिङ्गेन कम्पन्याः पत्रं निह्नुत्य मिथ्यैव घातितः ।

द्विती०—श्रूयते हेस्टिङ्गोऽभ्ययुज्यत ।

प्र०—(विहस्य) भारतीयानां प्रतारणार्थं मायैषा । अभियोगामुक्तः । उक्तञ्च-कम्पन्या लाभार्थमनेन युक्तायुक्तं यदपि विहितं, तत्समुचितमेव । अवधराजपत्नीनां लुण्ठनमपि समर्थितम्, पारितोषिकं च दत्तम् । किमतः परमन्याय्यं स्यात् ।

द्विती०—सत्यम्, अनर्थकारिणः खल्वेते, कथमेतेभ्यो भारतस्य मोक्षः स्यात्?

प्रथमः—मायाविनामेषां श्येनकपोतयोरिव विचित्रैव माया । यदा भारतीया निराशा उद्विग्नाश्च भवन्ति तदा श्येनः पक्षाविवैते

द्वितीय सैनिक—इनके नौकर बुद्धिमान हैं और वीरता से युक्त हैं ।

प्र०—सैनिक—अरे इन्होंने बहादुरी कहाँ दिखाई है । हेस्टिङ्ग ने कंपनी के पत्र को छिपा कर नन्दकुमार को योंही मरवा डाला है ।

द्वि० सैनिक—सुनते हैं कि हेस्टिङ्ग पर मुकदमा चला था ।

प्र० सैनिक—(हंस कर) भारतीयों को धोखा देने के लिये यह तो इनकी माया है । मुकदमे से वह बरी हो गया । ऐसा कहा गया है कि कंपनी के लाभ के लिये इसने जो कुछ गलत सही किया, वह सब ठीक ही है । अवध की वेगमों के लूटने का भी समर्थन किया गया है, और इसे इनाम भी दिया गया है । इससे बढ़ कर क्या अन्याय होगा ।

द्वितीय सै०—ये तो नृशंसाचारी हैं । इनसे भारतवर्ष का छुटकारा कैसे होगा ?

प्रथम सै०—इन मायावियों की माया बाज और कबूतर के समान विचित्र ही है । जब भारतीय निराश हो घबड़ा जाते हैं । तब, जिस प्रकार बाज पंखों

वाग्जालं संचाल्य समाश्वासयन्ति । भारतीयाश्चैतेषां मुखोन्मुखा दासा इव तिष्ठन्ति ।

द्विती०- एभिस्तु सिन्धुप्रदेशोऽपि जितः ।

प्रथ०—नहि नहि, सोऽपि सन्धिं विधाय व्याजान्तरेण पुनः पुनर्दूषयित्वा उपजापं चोत्पाद्य स्वायत्तीकृतः, अस्माकमसाहाय्येन युद्धन्तु कुत्रापि न कृतम् । तत्रत्यधनिनां वनिता अपि विलुण्ठिताः । बलूचिस्तानयुद्धे त्वेवं पराजिताः, यत्तात्रैक एव योद्धा अवशिष्टः सर्वेऽप्यन्ये हताः ।

द्विती०—मित्र ! खालसामतावलम्बिनः सिक्खाः कथं जिताः, ते तु यवनसमये सैनिकतया पृथग्भूताः परमयोद्धारः आर्या एव ।

प्रथ०—तत्राप्येतेषां भेदनीतिरेव फलिता, यत्परस्परं विभेद्य रणजित्सिंहतनयदिलीपसिंहसाहाय्यव्याजेनोपेत्य तत्र स्वाधिपत्यं स्थापयामासुः । दिलीपसिंहं रक्षाव्याजेन स्वदेशमनैषुः । किं बहुना

को फड़फड़ा कर कबूतर को ढाढस बंधाता है, उसी प्रकार ये अपने वाग्जल को फैला कर भारतीयों को दिलासा देते हैं । इनके मुख के तरफ देखते हुए भारतीय दास के सदृश रह जाते हैं ।

द्वितीय—इन्होंने तो सिन्ध प्रान्त भी जीत लिया है ।

प्रथम—नहीं नहीं, वहाँ पर भी सन्धि कर, और फिर बहाने से उसे तोड़ कर, और लोगों को आपस में फोड़ कर, इन्होंने उसे अधीन कर लिया है, हमारी सहायता के बिना तो इन लोगों ने कहीं भी युद्ध नहीं किया है । वहां के धनी लोगों की औरतें भी इन्हाने लूटी हैं । बलूचिस्तान के युद्ध में ये ऐसे हारे कि वहाँ एक ही सैनिक बच गया और बाकी सब मारे गए ।

द्वितीय—मित्र, खालसा मतावलंबी सिक्खों को कैसे जीता ? वे तो मुसलिम समय में सैन्य रूप से अलग हुए परम लड़ाके आर्य ही थे ।

प्रथम—वहां पर भी इनकी भेदवाली कूटनीति सफल हो गई । आपस में फूट डाल कर रणजीत सिंह के पुत्र दिलीपसिंह की सहायता करने के व्याज से वहाँ पहुँच कर इन्होंने अपना आधिपत्य जमा लिया । दिलीपसिंह की रक्षा के बहाने से ये उसे अपने देश ले गए । अधिक क्या कहें । सभी

सर्वेऽपि दक्षिणादिप्रदेशादयो भेदनीत्यैव स्वायत्तीकृताः।

द्वितीयः—श्रूयते इदानीं भारतमाता सखीविरहिता संजाता, नितान्तं खिन्ना किमप्यनुदिनं शोचति।

प्रथमः—सत्यमिदम्, एभिरेव कूटनीत्या विभेद्य पृथक्कृता!

द्वितीयः—सा किमिति न स्वायत्तीकृता?

प्रथ०—तस्याः सुनैर्गोरक्षकैर्भारतमातुर्मोक्षणाय युद्धं विहितम्, परमस्माकं दौर्भाग्याद् विजयमदोन्मत्तानां तेषां पुनरपि पराजयो जातः इत्येतेषामेव राज्यं स्थिरीभूतम्। तत आरभ्येमे प्रलोभनार्थं तस्यै प्रतिवर्षं किमपि ददते। तां स्वायत्तीकर्त्तुं कूटनीत्या यतन्ते च। परं साऽतिचतुरा। किञ्चिदप्येतेषु न विश्वसिति। आत्मनः स्थितिमार्गमपि न बोधयति।

द्वितीο—श्रूयतेऽशिक्षिता सा।

दक्षिण आदि प्रदेशों को अपनी भेदनीति के वश से इन्होंने अधीन कर लिया।

द्वितीय—सुनते हैं कि भारत माता अपनी सखी से रहित हो गई हैं। वह दिनरात अत्यन्त दुःखी हो कुछ सोचा करती है।

प्रथम—यह सच है। इन्होंने ही कूटनीति से उसे फोड़कर अलग कर दिया है।

द्वितीय—उसे अपने अधीन क्यों नहीं किया?

प्रथम—उसके बच्चे गोरखों ने भारतमाता को छोड़ाने के लिए युद्ध किया था, पर हमारे दुर्भाग्य से विजयोन्मत्त उनकी फिर हार हो गई। इनका राज्य स्थिर हो गया। तब से भारतमाता की सखी के प्रलोभन के लिए ये प्रतिवर्ष कुछ न कुछ दिया करते हैं, और कूटनीति से उसे अधीन करने का प्रयास भी करते हैं, परन्तु वह अत्यन्त चतुर है, वह इन पर जरा-सा भी विश्वास नहीं करती है, अपने रहने का मार्ग भी नहीं बताती है।

द्वितीय—सुनते हैं कि वह अशिक्षित है।

प्रथ०—सा प्राच्यशास्त्रेषु वेदस्मृत्यादिषु परमं विश्वसिति। पाश्चात्त्यशास्त्रेषु न विश्वसिति।

द्वितो०—पश्य, एतेषां पाश्चात्त्यानां कीदृशी ख्रिष्टधर्मप्रवर्तनपुरस्सरं स्वराज्यविस्तारस्येच्छा।

प्रथम०—असंदिग्धमिदम्। मारवाड़मालवादिप्रदेशेषु स्वतन्त्रैः राजभिः सन्धिं विधाय इतरत्र स्वराज्यं स्थिरीकृत्येदानीं तानपि क्रमशः स्वायत्तीकर्त्तुं यतन्ते।

द्वितो०—कथमेभिः प्रतापो न श्रुतः? कृशबलेनापि येनात्मस्वातन्त्र्यं रक्षितम्।

प्रथ०—सर्वमप्येते जानन्ति। अत एवैभिर्नियमो विधीयते, य एव औरसपुत्ररहितः स्यात्तस्य राज्यं कम्पन्याः। नियमवशान्नैते राजानः परस्परं साहाय्यं विधास्यन्ति। क्रमशः कालान्तरेण सर्वं राज्यं कम्पन्या भविष्यति।

प्रथम—वह वेद, स्मृति आदि प्राच्य शास्त्रों पर अधिक विश्वास करती है। पाश्चात्य शास्त्रों पर विश्वास नहीं करती।

द्वितीय—देखो, धर्म और राज्य के फैलाने की इन पाश्चात्त्यों की कितनी प्रबल इच्छा है।

प्रथम—इसमें क्या सन्देह है। मारवाड़, मालवा आदि प्रदेशों में स्वतन्त्र राजाओं से सन्धि कर, और इधर अपने राज्य को स्थिर कर इस समय उन्हें भी क्रम से अपने अधीन करने का प्रयास करते हैं।

द्वितीय—क्या इन्होंने महाराणा प्रतापसिंह का नाम नहीं सुना? थोड़ी-सी सेना से भी जिसने अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की थी।

प्रथम—ये यह सब जानते हैं। अत एव ये नियम बनाते हैं कि जो राजा औरत पुत्र से रहित होगा, उसका राज्य कम्पनी का होगा। इस नियम के कारण ये राजा परस्पर सहायता न करेंगे और क्रमशः थोड़े दिनों में सारा राज्य कंपनी का हो जायगा।

द्वितीο—परमिदमेतेषां दौरात्म्यम्, यत्सर्वानपि दायाधिकारिणो निवर्तयन्ति, अयुद्ध्वैव च राज्यं जिघृक्षन्ति।

प्रथο—भविष्यत्येतदन्यायस्य फलम्। मन्ये एतदर्थमेव कदाचित्समितिः क्रियते। पश्य, एते पाण्डेयप्रभृतयः समितौ गच्छन्ति। अस्माभिरपि तत्रैव गन्तव्यम्। (इति गच्छतः)

(इति विष्कम्भः।)

(पटीक्षेपः।)

(ततः प्रविशन्ति झांसीराज्ञ्या सह पाण्डेयप्रभृतयः।)

पाण्डेयः—

निर्मायास्पृश्यकार्तूसं गोशूकरवसादिभिः।
दन्तेन च्छेदयन्तोऽमी न सह्या धर्मलोपकाः॥ १॥
गर्वेणैते नार्यधर्मं सहन्ते श्रौतस्मार्तेषूपहासं।चरन्ति।

द्वितीय—परन्तु यह तो इनकी दुष्टता है कि सभी उत्तराधिकारियों को दूर कर रहे हैं, और युद्ध किए बिना ही राज्य लेना चाहते हैं।

प्रथम—इस अन्याय का नतीजा निकलेगा, मैं समझता हूँ कि इसीलिए शायद सभा की आयोजना है। देखो ये पाण्डेय इत्यादि सभा में जा रहे हैं। हमें भी वहीं जाना चाहिए।

[दोनों जाते हैं]

[इति विष्कम्भक]

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर झांसी की रानी के साथ पाण्डेय इत्यादि आते हैं]

पाण्डेय—गाय और सुअर की चर्बी से अस्पृश्य कार्तूस को बनाकर दाँतों से तोड़वाते हुए इन धर्मनाशकों का सहन नहीं किया जा सकता॥ १॥

गर्व के कारण ये आर्य धर्म को नहीं मानते। वैदिक तथा स्मार्त धर्म का

वृत्त्या धर्मान्ध्वंसयन्तोऽस्मदीयान् हन्तास्माभिः शिक्षणीया रणान्ते॥२॥

यवनः—

बराहवसया युक्तं कार्तूसं परमाशुचिम् ।
स्पृशामो न करेणापि किमु दन्तैर्निकर्तनम् ॥ ३ ॥

राज्ञी लक्ष्मीः—पश्यैतेषां दौरात्म्यम् ।

दायादान् कृतकान् सुतानपि सतां भ्रातॄंश्च दौहित्रकान्,
स्वस्रीयानपि नैव राज्यविषये गृद्ध्या सहन्तेऽपरान् ।
तत्स्वातन्त्र्यपदाय भारतभुवः कौक्षेयको गृह्यते,
युष्माभिः समरोद्भवैर्भटवरैः सर्वैश्च सन्नह्यताम् ॥ ४ ॥

ताँत्या भिल्लः—

अज्जगोरवरक्खट्ठं गुहवंससमुब्भओ ।
सेणमुट्ठावइस्से हं इमेहिं संगरक्खमम् ॥ ५ ॥

ये परिहास करते हैं। वृत्ति के कारण हमारे धर्म के नाश करने वाले इन लोगों को संग्राम में शस्त्र से हमें शिक्षा देनी है ॥ २ ॥

मुसलमान—सुअर की चर्बी से अस्पृश्य अत्यन्त अपवित्र कार्तूस को हम हाथ से भी नहीं छुएँगे, दाँतों से काटने की बात तो दूर है ॥ ३ ॥

झांसी की रानी—इनकी दुष्टता को देखो—

पुत्रों को, कन्या को, भाइयों को, नातियों को और भांजों को भी ये लोभ के कारण राज्य के लिए उत्तराधिकारी नहीं मानते। अतः भारत भूमि की स्वतन्त्रता के लिए तलवार उठाई जा रही है, संग्राम में चतुर तुम वीरों को तैयार होना चाहिए ॥ ४ ॥

ताँत्या भील—आर्यों के मान की रक्षा के लिए गुह वंश में समुत्पन्न मैं इनके साथ संग्राम करने में समर्थ सैन्य को खड़ा करूँगा ॥ ५ ॥

पाण्डेयवाजपेयिनौ भुशुण्ड्यौ चालयतः। पृ० १२५
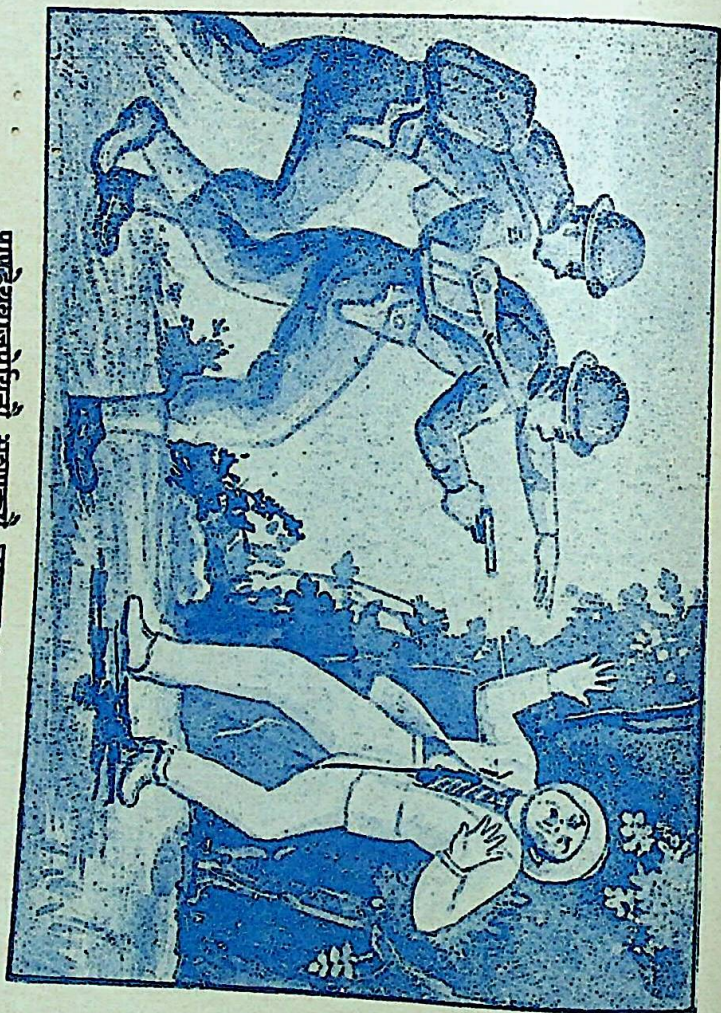
(आर्यगौरवरक्षार्थं गुहवंशसमुद्भवः ।)
सैन्यमुत्थापयिष्येऽहम् एभिः संगरक्षमम् । ५ ॥)
(इति सर्वे असिं निष्कासयन्ति । झांसीराज्ञीं च प्रणमन्ति ।)
(ततो निष्क्रामति सखीसहिता झांसीराज्ञी)

गौराङ्गः—(प्रविश्य, इतस्ततोऽवलोक्य) किमिति यूयं दन्तैः कार्तूसं नैव कृन्तथ ?

पाण्डेयः—गोशूकरमांसवसाद्यशुचिनिर्मितं नैव दन्तैर्निकर्तिष्यामः ।

गौराङ्गः—रे आज्ञाप्रतिरोधकारिन् ! श्यालक ! (अन्तरैव)

वाजपेयी—आः पाण्डेय ! गालीमुखोऽसौ, किमतः परमवलोक्यते ?
(आत्मनः भुशुण्डीं (बन्दूकं) सज्जीकरोति ।)

गौराङ्गः—(रक्तेक्षणः) रे नीच ! श्यालक ! किमित्युच्यते ?
(ततः युगपदेव पाण्डेयवाजपेयिनौ भुशुण्ड्यौ चालयतः । गौराङ्गो मृतः सन्निपतति)

[सब तलवार निकालते हैं और झांसी की रानी को प्रणाम करते हैं ।]
(फिर सखी के साथ झांसी की रानी चली जाती है ।)

गोरा—(आकर, और इधर उधर देख कर) तुम दाँतों से कार्तूस नहीं काटोगे ?

पाण्डेय—गाय और सुअर के मांस, चर्बी आदि अपवित्र वस्तुओं से बनी इस कार्तूस को दाँतों से नहीं काटेंगे ।

गोरा—अरे आज्ञा को न मानने वाला, साला,
(बीच ही में)

वाजपेयी—ए पाण्डे, यह गाली देने वाला है, अतः आगे क्या देखते हो ।
(अपनी बंदूक को तैयार करता है,)

गोरा—(आँखें लाल २ कर) रे नीच, साला क्या कहता है ।
(पाण्डेय और वाजपेयी दोनों एक साथ गोली चलाते हैं । गोरा मर कर गिर पड़ता है ।)

(पटीक्षेपः ।)

(ततः प्रविशति देशं युद्धाय सज्जीकुर्वन् पाण्डेयः)

पाण्डेयः—

रे रे जागृत ! जागृत !! क्षितिभृतः शौर्यं समाश्रीयतां,
गौराङ्गा धनलोलुपा भृशमिमे लुण्ठन्ति सर्वात्मना।
राज्यं वोऽपहरन्त्यसाधुनियमं कृत्वा तु दायादकं
धर्मं चापि हठात्ततः कथमिमे तिष्ठन्तु मायाविनः ॥६॥

आः कथमेते मारवाड़मालवाप्रदेशीया राजानो जानन्तोऽप्यजानन्त इवाचरन्ति, अस्तु । अन्यतो गच्छामि, नैव कालातिपातं सहे ।

(अन्यतो गत्वा)

धर्मराज्यापहर्त्तारो विदेशप्रभवा इमे ।
निष्कासनीयाः संभूयास्माभिर्युद्धाय सज्यताम् ॥७॥

आः पश्य, अस्मद्युक्तप्रान्तीया एव सैनिका एतान्निष्कासयितुं.

(परदा गिरता है)

[तदनन्तर देश को युद्ध के लिये तैयार करता हुआ पाण्डेय आता है ।]

पाण्डेय—अरे जागो, जागो, ए राजाओ, वीरता का अवलम्बन करो, धनलोभी ये गोरे पूर्णतया पृथ्वी पर कब्जा कर रहे हैं, ये उत्तराधिकार विषयक अनुचित नियमों को बना कर तुम्हारे राज्य का अपहरण कर रहे हैं, और बलपूर्वक धर्म का भी नाश करते हैं, अतः ये मायावी यहाँ क्यों रहने पावें ।। ६ ॥

अरे ये मारवाड़ तथा मालवा प्रदेश के राजा जानते हुए भी अनजान के समान आचरण करते हैं, अच्छा, दूसरी ओर जाता हूँ । समय का बिताना मुझे सह्य नहीं । (दूसरी ओर जा कर)

धर्म और राज्य के अपहरण करने वाले इन विदेशियों को यहाँ से निकाल देना है, अतः हमें मिल कर युद्ध के लिये तैयार होना चाहिये ॥ ७ ॥

अहह, देखो हमारे युक्त प्रान्त के ही सैनिक इन्हें निकालने के लिये

युद्धाय संनह्यन्ते। (ससंभ्रमम्) हा हा धिक् अस्मद् यू० पी० प्रदेशजा अपि राजकल्पा भूमिपतयोऽस्मत्सैनिकविरुद्धा एव यतन्ते।
(मनसि) अस्तु तावद् वङ्गान्सज्जीकरिष्यामि।
(प्रकाशम्)

वङ्गाः स्वबुद्धिविभवं परिचिन्तयध्वं
युष्माभिरेव निहिता विषये स्वकीये।
एतान् स्वशौर्यकलयाऽमलयोपनीता-
न्निष्कासयध्वमखिलान् द्रुतमेव यूयम् ॥८॥

(अकाशे लक्ष्यं कृत्वा) आः किमेते कथयन्ति, अस्माभिरेवानीताः न वयं निष्कासयिष्यामः, अस्तु, परमेते जाल्मतरास्त्वदीयवङ्गच्छेदमपि करिष्यन्ति। स्वातन्त्र्यं त्वपहरिष्यन्त्येव। आः उद्बुद्धा अप्येते नैव संनह्यन्ते। अन्यतो गच्छामि।

विहारजाः! स्वकान् वीरान् स्मृत्वा मा यात भीरुताम्।
निष्कासयत हतकान् एतान् स्वत्वापहारकान् ॥ ९ ॥

युद्धार्थ तैयार हो रहे हैं, (व्याकुलता के साथ) हाय, हाय धिक्कार है कि हमारे युक्तप्रान्त के ही राजसदृश ताल्लुकेदार हमारे सैनिकों के विरुद्ध ही प्रयास करते हैं। (मन में) अच्छा तो, बंगाल को तैयार करता हूँ। (प्रकाश)

हे बङ्गालियो, अपनी बुद्धि के वैभव की विवेचना करो, तुम्हींने इन्हें अपने देश में रक्खा है, अतः अपनी निर्मल वीरता की कला से समानीत इन सबको शीघ्र ही निकाल दो ॥ ८ ॥

अरे, ये क्या कहते हैं कि इन्हें हमी लाए हैं, अतः नहीं निकालेंगे। अच्छा, परन्तु ये जालिम तुम्हारे बंगाल के टुकड़े भी करेंगे, और स्वतन्त्रता का अपहरण तो करेंगे ही। अरे, प्रबुद्ध होने पर भी ये तैयार नहीं होते। दूसरी ओर जाता हूँ।

हे विहारियो, अपने वीरो का स्मरण कर कायर न बनो, अधिकार के अपहरण करने वाले इन को निकाल दो ॥ ९ ॥

(सोत्साहम्) आः पश्यासौ पूर्वजानां चरितमनुस्मृत्य खड्गपाणिरमीषां पाश्चात्त्यानां निष्कासनाय यतमानो मदीयं वचनं श्रुत्वा सुप्रसन्न इहैवागच्छति। हा धिक् हा धिक अपरेऽस्य शौर्यं पश्यन्तो दासतादुःखमनुभवन्तोऽपि नास्य साहाय्यमनुव्रजन्ति। एतेषां हृदये नाममात्रतोऽपि न शौर्यमवशिष्यते।

वैहारिकः—भगवन्! एषां पाश्चात्त्यानां शिक्षैवैतादृशी, यतोऽमीषां धमनीषु कातर्यं प्रतिष्ठितम।

(ततः प्रविशति गायन्ती वीणां वादयन्ती झांसीराज्ञ्याः सखी। पाण्डेयवैहारिकौ निष्क्रामतः।)

सखी—

वीरा मा जहीत रणरङ्गम्।
लक्ष्मी-नानाराव-महीपति-ताँत्या-लसितसदङ्गम्।
शोषयतार्यदेशसम्भूताः रिपुगणमनस्तरङ्गम्॥ वीरा मा…

(उत्साह के साथ अरे देखो, अपने पूर्वजों के चरित का स्मरण कर, तलवार हाथ में ले कर इन पाश्चात्यों के निकालने का प्रयास करता हुआ यह प्रसन्न होकर इधर ही आ रहा है। हाय, धिक्कार है, धिक्कार है कि दूसरे इसकी वीरता को देखते हुए और दासता के दुःख का अनुभव भी करते हुए इसकी सहायता के लिये नहीं आते। इनके हृदय में नाम मात्र के लिये भी वीरता नहीं बच गई है।

विहारी—महोदय, इन पाश्चात्त्यों की शिक्षा ही ऐसी है जिससे इनकी नसों में कायरता घुस गई है।

[तदनन्तर गाती हुई और वीणा बजाती हुई झांसी की रानी की सखी आती है, पाण्डेय और विहारी चले जाते हैं]

वीरो, संग्राम स्थली का परित्याग न करो, क्योंकि इसके शोभन अङ्ग महारानी लक्ष्मी बाई, महाराज नाना राव और ताँत्या टोपीसे सुशोभित हो रहे हैं। हे आर्य देश के सुपुत्रो, शत्रुओं के मन के उल्लास रूपी तरङ्गों का शोषण

वितनुत भारतजननीतनयाः ! वैरिवाहिनीभङ्गम् ।
अजरममरमवगत्य जीवमथ यात न कातरसङ्गम् ॥ वीरा मा…
नाशयतान्धकरिपुरिव शूरा द्विपतस्त्वरितमनङ्गम् ।
स्वकदेशतः सर्वगोरण्डान् निष्कासयताऽऽवङ्गम् ।१०॥ वीरा मा…
अविरलकरवालस्फालनोल्लासितानां-
मुदयति हृदि येषामात्मगर्वप्रकर्षः ।
विजयममरभावं वेहमानाः शिरः स्वं
जनुरवनिसपर्याहेतवे तेऽर्पयन्ताम् ॥११॥

(ततः प्रविशति भारतमाता, तदनु झाँसीराज्ञी प्रविश्य भारतमातुर्बन्धनानि छिनत्ति, तदनु सर्वा यथास्थानमुपविशन्ति)

भारत०—किमिदानीं युद्धवृत्तान्तः ?

करो। हे भारत माता के सुपुत्रो, शत्रुओं की सेनाओं को तोड़ फोड़ दो, और जीव को अजर और अमर मान कर कायरता को अपने पास न फटकने दो। हे वीरो, जिस प्रकार अन्धक के शत्रु भगवान् शङ्कर ने कामदेव का नाश कर दिया था, उसी प्रकार शत्रुओं का शीघ्र ही नाश कर दो और बङ्गाल पर्यन्त अपने देश से गोराओं को निकाल दो ॥ १० ॥

निरन्तर तलवार के चलाने से उल्लास भरे हुए जिन पुरुषों के हृदय में आत्माभिमान के प्रकर्ष का सञ्चार होता है, वे विजय अथवा अमरत्व को (जीतने पर विजय, मरने पर अमरभाव-ब्रह्मस्वरूपता को) चाहने वाले जन्म-भूमि के पूजन के लिये अपने शिर का अर्पण कर दें ॥ ११ ॥

[इसके अनन्तर भारतमाता आती है, उसके पीछे झाँसी की रानी आ कर भारतमाता के बन्धन काट देती है, फिर सब अपनी अपनी जगह बैठ जाते हैं ।]

भारतमाता—अब युद्ध का क्या हाल है ?

झाँसीराज्ञी—मातर्मम सेनापतिः काल्ह्यवनः कम्पनीपुरुषैझाँसीराज्य-प्रदानेन प्रलोभितः ।

भारत०—मिथ्याप्रलोभने तु सिद्धहस्ताः कम्पनीपुरुषाः । ततस्ततः ।

झाँसीरा०—ततो दुरात्मना तेन शतघ्न्यो राजिकासर्षपवाजरादिकदन्नगर्भिताश्चालिताः । दुर्गमार्गश्च विज्ञपित इति कम्पनीसैनिकैर्दुर्गं प्रविश्याधिकृतं झाँसीनगरम् । अहं ततो निःसृत्य काल्पीराजसाहाय्येन वहुकालमयुध्ये ।

भारत०—ततस्ततः ।

झाँसीराज्ञी—ततः कम्पनीपुरुषैः स राजा जितः, अहमिदानीं स्वातन्त्र्याय प्रयतमानैः सैनिकैः सह ग्वालियरप्रदेशं जेतुं जिगमिषामि । (इति प्रणम्य सहसा निष्क्रामति ।)

अनुचरः—

(ततो युद्धवृत्तपरिज्ञानाय प्रेषितो दूरतोऽवलोक्य) (मनसि)

झांसी की रानी—माता, हमारे सेनापति काल्ह्यवन को झांसी का राज्य देने को कह कर कंपनी के लोगों ने लुभा लिया है ।

भा० माता—मिथ्या प्रलोभन में तो कंपनी के आदमी सिद्धहस्त हैं । फिर-

झां-० रानी—फिर उस दुष्ट ने राई सरसों वाजरा आदि मोटे अन्न से भरी हुई तोपें चलाईं, और किले का रास्ता भी वता दिया, इससे कंपनी के सैनिकों ने किले में घुस कर झांसी नगर पर अधिकार कर लिया । तदनन्तर मैं वहां से निकल कर काल्पी के राजा की सहायता से युद्ध करती रही ।

भारत०—फिर—

झां० रानी—तदनन्तर कंपनी के आदमियों ने उस राजा को जीत लिया । अब मैं स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न करते हुए सैनिकों के साथ ग्वालियर प्रदेश जीतने के लिये जाना चाहती हूँ ।

नौकर　　　　[प्रणाम कर सहसा चली जाती है]

(तदनन्तर युद्ध समाचार जानने के लिये भेजा गया दूर से देख कर) (मन में)

एषा सुतानामवलोक्य शौर्यं प्रफुल्लनेत्राऽतिविभाममाना ।
पञ्चा (म्चु) लदौरात्म्यमनुस्मरन्ती खिन्नेव मन्युं हृदये निधत्ते ॥१२॥

(पुनः सहसोपसृत्य) (प्रकाशम्)

जयतु जयतु मातः !

भारत०—किमिदानीं युद्धवृत्तम् ।

अनुचरः—वीरतमैस्त्वदीयैः सुतैः पराजिता कम्पनीसेना प्रयागपर्यन्तं पलायिता, परं पश्चात् पञ्चनदीयसाहाय्येन अपरतश्च क्रममाणा जयन्ती कम्पनीसेना कर्णपुरनगरमनुप्राप्ता । तत्र त्रिभिर्दिनैः क्षुधितास्त्वदीया सुता योद्धुमशक्नुवन्तोऽनुत्साहाश्च संजाताः ।

भार०—(सोच्छ्वासम्) आः, ततस्ततः ।

अनुचरः—तत उक्तं तैः, यदि मुष्टिमात्रं चणकान्नमपि अस्मभ्यं कोऽपि दद्यात्तदा वयमिमां कम्पनीसेनां पारेसमुद्रमेव प्रापयिष्यामः ।

अपने पुत्रों की वीरता को देख कर विकसित नेत्र वाली एवं अत्यन्त देदीप्यमान यह पंजावियों (ग्वालियर) की दुष्टता का स्मरण कर खिन्न-सी हो कर अपने हृदय में दुःख को धारण करती है ॥ १२ ॥

(फिर सहसा पास आ कर) (प्रकाश)

माता की जय हो ।

भा० माता—अब युद्ध का क्या समाचार है ?

नौकर—तुम्हारे अत्यन्त वीर लड़कों से हराई गई कंपनी की सेना प्रयाग तक भाग गई, परन्तु फिर पंजावियों की सहायता से दूसरी ओर से आक्रमण कर विजय प्राप्त करती हुई कंपनी की सेना कानपुर तक पहुँच गई । वहाँ पर तीन दिनों से भूखे तुम्हारे लड़के युद्ध न कर सकने के कारण अनुत्साही हो गए ।

भा० माता—(उसासें भर कर) हाय, फिर—

नौकर—तब उन लोगों ने कहा कि यदि मुट्ठी भर भी चना हमें कोई दे दे, तो हम इस कंपनी की सेना को समुद्र के पार पहुँचा दें । अब हम क्या करें,

किमिदानीं कुर्याम् । न चास्माकं हस्ताः प्रसरन्ति । आः स्वाभिमानादस्माभिः कोऽपि सेनापतिर्न कल्पितस्तत एवेमां दशामनुप्राप्ताः स्मः ।

भारत०—ततस्ततः ।

अनुचरः—ततो न जाने केन कम्पनीप्रलोभितेनास्मदीयेनैव सैनिकेन वारूदस्थानेऽग्निर्ज्वालितः, तेन सर्वं वारूदं तत्स्थानमपि विनष्टम् । निरस्त्रा इव हतोत्साहास्तव पुत्राः पलायिताः ।

भारत०—ततस्ततः ।

अनुचरः—ततः कर्णपुरादिनगरं विजित्य क्रमशः देहलीप्रान्ते प्राप्ताः कम्पनीसैनिकाः । यदा देहलीं जेतुमशक्ता अभवंस्तदा पञ्चनदीयान् प्रोदसाहयन् । उक्तञ्च—एभिरेव पञ्चनदो विजितः इत्यात्मानं बहु मन्यन्ते । एतान्विजित्य वैरशोधनं कर्तव्यमिति पञ्चनदीयान् प्रोत्साह्य तत्साहाय्येन विजितो देहलीप्रदेशः ।

(ततः कुतश्चिद्विजयदुन्दुभिः श्रूयते ।)

हमारे हाथ नहीं फैलते । हाय, आत्माभिमान के कारण हम लोगों ने किसी को सेनापति नहीं बनाया, उसी से हमारी यह दशा हुई है ।

भा० माता—फिर—

नौकर—तब न जाने, कंपनी से प्रलोभित किसी हमारे ही सैनिक ने बारूद के स्थान पर आग लगा दी । उससे वह बारूद और वह स्थान भी नष्ट हो गया । अस्त्र हीन होने से उत्साहशून्य तुम्हारे लड़के भाग खड़े हुए ।

भा० माता—फिर ।

नौकर—तदनन्तर कंपनी के सैनिक कानपुर आदि नगरों को जीत कर दिल्ली पहुँचे । जब दिल्ली न जीत सके, तो उन्होंने पञ्जाबियों को भड़काया और यह कहा कि इन्होंने ही पंजाब जीता था, अतः ये अपने को बहुत कुछ समझते हैं, इन्हें जीत कर अपने वैर का बदला ले लो । इस प्रकार पंजाबियों को भड़का कर उनकी सहायता से इन्होंने दिल्ली जीत ली ।

[फिर कहीं से विजय की दुंदुभि सुनाइ देती है]

झांसी० सखी—मातः! ज्ञायते, कम्पन्या विजितम्। आगच्छ, वयं पश्यामः; विजयानन्तरं किमेते कुर्वन्ति।

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति निबद्धस्त्रिभिर्दिनैस्तृषितो बहादुरशाहो देहलीसम्राट्, दूरतो विलोकयन्तोऽन्तर्हिताश्च भारतमातृझांसीराज्ञीसख्यनुचरास्तिष्ठन्ति)

सम्राट्—हा, अतितृषितोऽस्मि। पिपासया म्रिये।

(ततः प्रविशति सम्राट्पुत्रस्य छिन्नं सरुधिरं शिर आदाय कश्चिद् यूरूपीयः)

यूरूपी०—आः किमसौ कथयति? तृषितोऽस्मि, गृहाण, स्वपुत्रस्य रुधिरं पिब। (इति प्रसृतौ तत्पुत्रस्य शिरोरुधिरं गृहित्वा सम्राड्मुखोपरि प्रक्षिपति।)

भारतमाता—हा सुते! किमिदमनार्यैर्विधीयते।

सम्राट्—आः किमिदं मम पुत्रस्य रुधिरम्? हा मृतोऽस्मि।

झां० सखी—माता, मालूम पड़ता है कि कंपनी ने जीत लिया है। आओ, देखें कि विजय के अनन्तर ये क्या करते हैं।

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर तीन दिन का प्यासा, बँधा हुआ दिल्ली-सम्राट् बहादुर शाह का प्रवेश होता है, भारतमाता, झांसी रानी की सखी तथा नौकर छिपे हुए दूर से देखते हैं।]

बादशाह—हाय, अत्यन्त प्यासा हूँ, प्यास से मर रहा हूँ। [इसके अनन्तर शाहजादे के रुधिर समेत कटे हुए सिर को ले कर एक यूरोपियन आता है।

यूरोपियन—अरे! यह क्या कहता है कि प्यासा हूँ। ले अपने पुत्र का खून पी।

[अंजुली में उसके लड़के के खून को ले कर बादशाह के मुंह पर फेंकता है।]

भारतमाता—हाय पुत्री, ये अनार्य कर रहे हैं?

बादशाह—अरे क्या यह मेरे लड़के का खून है? हाय मर गए।

(इति मुमूर्षुर्मूर्च्छति ।)

(पटाक्षेपः)

(ततः प्रविशति अग्नौ प्रविशन्ति झांसीराज्ञी ।)

सखी—भारतमातः ! पश्य पश्य । एषा सखी प्रज्वलितुं प्रयाति । हा सखि !

भारत०—

पश्येयं घनसारवन्निजतनुं बालात्मजैकाकिनी,
शौर्येणाशु निपात्य वैरिनिचयं वह्नौ जुहोति स्वयम्
एतेऽनार्यभवाः स्पृशन्तु मम न च्छायामपीत्यात्मनः,
सूनुं साधुपदे निधाय तपनं भित्त्वा प्रलीनात्मनि ॥१३॥

सखी—(रुदती) हा सखी ! मां हित्वा क प्रयासि ? अहमपि त्वामनुसराम्येव (इत्युत्थिता मूर्छन्ती निपतति)

[मरणासन्न वह मूर्छित हो जाता है]

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर आग में प्रवेश करती हुई झांसी की रानी का प्रवेश होता है ।]

सखी—भारतमाता, देखो देखो, यह सखी जलने जा रही है, हाय सखी,

भारतमाता—

देखो, यह एकाकिनी मेरी लड़की [बालात्मजा = बालक पुत्रवाली] वीरता से शत्रुओं के समूहों का विनाश कर कपूर के समान अपने शरीर की आहुति अग्नि में कर रही है । ये अनार्य मेरी छाया भी न छू सकें, इसलिये अपने लड़के को साधु के चरणों पर रख कर सूर्यमण्डल का भेद कर आत्मा में मिल रही है ॥ १३ ॥

सखी—हाय सखी, मुझे छोड़ कर कहाँ जाती हो ? मैं भी तुम्हारा अनुसरण करती हूँ ।

[उठ कर मूर्छित हो गिर पड़ती है ।]

भारतमा०—हा धैर्यौदार्यपुत्तलिके ! हा हीनदीनवृद्धलगुडिके ! हा पुत्रिके ! समाश्वसिहि, समाश्वसिहि । (इति तन्मुखं हस्तेन परिमार्ष्टि । अनुचरो जलमादाय तन्मुखमभिषिञ्चति)

सखी—(समाश्वस्य) हा मातः ! क्व गता मे सखी । (पुना रुदती) हा झाँसीराज्यपरमरमणीयशोभे ! हा बुन्देलखण्डप्रदेशपद्मासने ! हा भारतमातुः सुसुते ! हा लक्ष्मि ! सखि ! क्व गताऽसि । देहि मे प्रतिवचनम् । (इत्युच्चस्वरेण रोदिति । धैर्यं विमुच्य सानुचरा भारतमाताऽपि रोदिति)

सखी—(अश्रूणि प्रमृज्य) मातः ! पश्य । भस्मावशेषा संजाता राज्ञी । सर्वथा गतैव ।

भारत०—(अश्रूणि प्रमृज्य)

कर्माण्याचरितान्यस्या जीवन्तीं कुर्वते त्विमाम् ।
एषा प्रलयपर्यन्ते मयैव सह यास्यति ॥१४॥

भा० माता—हाय, धैर्य और उदारता की पुतरिया, हाय, दीन हीन बुड्ढी की लकुटिया, हाय, लड़की, धीरज धरो, धीरज धरो ।

[उसके मुख को हाथ से पोंछती है, नौकर पानी ला कर उसके मुँह पर छिड़कता है ।]

सखी—(होश में आ कर) हाय माता, मेरी सखी कहाँ गई । (फिर रोती हुई) हाय झांसी राज्य की परम रमणीय शोभा, हाय, बुन्देल खण्ड देश की लक्ष्मी, हाय; भारत माता की सुपुत्री, हाय लक्ष्मी, हाय सखी, कहां गई हो, मेरी बात का जवाब दो ।

[जोर से रोती है । धैर्य को छोड़कर नौकर के साथ भारतमाता भी रोती हैं ।]

सखी—(आंसू पोंछ कर) माता, देखो रानी की केवल अब राख बच गई है । वह सर्वथा गई ।

भा० माता—(आंसू पोंछ कर)

इसके द्वारा विहित इसके कार्य ही इसे जीवित रक्खेंगे । और यह प्रलय के अन्त में मेरे साथ जायगी ॥ १४॥

बाले ! मा रोदीः। एषा तव सखी चिरजीविन्येव संजाता (इति स्वहस्तेनाश्रूणि परिमार्ष्टि।) (पटीक्षेपः।)

(ततः प्रविशति पञ्चपुरुषानादाय ससैनिको गोरण्डः, एकतो झाँसीराज्ञी-सखीसहिता भारतमाता अनुचरश्च)

भारत०—किमसौ विदधाति, इत्यन्तर्हिता भूत्वा पश्यामः (इति तथा कुर्वन्ति)

गोरण्डः—एते विद्रोहकारिणः श्रेण्यैतान् स्थापयित्वा तृतीयमेषु घातय।

सैनिकः—(तथा स्थापयित्वा) असौ प्रथमः, असौ द्वितीयः, असौ तृतीयः (इति गणयित्वा हन्तुं तृतीयं निष्कासयति, पुनस्तथा करोति।)

भारत—(सोद्वेगम्) नाहमतः परं क्षमिष्ये। (इति योद्धुं जिगमिषति)

पुत्री, मत रो, यह तुम्हारी सखी चिरंजीविनी हो गई है।

[अपने हाथ से आंसू पोछती है।]

(परदा गिरता है।)

[इसके अन्तर पांच छः आदमियों को ले कर एक ओर से सैनिक सहित एक गोरा आता है और दूसरी ओर से झांसी की रानी की सखी के साथ भारतमाता और नौकर आते हैं।]

भा० मा०—यह क्या करता है—इसे छिप कर देखें।

[वैसा ही करते हैं।]

गोरा—ये बलवाई हैं, इन्हें एक पंक्ति में खड़ा कर इनमें-से तीसरे को मारो।

सैनिक—(वैसा खड़ा कर) यह पहला, यह दूसरा, यह तीसरा।

[इस प्रकार गिन कर मारने के लिये तीसरे को निकालता है, फिर वैसा ही करता है।]

भारत०—(घबड़ाहट के साथ) अब इसके आगे नहीं क्षमा कर सकती। (लड़ने के लिये जाना चाहती है।)

झाँ० सखी—(गृह्णाति) नास्माकमिदानीं समयः । त्रय एव वयम् । सन्निहिताश्चैतेषां सैनिकाः ।

भारतमा०—(सक्रोधम्) मुञ्च माम् ।

शमनस्यातिथीन् कुर्वे दयाविरहितानिमान् ।
शक्तिं ममाद्य पश्यन्तु क्रूरा कातरबुद्धयः ॥१५॥

झाँ० सखी—मातः ! प्रतीक्षस्व कालम् । तावत्सर्वान्पुत्रान्सज्जीकुरुष्व ।

भारतमा०—एवमेव तावद्भवतु । उद्घुष्यताम् । ममेयमाज्ञा ।

आबालवृद्धवनिताः सर्वे संग्रामदारुणाः ।
सज्जा रणाय निर्यान्तु स्वातन्त्र्यस्योपपत्तये ॥ १६ ॥

(ततः श्रूयते ढक्काशब्दः ।)

भारत०--कस्यायं ढक्काशब्दः ?

झाँ० सखी--(निःसृत्य पुनः प्रविश्य) इङ्गलैण्डसंभूतया विक्टोरिया

झां० सखी (पकड़ती है) इस समय हमारा समय नहीं है। हम तीन ही हैं, और इनके सैनिक पास ही हैं ।

भारतमाता—(क्रोध से) इन दयाशून्यों को मैं यम की अतिथि बनाए देती हूँ । क्रूर कायर मनुष्य आज मेरी शक्ति को देखें ॥ १५ ॥

झां० सखी—माता, समय की प्रतीक्षा करो । तब तक अपने लड़कों को तैयार करो ।

भारतमाता -इतना ही सही, यह घोषणा कर दो कि मेरी यह आज्ञा है कि-संग्राम करने में विकट सब बच्चे बुड्ढे और स्त्रियां तक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये तैयार हो युद्ध के लिये निकल पड़ें ॥ १६ ॥

[इसके अनन्तर ढक्का की आवाज सुनाई पड़ती है ।]

भा० माता—यह ढक्का की आवाज किस की है ?

झां० सखी (निकल कर, फिर प्रवेश कर) इंगलैंड में उत्पन्न विक्टोरिया

महाराज्या कम्पनीतो भारतं क्रीत्वैवमुद्घुष्यते ।

राजवंश्याः स्वीक्रियेरन् यथास्वं दायभागिनः ।
कस्यापि धर्मे चास्माकमाक्षेपो न भविष्यति ॥ १७ ॥

किञ्च "सर्वे स्वस्वस्थानानि गच्छन्तु । पूर्वकृतानामपराधानां नैवाभियोगो नापि दण्डः" इति ।

मातः ! पश्य भूमिसम्मानसम्पत्त्यादिदानेन प्रसन्नीक्रियन्ते देहद्रोहिणः ।

भारत०—सर्वं पश्यामि । नीतिनिपुणानां स्वाधिपत्यस्थापनस्यैष प्रकारः ! इदानीमेतेषां क्रूरतात्याचारावुपशान्तौ, गच्छानुचर ! प्रच्छन्नवेषेण स्वातन्त्र्याय प्रयतितव्यम् । इदमपरमवगन्तव्यम् ।

युद्धे प्राणिवधः क्षितौ विकलता लोकेषु विभ्रान्तता,
बालस्त्रीस्थविरेषु धीतरलता दीनालसेष्वार्तता ।

महारानी कंपनी से भारत को खरीद कर यह घोषणा करती है कि—

राजाओं को अपनी सम्पत्ति के विषय में उत्तराधिकारी बनाने का अधिकार होगा । और किसी के भी धर्म में हम लोग आक्षेप न करेंगे ॥ १७ ॥

"और सब अपनी-अपनी जगह चले जाँय । पहले किये गए अपराधों पर न तो मुकदमा चलेगा और न दण्ड मिलेगा ।"

माता देखो,, भूमि, सम्मान और सम्पत्ति दे कर इन देशद्रोहियों को खुश किया जा रहा है ।

भा० माता—सब कुछ देखती हूँ । नीतिकुशल पुरुषों का अपने आधिपत्य की स्थापना का यह एक तरीका है । इस समय इनकी क्रूरता और अत्याचार शान्त हो गए हैं, नौकर जाओ, गुप्त रूप से स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न करो, परन्तु इसे याद रखना कि—

युद्ध में प्राणियों का संहार होता है, लोगों में विकलता आ जाती है, बालक, स्त्री और वृद्धों की बुद्धि में चञ्चलता आ जाती है, दीन और आलसियों

रुग्णान्धेषु विक्रमता मुनिजनेष्वज्ञेषु चाकर्मता,
तत्स्वातन्त्र्यमिदं रणान्न कलये स्यात् किन्त्वहिंसा व्रतात् ॥१८॥

अनुचरः—मातः! सर्वमेवमेव यतिष्ये।

(ततो निष्क्रान्तोऽनुचरः)

भारतमा०—बाले। विक्टोरियाराज्यं सुशोभनमिव प्रतिभाति?

झाँ० सखी—परकीयं सुशोभनमप्यशोभनमेव।

(ततः प्रविशति ससैनिको यूरूपीयः भारतमातरं प्रगमन् शिथिलं निबध्य निष्क्रान्तः)

भारतमाता०—(अवलोक्य) आः बाले। कथमहं पुनर्निबद्धाऽस्मि अस्तु, सर्वथा स्वातन्त्र्याय प्रयतिष्यते। संभावयामि समये फलमवश्यं भविष्यति।

झाँ० सखी—अवश्यमेव फलं भविष्यति। जहीहि विषादम्।

में क्लेश का संचार हो जाता है, और मुनि तथा मूर्खों में अकर्मण्यता आ जाती है, अतः इस स्वतन्त्रता को मैं रण से नहीं चाहती, किंतु अहिंसा से चाहती हूँ।

नौकर—माता, मैं सब कुछ के लिए प्रयास करूँगा।

(इसके अनन्तर नौकर चला जाता है।)

भारत माता—पुत्री, विक्टोरिया का राज्य सुन्दर ही है।

[इसके अनन्तर सेनासहित यूरोपियन प्रवेश करता है और भारतमाता को प्रणाम करता हुआ उसको ढीला बाँध कर चला जाता है।]

भारत माता—अरी पुत्री! मैं फिर क्यों बाँध दी गई हूँ? अच्छा, स्वतन्त्रता के लिए सर्वथा प्रयत्न करूँगी। संभावना है कि समय पर अवश्य ही फल मिलेगा।

झां० सखी—अवश्य ही फल होगा। दुःख न करो। थोड़े ही दिनों में पूर्ण

स्वल्पकालादेव सर्वथा स्वातन्त्र्यमुपगमिष्यति । मातः ! आगच्छ, सायं संजातम् । वहिः शीतं वाधते, इत्यन्तर्गमिष्यावः ।

(पटीक्षेपः ।)

(ततो निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति श्रीसर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि-महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाद-दीक्षितकृतौ भारतविजयनाटके पञ्चमोऽङ्कः ।

षष्ठोऽङ्कः ।

(ततः प्रविशति लोकपालेन परामृश्य व्यक्तोर्जायामहाराज्ञ्यश्चानुमतिमादाय राष्ट्रियमहासभायाः (काङ्ग्रेस) स्थापनाय ह्यमः सचिवः)

ह्यूमः—(मनसि) कथमद्यापि विद्रोहे हतानां सम्बन्धिनां हृदयेषु प्रतीकारवासना विवर्द्धते । मन्ये विवर्द्धमानया तया पुनरपि महान् विद्रोहः स्यात् । अतः समूलं तामुन्मूलयिष्यामि ।

स्वतन्त्रता मिल जायगी । माता, आओ, शाम हो गई है, बाहर जाडा लगता है, आओ अन्दर चलें । (परदा गिरता है ।)

[सब चले जाते हैं ।]

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित भारतविजय नामक नाटक का पञ्चम अंक समाप्त ।

षष्ठअङ्क

[इसके अनन्तर गवर्नर से सलाह कर तथा विक्टोरिया महारानी की आज्ञा ले कर, कांग्रेस की स्थापना के लिये सेक्रेटरी ह्यूम का प्रवेश होता है ।]

ह्यूम—(मन में) बलवे में मारे गये पुरुषों के उत्तराधिकारियों के हृदय में आज भी बदले की भावना क्यों बढ़ रही है । मेरी समझ में इसके बढ़ने से कहीं फिर भी बड़ा विद्रोह न खड़ा हो जाय। अतः इसे जड़ से नष्ट कर दूंगा।

(प्रकाशम्)

कः कोऽत्र भोः !

दौवा०—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो (जयतु जयतु देवः ।)

ह्यूमः—दौवारिक ! कोऽत्र लोकमाननीयः संभावितश्च ?

दौवा०—दादाभाई नौराजी णामत्थि (दादाभाई नौरोजी नामाऽस्ति,)

ह्यूमः—तमानय ।

दौवा०—जं देवो आणवेदि (यद् देव आज्ञापयति ।)

(इति निष्क्रान्तः)

ह्यमः—(मनसि)

साम्राज्याः प्रथयन् गुणाञ्जनपदेष्वालोचयन्दुर्जनान्
लोकेपूपकृतौ वितीर्णवसुभिः स्वान् सज्जनान् बोधयन् ।
विद्रोहाग्निकणाञ्जनेषु शमयन् शान्ति समुत्पादयन्
आत्मीयैरिह पक्षपातिभिरहं संस्थापये संसदम् ॥ १ ॥

(प्रकाश) कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) हजूर की जय हो ।

ह्यूम—द्वारपाल यहाँ पर लोकमान्य तथा सम्मानित कौन है ?

द्वारपाल—दादा भाई नौरोजी नाम के हैं ।

ह्यूम --उन्हें बुला लाओ ।

द्वारपाल—जो आज्ञा ।

[जाता है]

ह्यूम—(मन में)

महारानी मलका के गुणों को देश में फैलाता हुआ, दुर्जनों की आलोचना करता हुआ, लोगों में उपकार के बदले दिये गए धन से अपने को सज्जन बतलाता हुआ, मनुष्यों में विद्रोहाग्नि के स्फुलिङ्गों को शान्त करता हुआ, तथा शान्ति का जन्म देता हुआ मैं भारत वर्ष में अपने पक्षपातियों से कांग्रेस की स्थापना करता हूँ ॥ १ ॥

(ततः प्रविशति दादाभाई नौरोजीसहितो दौवारिकः)

ह्यूमः—दौवारिक ! त्वं स्वनियोगमशून्यं कुरु । (ततो निष्क्रान्तो दौवारिकः) नौरोजिन् ! संभावितानां सार्वदेशिकानामेकत्रोपविश्य विचाराय संसदं स्थापयितुमिच्छामि ।

नौरोजी युक्तम, परं तत्र भवने विजयपताका भारतीयानामेव स्यात्, येन भारतस्योन्नत्यै विधीयत इयं परिषदिति लोकानां वोधः स्यात्।

ह्यूमः—एवं भवतु, को दोषः । (ततो निष्क्रामति नौरोजी)

(पटीक्षेपः)

(अथ प्रविशति सुप्रसन्ना किमपि चिन्तयन्ती भारतमाता ।)

भा० माता—(मनसि)

स्वदासतादुःखविचारणक्षमान् स्वतन्त्रतायै प्रयतात्मनो जनान् ।

[इसके अनन्तर दादा भाई नौरोजी के साथ द्वारपाल आता है]

ह्यूम—द्वारपाल तुम अपने काम पर जाओ ।

[तब द्वारपाल चला जाता है ।]

नौरोजी साहब ! एक स्थान पर बैठ कर विचार करने के लिये सब देश के सम्मानित व्यक्तियों की समिति का संस्थापन करना चाहता हूँ ।

नौरोजी—ठीक है, परन्तु उस भवन पर भारतीयों की ही ध्वजा फहरायेगी, जिससे लोगों को यह मालूम हो जाय कि यह सभा भारत की समुन्नति के लिये कार्य करती है ।

ह्यूम—ठीक है, इसमें क्या हानि ?

[इसके अनन्तर नौरोजी जाते हैं]

(परदा गिरता है ।)

[इसके अनन्तर कुछ सोचती हुई प्रसन्नवदना भारतमाता आती है ।]

भारत माता—(मन में)

अपनी दासता के दुखःविचारने में समर्थ, तथा स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न-

उदारतानीतिकलाविचक्षणान् नियोजयिष्ये ननु राष्ट्रसंसदि ॥२॥

(ततः प्रविशति मातृदर्शनलालसो बालगङ्गाधरतिलकः ।)

तिलकः—(प्रणम्योपविश्य च) मातः ! किमपि चिन्तयन्ती सुप्रसन्नेव प्रतिभासि ?

भा० माता—युक्तमेव संभावितम् । विधीयते विविधदेशदेशान्तर्गतानामस्मदीयानां सुतानामेकत्र सङ्घीभूय स्वदुःखमोचनोपायविचाराय राष्ट्रीयसंसत् । मन्ये तत्र नीतिनिपुणा बहवो विद्वांसो गत्वाऽस्मदीयाभिलषितं साधयिष्यन्ति ।

तिलकः—अवश्यमेवमेव भविष्यति (पुनर्मातुर्बन्धनानि दृष्ट्वा दीर्घमुच्छ्वस्य) मातः ! किं कुर्याम् । प्रत्यहं ते बन्धनानि पाश्चात्त्यैर्दृढीक्रियन्ते ।

भा० माता—(बन्धनानि विलोक्य) मन्ये केनचिद्बन्धनकलायन्त्रेण निबद्धाऽस्मि । येन स्वत एव बन्धनानि दृढीभवन्ति ।

शील, उदारता और नीति शास्त्र में कुशल इन्हें राष्ट्रीय महासभा में लगा दूंगी ।

[तदनन्तर माता के दर्शन की लालसा से बाल गङ्गाधर तिलक आते हैं ।]

तिलक—(प्रणाम कर और बैठ कर) माता, कुछ विचारती हुई आज प्रसन्न-सी प्रतीत होती हो ।

भा० माता—तुम्हारा अनुमान ठीक ही है । अनेक देश देशान्तरों में रहने वाले हमारे बच्चे एकत्रित हो कर अपने दुःखों के निवारण के उपायों की विवेचना करने के लिये कांग्रेस सभा की आयोजना कर रहे हैं, मेरी समझ में वहां अनेक नीति-निपुण विद्वान् जा कर हमारे अभीष्ट की पूर्ति करेंगे ।

तिलक—ऐसा ही अवश्य होगा । (माता के बन्धनों को देख कर उसासें भर कर) माता क्या करैं, पाश्चात्त्यों से आपके बन्धन प्रतिदिन दृढ़ किये जा रहे हैं ।

भा० माता—(बन्धनों को देख कर) मालूम पड़ता है कि मैं बन्धन की मशीन से जकड़ दी गई हूँ, जिससे बन्धन आपसे आप ही कसते जाते हैं ।

तिलकः—मातः! पश्य, स्वराज्यलिप्सासमनन्तरमेते इङ्गलैण्डजा रुष्टाः करवृद्धया युक्तप्रदेशं दरिद्रयन्ति।

भा० माता—कुतस्तेषु रोषः?

तिलकः—तद्देशजा एव स्वातन्त्र्ययुद्धे प्रधानभूताः, कार्यकर्त्तारश्च। अथैते इङ्गलैण्डजा वङ्गं विभज्य तथैव विधातुमभिलषन्ति।

भा० माता—हा धिक्, हा धिक्, डङ्कनीप्रवन्धपणेन स्थायिपत्रकेण (इस्तमरारीपट्टकेन) च नियमितं प्रमाणीकृतं करं कथं विवर्द्धयिष्यन्ति?

तिलकः—धनलिप्साभिभूतानां किं नामाकरणीयम्। सन्धिमप्युद्दूषयन्ति। परमिमं तेषां मनोरथमुपलक्ष्य सुरेन्द्रनाथवनर्जिप्रभृतिभिरुद्घोपितम्, नायं वङ्गप्रदेशो विभिद्यते, किन्त्वस्माकं शरीराण्यव क्रकचेन विभिद्यन्ते। यावदिङ्गलैण्डजानां वङ्गभङ्गप्रतिज्ञां नैव नाशयिष्यामो वङ्गैक्यं च न स्थापयिष्यामस्तावन्नैव विरंस्यामः। मातः! पश्य, सुरेन्द्रनाथ-

---

तिलक—माता, देखो, स्वराज्य की अभिलाषा के अनन्तर ही ये क्रुद्ध हो कर टैक्स की वृद्धि से युक्त प्रान्त को दरिद्र कर रहे हैं।

भा० माता—उनके ऊपर अधिक क्रोध क्यों है?

तिलक—वही स्वतन्त्रता युद्ध में प्रधान रूप से कार्यकर्ता थे। अब ये अंग्रेज बंगाल का विभाग कर (बंगभंग कर) वैसा ही करना चाहते हैं।

भारतमाता—हाय धिक्कार है, हाय धिक्कार है, डंकनी प्रबन्ध की प्रतिज्ञा से एवं इस्तमरारी पट्टे से नियमित तथा प्रमाणीकृत टैक्स को ये कैसे बढ़ायेंगे?

तिलक—धन की अभिलाषा से सन्तप्त पुरुषों के लिये कौन सी निकम्मी वस्तु है। सन्धि को भी ये दूषित ठहरा देते हैं। परन्तु इनके इस मनोरथ को देख कर सुरेन्द्र नाथ वनर्जी आदिकों ने यह घोषणा की कि इस बंगाल के टुकड़े नहीं किये जाते, पर हमारे ही शरीर आरी से चीरे जाते हैं। जब तक हम अंग्रेजों की बंगभंग की प्रतिज्ञा का नाश न कर लेंगे और बंगाल को मिला न लेंगे, तब तक हम चैन नहीं लेंगे। माता, देखो। सुरेन्द्रनाथ के व्याख्यान

व्याख्यानेन सर्व एव वङ्गतरुणः सन्नद्धाः। मातः! आज्ञापयतु माम्, यावद् गत्वा अहमप्येतानुन्मार्गगामिनः प्रतिरोत्स्यामि।

भा० माता—वत्स! यथेच्छं व्रज। यथासमयमेतेषां सहाय्यमाचर। (ततो निष्क्रान्तस्तिलकः)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति एकत आगच्छन् खुदीरामः, अपरतश्च तिलकः)

खुदी०—(तिलकमवलोक्य) वन्दे मातरम्।

तिलकः—वन्दे मातरम्।

गोरण्डः—(पार्श्वतो गच्छन् पान्थमवलोक्य) रे पान्थ! किमसौ 'वन्दे मातर' मित्यनेन मां ताडयितुं संकेतयति?

पान्थः—नहि नहि, भारतमातरमसौ प्रणमति।

गोरण्डः—नैतत्त्वयाऽवगम्यते। (अपरमर्द्धभारतीयमवलोक्य) मित्र! किमसौ 'वन्दे मातर' मित्यनेन संकेतयति?

से सभी युवक बंगाली तैयार हो गए हैं। माता, मुझे आज्ञा दो, जाकर मैं भी उन्मार्गगामियों को रोकूं।

भा० माता—बच्चे जाओ, समय समय पर इनकी सहायता करो।

[तदनन्तर तिलक जाता है]

(परदा गिरता है)

[तदनन्तर एक ओर से आते हुए खुदीराम का और दूसरी ओर से तिलक का प्रवेश होता है।]

खुदीराम—(तिलक को देख कर) वन्दे मातरम्।

तिलक—वन्दे मातरम्।

गोरा—(पास से जाता हुआ) (एक पथिक को देख कर) अरे राहगीर, क्या यह 'वन्दे मातरम्' इससे मुझे मारने का संकेत करता है।

राहगीर—नहीं, नहीं, यह भारत माता को प्रणाम करता है।

गोरा—तुम यह नहीं जानते। (दूसरे अर्ध भारतीय को देखकर) मित्र, यह 'वन्दे मातरम्' से क्या सङ्केत करता है?

अर्द्धभारतीयः—(कर्णे) बधान, मारय इति ।
गोरण्डः—एवमेव संभाव्यते ।
तिलकः—खुदीराम ! माता समाज्ञापयति ।

अहिंसया वङ्गभङ्ग-प्रतीकारो विधीयताम् ।

खुदी०—नैनामाज्ञां मानयिष्ये कुटिले क्रूरकर्मणि ॥३॥

तिलकः—सर्वेष्वपि पाश्चात्त्येषु हिंसा न विधेया ।
खुदी०— मातुरियमाज्ञा शिरोधार्या (इति शिरसा प्रणमति)
तिलकः—अहमप्येवमेव युनज्मि ।

चपेटयोपहन्याद्य-स्तस्य दण्डैः प्रतिक्रिया ।
मातृभूमेर्निहन्तारं स्वर्लोकेऽपि न मर्षये ॥४॥

खुदी०—युक्तम् , आवयोरत्रांशे ऐकमत्यमेव (ततो निष्क्रान्तस्तिलकः)
(सक्रोधं परिक्रामन्)

अर्ध भारतीय—(कान में) बाँधो और मारो ।
गोरा—यही जँचता है ।
तिलक—खुदीराम माता आज्ञा देती है कि—
वङ्ग भंग का प्रतीकार अहिंसा से करना चाहिये ।
खुदीराम—इस कुटिल क्रूर कर्मवाले में मैं इस आज्ञा को नहीं मानूंगा ॥३॥
तिलक—सभी पाश्चात्त्यों की हिंसा नहीं करनी चाहिये ।
खुदीराम—माता की यह आज्ञा शिरोधार्य है ।

[सिर झुका कर प्रणाम करता है ।]

तिलक—मैं भी ऐसा ही समझता हूँ कि—
जो थप्पड़ मारे, उसका प्रतीकार डंडे से करना चाहिये । मातृभूमि के उत्पीडक को स्वर्ग में भी नहीं देख सकता ॥ ४ ॥
खुदीराम—ठीक है, इस विषय में हम दोनों का एक मत है ।

[इस के अनन्तर तिलक चले जाते हैं ।]

(क्रोध से घूमता हुआ)

किं सर्वानपि चूर्णये परिवृतान् युरूपदेशोद्भवान्
किं वा वङ्गविभेदकं खरजनं (कर्जन) लोकान्तरं प्रापये ।
किं वा गुप्तचरान् विकर्मनिरतान् स्वीयानपि त्रामये
किं कर्त्तव्यविमूढतामुपगतो न ज्ञातुमस्मि क्षमः ॥५॥

(ततः प्रविशति वङ्गदेशीयः कश्चिच्छ्रेष्ठी)

खुदी०—श्रेष्ठिन् ! नाद्यापि प्रतिज्ञातं सर्वं धनं प्रदत्तम् ।

श्रेष्ठी—सहस्रमध्ये पञ्च शतानि तु दत्तानि । अपराणि किञ्चित्कार्यमवलोक्यैव दास्यन्ते ।

खुदी०—कार्यं तु युगपदेव भविष्यति, मा कालातिपातं कार्षीः ।

श्रेष्ठी—अवश्यमेव दास्यामि, परं किञ्चित्कार्यसमनन्तरमेव । न जाने केनापि प्रपञ्चेन धनोपार्जनमेव युष्माभिर्विधीयते ।

खुदी—(निःश्वस्य) कदाचित्किञ्चिद्विधाने भेदस्फोटनं स्यादिति

क्या एकत्रित सभी यूरोपनिवासियों का चूर चूर कर दूं ? क्या वंगभंग करने वाले कर्जन को दूसरे लोक में पहुँचा दूं ? क्या कुकर्म में संलग्न अपनी जाति के गुप्तचरों को क्षोभित कर दूं ? मैं किंकर्तव्यविमूढ हो कर कुछ भी जानने में असमर्थ हूँ॥५॥

[इसके अनन्तर कोई बंगाली सेट आता है]

खुदी०—सेठ जी, प्रतिज्ञात सम्पूर्ण धन को आज तक भी आपने नहीं दिया ॥

सेठ—एक हजार में से पांच सौ तो दे दिये हैं; बाकी कुछ काम को देख कर ही देंगे ।

खुदीराम—काम तो एक साथ ही होगा । देर न करो ।

सेठ—अवश्य ही दूंगा, परन्तु कुछ कार्य के अनन्तर ही । न मालूम, तुम लोग किसी प्रपञ्च से धन कमा रहे हो !

खुदीराम—(सांस ले कर) कुछ करने में शायद रहस्य का भंडा फोड़ हो

वेपते मे हृदयम्। अस्तु। आत्मशुद्ध्यर्थं युष्माकंसंतोषार्थं च विधास्यामि।

(ततो निष्क्रान्तः श्रेष्ठी)

(मनसि ,

असौ यूरूपसंभूतो वङ्गभङ्गसमर्थकः ।
बमेनैनं हनिष्यामि न क्षमः कोऽपि रक्षितुम् ॥६॥

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति व्यवहारस्थानोपविष्टः कश्चिद् यूरूपीयः)

यूरूपीयः—कः कोऽत्र भोः !

दौवा०—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो (जयतु जयतु देवः ।)

यूरू०—न्यायाधीशं कालीचरणमानय ।

दौवा—जं देवो आणवेदि (यद्देव आज्ञापयति)

(निष्क्रम्य पुनस्तेन सह प्रविशति)

जाय, इस लिये मेरा हृदय काँपता है। आत्म शुद्धि के लिये और तुम लोगों के सन्तोष के लिये कुछ करेंगे।

[तदनन्तर सेठ चला जाता है।]

(मन में)

यूरोप देश में समुत्पन्न इस बंगभंग के समर्थक को बम से मार डालूंगा इसकी रक्षा करने में कोई समर्थ नहीं है ॥ ६ ॥

[परदा गिरता है]

[इसके अनन्तर अदालत में बैठे हुए किसी यूरोपियन का प्रवेश होता है।]

यूरोपियन्—कोई है ?

द्वारपाल—(प्रवेश कर) हजूर की जय हो।

यूरोपियन्—जज कालीचरण को बुलाओ।

द्वारपाल—जो आज्ञा।

[जाकर फिर उसके साथ आता है।]

यूरू०—कालीचरण ! श्रूयते, वङ्गभङ्गविनाशाय कृतायां परिषदि त्वदीयपत्न्या बहुमूल्ये कङ्कणे दत्ते, त्वमस्माकमनुचरः नैतत्त्वदीयपत्न्या उचितम्, धिक् त्वाम् ।

काली०—(मनसि) कथमयं मामन्यसमक्षं तिरस्कुरुते । (प्रकाशम्) सत्यमेतत्, अहमनुचरः, न मे पत्नी ।

यूरू०—कथमुत्तरयसि ? समुन्नतिं ते प्रतिरोत्स्यामि ।

काली०—(ईषद्रक्तेक्षणः) गृहाण, दासतामुक्तिपत्रम्, नातः परं व्यावहारिकदासतां करिष्यामि, किन्तु वाक्कीलवृत्त्यैवोपजीविष्यामि ।

(इति निष्क्रान्तः)

(ततः प्रविशति राजपुरुषाभ्यां गृहीतः खुदीरामः)

यूरू०—किमपराद्धमनेन ?

राज०—अनेन वमनामकास्त्रेण एको राजकीययूरूपीयो हतः ।

यूरोपियन—कालीचरण, सुनते हैं कि बंगभंग के विनाश के लिए की गई सभा में तुम्हारी स्त्री ने बहुमूल्य दो कंगने दिये हैं । तुम हमारे नौकर हो, यह तुम्हारी स्त्री ने ठीक नहीं किया, तुम्हें धिक्कार है ।

कालीचरण—(मन में) यह दूसरों के सामने मुझे क्यों अपमानित करता है । (प्रकाश) यह सत्य है, परन्तु मैं नौकर हूँ, मेरी स्त्री नहीं ।

यूरोपियन—कैसा उत्तर देते हो, तुम्हारी तरक्की रोक दूंगा ।

कालीचरण—(कुछ लाल आँखें कर) यह त्यागपत्र लो, इसके आगे मैं जजी की नौकरी नहीं करूँगा, परन्तु वकालत से अपनी जीविका का निर्वाह करूँगा ।

[जाता है]

[इसके अनन्तर दो पुलिसमैन से पकड़ा हुआ खुदीराम आता है]

यूरोपियन्—इसने क्या अपराध किया है ?

पुलिस—इसने वम नामक अस्त्र से एक सरकारी यूरोपियन की हत्या की है ।

खुदी०—मया स तु भ्रमाद् हतः, नाहं तं हन्तुमैच्छम् । तद्धननम् प्रति निर्दुष्टोऽस्मि ।

यूरू०—कुत इदमस्त्रं शिक्षितम् ?

खुदी०—मयाऽन्यदेशात् शिक्षितम्, शिक्षिताश्चात्रत्या वहवः । तन्निर्माणस्यायं विधिः ।

यूरू०-मौनमास्ताम् । त्वदुक्तभ्रान्तौ प्रमाणाभावात्प्राणदण्डेन दण्ड्यसे।

खुदी०—अनुगृहीतोऽस्मि, वन्दे मातरम् (राजपुरुषौ गृहीत्वा गच्छतः) (निष्क्रामन्)—

सर्वे भवन्तो योद्धारो देशरक्षादृढव्रताः ।
वङ्गभङ्गविभेदार्थं यतन्तां बुद्धिपूर्वकम् ॥ ७ ॥

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति बन्धनगृहद्वारि पनसं गृहीत्वा अरविन्दभगिनी)

खुदीराम—मैंने तो उसे भ्रम से मार डाला है, मैं उसे नहीं मारना चाहता था, उसकी हत्या के लिए मैं निर्दोषी हूँ ।

यूरोपियन—यह अस्त्र कहाँ से सीखा ?

खुदीराम—मैंने यह अस्त्र दूसरे देश से सीखा है । और बहुतों को सिखा भी दिया है । उसके बनाने का यह प्रकार है ।

यूरोपियन—चुप रहो, तुमसे कथित भ्रम के विषय में प्रमाण न होने से फाँसी की सजा दी जाती है ।

खुदीराम—आपने बड़ी कृपा की । 'वन्दे मातरम् ।'

[दो पुलिस मैन पकड़ कर ले जाते हैं ।]

(जाते हुए)

आप सब योद्धाओं ने देश की रक्षा के लिए दृढ़ व्रत कर लिया है, अतः वंगभंग के विनाश के लिए बुद्धिपूर्वक प्रयत्न करें ॥ ७ ॥

(परदा गिरता है)

[इसके अनन्तर जेलखाने के दरवाजे पर कटहल लेकर अरविन्द की बहिन आती है ।]

रा० पुरुषः—(उपसृत्य) किमिदम्, । इहाऽऽसिद्धस्य मम भ्रातुः कन्हैयादत्तस्य सेवायामिदमुपनय (कर्णे एवमेवम्)

(राजपुरुषः उत्कोचं गृहीत्वा कन्हैयादत्तसमीपमुपनयति ।)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति शय्यायां शयानो ज्वराक्रान्तः कन्हैयादत्तः)

कन्है०—(मनसि) अरे कथमसौ नरेन्द्रोऽस्माकं प्रधानं भूत्वा राजकीयः साक्षी संजातः । हा श्रूयते सर्वानपि सहायकानसौ बन्धयितुमिच्छति । धिङ् माम् अस्माकं विश्वासाद् धनसाहाय्यदातॄनपि दिदण्डयिषति । आः किं नाम सर्वोऽपि वङ्गदेशो दण्डयिष्यति । आः किं कुर्याम् । असहाय एव संवृत्तः निरुपायश्चास्मि अस्तु । क्षुधितोऽस्मि । (उत्थाय) तावत्पनसमेव विपाट्य भोक्ष्ये (इति लेखन्या विपाटयति) तदन्तर्गुलीकासहितं पिस्तौलमवलोक्य) (अतिप्रसन्नः सन्, पुनः शय्यायामुपविश्य)

पुलिस—(पास जाकर) यह क्या है ?

अरविन्द की बहिन—यहां पर कैद किये हमारे भाई कन्हैयादत्त के पास इसे ले जाओ । (कान में—ऐसा-ऐसा)

[राजपुरुष घूस ले कर उसे कन्हैयादत्त के पास ले जाता है ।]

[परदा गिरता है ।]

[तदनन्तर शय्या पर पड़ा हुआ ज्वर से पीड़ित कन्हैयादत्त का प्रवेश होता है ।]

कन्हैया—(मन में) अरे यह नरेन्द्र हमारा प्रधान हो कर किस तरह सरकारी गवाह हो गया है, हाय, सुनते हैं कि यह सभी सहायकों को बँधवाना चाहता है । मुझे धिक्कार है कि हमारे विश्वास से धन द्वारा सहायता देने वालों को भी सजा दिलाना चाहता है । अरे, क्या सम्पूर्ण बंगाल को सजा मिलेगी । क्या करूँ असहाय हो गया हूँ और उपाय-हीन भी हूँ । अच्छा, भूखा हूँ । (उठ कर) तब तक कटहल को ही फाड़ कर खाता हूँ । (कलम से फाड़ता है) (उसके अन्दर गोली के साथ पिस्तौल को देख कर, अत्यन्त प्रसन्न हो फिर शय्या पर बैठ कर) (प्रकाश)

(प्रकाशम्) (आकाशे तां लक्षीकृत्य) जानामि ते हृदयम्,

किं नाम मे हृदयमेव समेत्य भद्रे,
विज्ञापितः समवलोक्य दशां स्वकेपाम् ।
यत्साधनं त्विदमदायि ततस्तु हृद्यां
देशस्य तां निजजनस्य च साधयिष्ये ॥ ८ ॥

(विचिन्त्य,) (मनसि) आः कथमेनं घातये ? असौ देशद्रोही राजकीयसाक्षी संजात इति सर्वतो रक्ष्यते राजकीयैः पुरुषैः । अथवा, अलमतिविचारेण । अहमपि राजकीयः साक्षी भवितुमभिलषामीत्येनं प्रतार्य आनाय्य च संपादयिष्ये देशस्याभिलषितम् ।

(मसीं पत्रं चादाय लिखित्वा स्वयं वाचयति)

सखे ! प्रणामाः शतशो भवन्तु स्वरक्षणे त्वामनुबोधयामि ।
त्वदीयवाक्येन ममापि वाक्यं संवादमायात्विति साधयस्व ॥९॥

इति भवदीयः कन्हैयाः सुहृत् ।

(आकाश में उसे लक्ष्य कर) तुम्हारे हृदय को जानता हूँ ।

हे महिले, क्या मेरे हृदय में ही आ कर और अपने लोगों की दशा देख कर तुमने वह साधन [वह उपकरण] दिया है जिससे देश की और अपने लोगों की मनोहारिणी वह बात करूँगा ॥ ८ ॥

(सोच कर, मन में) अरे किस भांति इसे मारूँ, यह देशद्रोही सरकारी गवाह हो गया है, अतः यह चारो ओर पुलिस से सुरक्षित है, अथवा अधिक विचारना व्यर्थ है । मैं भी सरकारी गवाह होना चाहता हूँ इस भाँति इसे धोखा दे कर तथा बुलवा कर देश के मनोरथ को सिद्ध करूँगा ।

[स्याही और पत्र ले कर, लिख कर स्वयं बाँचता है ।]

हे मित्र, शतशः प्रणाम के अनन्तर मैं तुम्हें बतलाना चाहता हूँ कि तुम्हारी बात से हमारी बात का भी मेल रखा जाय-ऐसा करो ॥ ९ ॥

आप का मित्र कन्हैया ।

कः कोऽत्रभोः !

दौवा०—(प्रविश्य) जं आणवेदि । (यदाज्ञापयति)

कन्है०—इदं पत्रं नरेन्द्रसमीपं नय। वक्तव्यं च किमपि परामष्टुं त्वां समाह्वयति । मा भूदावयोर्वचने विसंवाद इति पूर्वमेव संवदितव्यमिति । (ततः पत्रं गृहीत्वा निष्क्रान्तो दौवारिकः)

कन्है०—(पनसमेकतोऽपनयति) (आकाशे नरेन्द्रं लक्ष्यीकृत्य)

रे देशघातक ! नरेन्द्र ! धनातिगर्धिन् ।
भुङ्क्ष्व स्वकर्मफलमद्य यथार्हमेतत् ।
यत्त्वं प्रयासि निरये ननु युक्तमेतत्
सर्वोऽपि याति निजकर्मफलानुबन्धम् ॥ १० ॥

(ततः प्रविशति नरेन्द्रेण सह दौवारिकः, नरेन्द्रो यथास्थानमुपविशति, दौवारिको निष्क्रामति ।)

कोई है ?

द्वारपाल (आकर) जो आज्ञा

कन्हैया—इस पत्र को नरेन्द्र के पास ले जाओ, और उससे कहो कि कुछ सलाह करने के लिए तुम्हें बुलाया है। हम दोनों के वचनों में विरोध न हो, इस लिए पहले ही मिल लेना चाहिये।

(इसके अनन्तर पत्र लेकर द्वारपाल चला जाता है।)

कन्हैया—(कटहल को एक ओर हटाता है) (नरेन्द्र को लक्ष्य कर) अरे देशद्रोही धनाभिलाषी नरेन्द्र, तुम्हें तुम्हारे कार्य के उपयुक्त फल का मजा चखाता हूँ। जो तुम नरक जाओगे, वह तो ठीक ही है, सभी अपने कर्मों के फल के अनुसार जाते हैं ॥ १० ॥

[तदनन्तर नरेन्द्र के साथ द्वारपाल आता है, नरेन्द्र अपनी जगह पर बैठ जाता है, द्वारपाल चला जाता है।]

कन्हैया:—आगच्छ, मित्र ! स्वागतम्, कथय किं तत्र व्यक्तव्यम् ?

नरेन्द्र:—सर्वेऽप्येते धनदानेन हिंसां समुत्साहयन्ति ।

कन्हैया:—इहापि कतिचन मृषैव आसिद्धाः । इति कथमसहायकान् वक्ष्यामि ?

नरे० मयोक्तं त्वयापि वक्तव्यमेव, नान्यथा मोक्षः ।

कन्हैया:—कथमनपराधिनो दिदण्डयिष्यन्ते ।

नरे०—एवमेव सौख्यम्, वृत्तिलाभो धनलाभश्च

कन्है०—(सक्रोधं क्षुद्रभुशुण्डीं) (पिस्तौलं) गृहीत्वा) रे रे प्रपञ्चकारिन्, मिथ्यासुखाभिलाषुक ! (इत्युक्त्वा लघुभुशुण्डीं चालयति, नरेन्द्रः पलायते, तं निघ्नन् कन्हैया अपि अनु धावति) (आकाशे) साधु ! साधु !!

नरे० निहतोऽस्मि (इत्युक्त्वा निपतति ।)

कन्हैयाः - (पुनस्तमुत्तानीकृत्य वक्षसि पदं स्थापयित्वा मुखे क्षुद्रभुशुण्डीं

कन्हैया—आओ मित्र, तुम्हारा स्वागत करता हूँ, कहो वहाँ क्या कहना है ?

नरेन्द्र—ये सभी धन दे कर हिंसा करने के लिए उत्साहित करते हैं ।

कन्हैया—यहाँ तो कुछ गलती से ही पकड़ लिए गये हैं, तो इन असहायकों को कैसे कहें ।

नरेन्द्र—मेरी कही हुई बात को तुम्हें भी कहना चाहिए, नहीं तो छुटकारा नहीं है ।

कन्हैया—अनपराधियों को दण्ड कैसे दिलाओगे ।

नरेन्द्र—इस में सुख है, जीविका की प्राप्ति होगी, और धन मिलेगा ।

कन्हैया—(क्रोध से पिस्तौल लेकर) अरे रे प्रपञ्ची, झूठे सुख के चाहने वाले ! (यह कह कर पिस्तौल चलाता है, नरेन्द्र भागता है, उसको मारता हुआ कन्हैया भी दौड़ता है ।)

(आकाश में) शाबाश ! शाबाश ! !

नरेन्द्र—मार डाले गए । (कह कर गिर पड़ता है ।)

कन्हैया—(फिर उसे साधा लिटा कर और उसकी छाती पर पैर रख कर,

प्रवेश्य च) स्वकर्मफलमुपभुज्यताम् । (इत्युक्त्वा तांड् तांड् इति द्वे गुलिके चालयति, पिस्तौलं प्रक्षिप्य स्वस्थाने गत्वा शेते) ।

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति अधिकरणासनस्थो यूरूपीयः, कन्हैयां गृहीत्वा कूटपालश्च)

यूरू०—कूटपाल ! किमस्याधिकरणम् ?

कूट०—अनेन राजपक्षीयः साक्षी हतः ।

यूरू०—अयं तु कारागारेऽवरुद्धः ।

कूट०—एवमेवेदम्, परं छलेन तमानाय्य क्षुद्रभुशुण्डिकया निहतवान् ।

यूरू०—कथं तत्र क्षुद्रभुशुण्डिकागच्छत् ?

कूट०—नैतज्जानामि ।

यूरू०—(कूटपालमुखमवलोकयन्) (मनसि) न जाने, अयमप्येतत्-पक्षीय एव स्यात् । (प्रकाशम्) कन्हैयाः ! किमत्र प्रतिवचनम् ?

और मुख में पिस्तौल रख कर) अपने कर्म के फल को भोगो । (यह कह कर ताड़ ताड़ दो गोली मारता है, फिर पिस्तौल को फेंक कर अपनी जगह पर जा कर सोता है ।]

(परदा गिरता है)

[इसके अनन्तर जज के स्थान पर बैठे हुए यूरोपियन का प्रवेश होता है । कन्हैया को पकड़ कर कोतवाल आता है]

यूरोपियन—कोतवाल, इस पर क्या अभियोग है ।

कोतवाल—इसने सरकारी गवाह को मार डाला है ।

यूरोपियन—यह तो जेल खाने में बंद था ।

कोतवाल—यह ठीक है, लेकिन इसने उसे छल से बुलवा कर पिस्तौल से मार डाला है ।

यूरोपियन—पिस्तौल वहाँ कैसे पहुँची ?

कोतवाल—यह नहीं जानता ।

यूरोपियन—(कोतवाल के मुख को देखता हुआ) (मन में) न मालूम, यह भी इन्हींके पक्ष का हो । (प्रकाश) कन्हैया, तुम्हारा क्या उत्तर है ?

कन्है०—नाहं किमपि जानामि, तदानीं ज्वराक्रान्तः शयानश्चाभवम्।

यूरू०—कूटपाल ! अस्ति कोऽपि साक्षी ?

कूट०—तत्रत्याः सर्वेऽपि एकपक्षीयाः न किञ्चित्कथयन्ति। परं सन्त्यपरे साक्षिणः।

यूरू०—सर्वमप्रयोजकम् (कन्हैयोन्मुखं पश्यन्) कन्हैयाः प्रयोगेण विना नैव क्षुद्रभुशुण्डी अमुना प्रकारेण निहन्तीति निश्चीयते त्वयैवासौ हत इति प्राणदण्डेन दण्ड्यसे।

कन्हैयादत्तः—अनुगृहीतोऽस्मि, सफलं जन्म, वन्दे मातरम्। (ततः स कूटपालगृहीतो निष्क्रामति)।

यूरू०—(मनसि) आः सर्वेऽप्येते वङ्गोद्भवा निर्भीका उपद्रवन्ति। सम्राजः सविधे पत्रं लिखित्वा गवर्नरद्वारा प्रैषयिष्यामि (इति विचिन्त्य लिखित्वा स्वयं वाचयति)।

(प्रकाशम्)

कन्हैया—मैं कुछ नहीं जानता, उस समय तो मैं ज्वर से पीड़ित हो सो रहा था।

यूरोपियन—कोतवाल, कोई गवाह है ?

कोतवाल—वहाँ के सभी एक ही दल के होने से कुछ नहीं कहते हैं, लेकिन दूसरे गवाह हैं।

यूरोपियन—यह सब व्यर्थ है। (कन्हैया की ओर देख कर) कन्हैया, मारे बिना; पिस्तौल इस ढंग से नहीं मारती, जिससे निश्चय होता है कि तुम्हीं ने इसे मारा है, अतः तुम्हें फांसी की सजा दी जाती है।

कन्हैयादत्त—अनुगृहीत हूँ, मेरा जन्म सफल है, 'वन्दे मातरम्'।

[तदनन्तर कोतवाल से पकड़ा हुआ कन्हैया जाता है।]

यूरोपियन—अरे ये सभी बंगाली निडर हो उपद्रव करते हैं। सम्राट् के समीप पत्र लिख कर गवर्नर के द्वारा उसे भेजूंगा।

[यह सोच कर, लिख कर स्वयं बाँचता है।]

वङ्गभङ्गसमुद्भूतक्रोधादाध्मातचेतसः ।
मृत्योरभयमापन्ना मदीयांस्त्रासयन्त्यमी ॥११॥

इति वङ्गस्याविच्छेदो विधेयः, राज्यस्थानपरिवर्तनञ्च देहल्यां कर्त्तव्यमिति । भवदीयोऽनुचरः (पुनः पत्रं गृहीत्वा निष्क्रामति ।)

(ततः प्रविशति सखीसहिता भारतमाता)

भा० माता—सखि ! श्रूयते खलु इदानीं जर्मन इङ्गलैण्डफ्रांसरूसवेल्जियमादिभिः सह एकाकी युद्ध्यमानो विजयते प्रत्यहमग्रेसरति च । अस्माकमधिपतिरिङ्गलैण्डराज उद्विजते । एकधर्मावलम्बिनः सहभोजिनश्च कथं परस्परं युध्यन्ते ? श्रूयते यदि मत्पुत्रेषु सहभोजः स्यात्तदा मम वन्धच्छेदः परस्परं प्रेम स्वराज्यं च स्यात् ।

सखी—से सहायआ तुर्का आस्टेरिया संति परं ते अकिंचिकराओ चेव सहभोअणाइवत्ता तु एवं चेव (अस्य सहायकाः तुर्का आष्ट्रियाः सन्ति परं ते अकिञ्चित्करा एव, सहभोजनादिवार्ता तु एवमेव ।)

"बंगभंग से समुत्पन्न क्रोध से जलते हुए चित्त से युक्त एवं मृत्यु से भी निर्भय ये हमारे लोगों को डरा रहे हैं ॥ १ ॥

इस लिये बंगाल एक कर दिया जाय, और राजधानी का परिवर्तन दिल्ली में कर दिया जाय । आपका अनुचर ।

[तदनन्तर पत्र लेकर जाता है]

इसके अनन्तर सखी के साथ भारतमाता आती हैं ।]

भारतमाता—सखी, सुनती हूँ कि इस समय अकेला जर्मन, इंगलैण्ड फ्रांस, रूस, बेलजियम आदि के साथ लड़ता हुआ विजय प्राप्त कर रहा है और प्रतिदिन आगे बढ़ रहा है, इससे हमारे प्रभु इङ्गलैण्ड के राजा घबड़ा उठे हैं । एक धर्म के मानने वाले एवं साथ भोजन करने वाले आपस में क्यों लड़ते हैं ? सुनती हूँ कि यदि हमारे लड़कों में सहभोज हो जाय तो स्वराज्य मिल जाय ।

सखी—इसके सहायक टर्की और आस्ट्रिया के निवासी हैं, परन्तु वे कुछ नहीं हैं । सहभोज आदि की बात तो ऐसी ही है ।

(ततो यूरूपीयः प्रविश्य मातुश्चरणयोर्निपतति)

यूरू०—भद्रे ! वन्धनानि ते शिथिलयामि (इति वन्धनानि शिथिलीकरोति) भारतमातः ! जर्मनयुद्धे मह्यं साहाय्यं प्रदेहि, उपकुरुष्व, रक्ष माम् , परमापत्तिमापन्नोऽस्मि ।

भारत०—मदीयसन्तानेष्विदं मद्वचनमुद्घुष्यताम् ।

मम कुक्षिसमुद्भूता वीराः शौर्यानुगामिनः ।
इङ्गलैण्डशत्रुं संग्रामे प्रापयध्वं यमालयम् ॥ १२ ॥

यूरू०—(निष्क्रम्य तथा करोति) (दृष्ट्वा साश्चर्यम्) (मनसि) आः कथं डिण्डिमाशब्दश्रवणानन्तरमेव सहस्रशो वीरा निर्गच्छन्ति (पुनरुपसृत्य) मातस्त्वदीयाज्ञाश्रवणसमनन्तरमेव सहस्रशो वीरास्तव सुता गच्छन्ति रणभूमिम् , परमर्थेनापि प्रार्थये ।

भारत०—

सुभटैर्वसुधान्यैश्च साहाय्यं ते करोम्यहम् ।

[इसके अनन्तर एक यूरोपियन आ कर माता के चरणों पर गिरता है ।]

यूरोपियन—आर्ये, तुम्हारी वेडियाँ ढीली कर दूँ, (वेडियों को ढीला करता है ।) जर्मन युद्ध में मेरी सहायता करो, मेरे साथ उपकार करो, मेरी रक्षा करो, मैं अत्यन्त आपत्ति में पड़ा हुआ हूँ ।

भारतमाता—मेरे पुत्रों में मेरे इस वचन की घोषणा कर दो—

'मेरे गर्भ से समुत्पन्न एवं शौर्य से समन्वित वीरो, इंगलैण्ड के शत्रुओं को यमराज के घर पहुँचा दो ॥ १२ ॥

यूरोपियन—(निकल कर वैसा करता है) (देख कर आश्चर्य के साथ) (मन में) अरे डिंडम नाद के सुनने के अनन्तर ही हजारों वीर किस तरह चले आ रहे हैं । (फिर जा कर माता, तुम्हारी आज्ञा सुनने के अनन्तर ही हजारों तुम्हारे वीर लड़के रणस्थली के लिये चले आ रहे हैं, परन्तु मैं धन की भी प्रार्थना करता हूँ ।

भारतमाता—वीरों से और धन धान्य से मैं तुम्हारी सहायता करती हूँ,

मम किं नाम स्वातन्त्र्यं त्वमप्याशु करिष्यसि ॥१३॥

यूरू०—मातः ! विजयसमनन्तरमेव तव स्वातन्त्र्यं करिष्यामि ।

भारत०—गच्छ, विजयस्व । (ततः स निष्क्रामति)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति विजयानन्तरं यूरूपीयो विभवतश्च परिवारः)

यूरू०—अनुचर ! पश्य, क इमे द्वारि कोलाहलं कुर्वन्ति ?

अनु० –(बहिर्गत्वा प्रविश्य) संग्रामे मृतानां दायादाः वृत्तिं, केचिच्च पुरस्कारमपरे माननीया गांधीप्रभृतयः स्वराज्यमभिकाङ्क्षन्ति ।

यूरू०—सर्वानपनय, कथयस्व च—यद्दातव्यं पुरस्कारादिकं तद्दत्तमेव नातः परं किञ्चिद्दास्यामः (पुनर्निष्क्रामन्तं तम्) तिष्ठ, इदमुद्घुष्यताम् एतद्रोलटनियमानुसारेण यः कश्चिदस्माकं विरुद्धं वक्ष्यति स महता दण्डेन दण्डयिष्यते (सर्वे निर्गच्छन्ति, गांधीमहोदयस्तिष्ठति)

और तुम भी मेरे लड़कों को शीघ्र ही स्वतन्त्र कर देना ॥ १३ ॥

यूरोपियन—माता, विजय के अनन्तर ही तुम्हारे लड़कों को यहाँ स्वतन्त्र कर दूंगा ।

भारतमाता—जाओ, विजय प्राप्त करो । [तदनन्तर वह जाता है]

(परदा गिरता है)

[तब विजय के अनन्तर शान से एक यूरोपियन का प्रवेश परिवार के साथ होता है ।]

यूरोपियन—नौकर देखो, ये दरवाजे पर कौन शोर कर रहे हैं ?

नौकर—(बाहर जा कर फिर प्रवेश कर) संग्राम में मरे हुओं के उत्तराधिकारी पेंसिन चाहते हैं, कुछ इनाम मांगते हैं, और दूसरे माननीय गांधी आदि स्वराज्य चाहते हैं ।

यूरोपियन—सब को हटाओ, और उनसे कह दो कि जो ईनाम आदि देना था वह दे दिया है । इससे अधिक कुछ नहीं देंगे । (फिर जाते हुए उससे) ठहरो, इसकी घोषणा कर दो कि इस रॉलेट एक्ट के अनुसार उसे कड़ी सजा दी जायगी, जो कोई हमारे विरुद्ध बोलेगा । [सब जाते हैं । महात्मा गांधी रह जाते हैं]

म० गांधी—स्वप्राणदण्डेनापि रोलटनियमं नाशयिष्ये (पुनरन्तः प्रविश्य) अयि महानुभाव ! किमेतदेव धनजनसाहाय्यदानस्य फलमुदयते? यद् रोलटनियमेन नियम्यामहे ।

यूरू०—गच्छ, निःसर, नाधिकं किमपि वक्तव्यम् । युष्माकं योग्यतासमनन्तरं द्रक्ष्यामः ।

म० गांधी—वयं योग्या अयोग्या वेति परीक्षणं त्वदधीनमेव, यद्यस्मान् योग्यान्विधातुं न प्रभुस्तदा निःसर । वयं स्वयमेव योग्या भविष्यामः । शास्त्राभ्यासपरीक्षणे च वयं सर्वदैव जितवन्तः, युद्धेऽपि अग्रे भूत्वा सर्वाञ्जर्मनान्विजित्य विजयकेतुरस्मदीयैरेव लब्धः, विक्टोरियाक्रासपदकस्य लब्धारोऽस्मदीया एव ।

यूरू०—न किञ्चिदपि नवीनमाविष्क्रियते ।

म० गांधी—अत्रास्माकं पराधीनतैव कारणम्, प्रथमं पुष्पकं वायुयानं केनाविष्कृतम् ? पूर्वं तन्त्रीशून्य (वायर लैस) यन्त्रादिकं विना

महात्मा गांधी—फांसी की सजा पर भी रॉलेट एक्ट को तोड़ूँगा। फिर अंदर प्रवेश कर) महाशय, क्या धन जन से सहायता देने का यही फल मिला है कि रॉलेट ऐक्ट से हम जकड़े जा रहे हैं ।

यूरोपियन—जाओ, निकलो, इससे अधिक कुछ नहीं कहना है कि तुम्हारी योग्यता के अनन्तर तुम्हें कुछ देंगे ।

महात्मा गान्धी—'हम योग्य हैं या अयोग्य' इस की जांच तो तुम्हारे अधीन है। यदि तुम हमें योग्य नहीं बना सकते, तो निकलो, हम स्वयं ही योग्य हो जायेंगे। शास्त्रों की परीक्षा में हम सदैव जीते हैं, युद्ध में भी सब से आगे हो कर सब जर्मनों को जीत कर विजयपताका हमीने पाई है।। 'विक्टोरिया क्रास' पद के पाने वाले हमी लोग हैं ।

यूरोपियन—तुम कुछ नवीन आविष्कार नहीं करते हो।

महात्मा गांधी—इसका कारण तो पराधीनता है। मेघनाद के युद्ध में वायुयान (हवाई जहाज) का आविष्कार पहले किसने किया था? पहले वायर लेस आदि मशीनों के विना, कुरु क्षेत्र में होने

कथं कुरुक्षेत्रे जायमानस्य भारतयुद्धस्य ज्ञानमभवत्? तत्तु सर्वतोऽप्यधिकम्, यत् करामलकवत् प्रत्यक्षमिव सर्वमपि प्रत्यभासत। किं नाम युष्माभिराविष्कृतम्? अग्न्यस्त्रवरुणास्त्रवायव्यास्त्रपर्वतास्त्रब्रह्मास्त्रादीनामद्याप्यनुद्भावात्।

यूरू०—युष्माभिरिदानीं किमिति न प्रकटीक्रियते?

म० गांधी—अस्वातन्त्र्यात्। यदपि प्रकटीक्रियते भानुतापयन्त्रादिकं तदपि सहायकाभावाद् विनश्यत्येव। पुष्पवृक्षफलादिषु चैतन्यसंबन्धोऽस्माभिरेव साधितः, किं बहुना। महाभारते वीराणां विनाशकारकं युद्धकारणमग्न्यस्त्रादिकमेवेति मत्वा स्वयमस्माभिस्तत्सर्वं विनाशितम्। राज्योपभोगादिकं क्षणिकमकिञ्चित्करञ्च परिज्ञाय योगब्रह्मज्ञानादिकमात्यन्तिकसुखसाधकमस्मदीयैरेव प्रकटीकृतम्। परं सर्वमप्येतद्देशस्वातन्त्र्य एव जातम्।

यूरू०—गच्छ, गच्छ। नाहं स्वातन्त्र्यं दास्ये, यूयं कीदृशा योग्याश्चेति परीक्षिष्ये।

वाले भारत युद्ध का ज्ञान कैसे हुआ था। वह तो सबसे अधिक था कि हाथ में रक्खे हुए आँवला के समान सब कुछ प्रत्यक्ष-सा प्रतीत होता था। तुमने क्या आविष्कार किया है। आग्नेयास्त्र, वरुणास्त्र, वायव्यास्त्र, पर्वतास्त्र, ब्रह्मास्त्र आदि का तो आज भी आविष्कार नहीं हुआ है।

यूरोपियन—तुम इस समय उन्हें प्रकट क्यों नहीं करते।

महात्मा गान्धी—परतन्त्रता के कारण। जो भी सूर्य की किरणों का उतरना, आदि निकालते हैं, वह भी सहायताके न मिलने से नष्ट ही हो रहे हैं। पुष्प, वृक्ष, फल आदि में जीवों का साक्षात्कार हमीने बतलाया है। अधिक क्या कहें; महाभारत में वीरों के विनाशक एवं आग्नेयास्त्र आदि को ही युद्ध का कारण मान कर हमने स्वयं उन सबका नाश कर दिया है। राज्यसुखोपभोग आदि को क्षणिक तथा व्यर्थ जान कर आत्यन्तिक सुख प्रदान करने वाले, योगशास्त्र ब्रह्मज्ञान आदि हमी ने प्रकट किये हैं। परन्तु यह सभी देश की स्वतन्त्रता में ही हुआ है।

यूरोपियन—जाओ, जाओ, न तो मैं स्वतन्त्रता दूंगा और न यह जाँच ही करूंगा कि तुम कैसे और कितने योग्य हो।

(म० गान्धी सक्रोधं निष्क्रामन् अहिंसया युद्धाय आह्वयते ।)

यूरू०—(मुल्तानसेनापतिमाह्वयति, परिचारकेण सह सेनापतिः प्रविशति) सेनापते ! नगरे आज्ञाविरुद्धान् संघीभूतान्सर्वान् गुलिकाभिर्घातय ।

से०—नाहमशस्त्रपाणिषु शस्त्रं चालयिष्ये ।

यू०—(सक्रोधम् शस्त्रवस्त्राणि निधेहि) अनुचर ! कारागारे एनं नय । (अनुचरस्तथा करोति) (ततोऽपरः सेनापतिः प्रविश्य)

सेना०—(अङ्गुलिद्वयेन शिरःप्रान्ते नमस्कृत्य) महाराज ! इदं विक्टोरियाक्रासपदकं प्रतिगृहाण, न वयमन्यायिनामनुगन्तारः । (दत्त्वा निष्क्रामति) (धनिकौ प्रविशतः)

एकः—इमं रायबहादुरगलपट्टकं गृहाण ।

अपरः—इमं खानबहादुरपट्टकं गृहाण । (दत्त्वा निष्क्रामतः)

(महात्मा गान्धी—क्रोध से जाते हुए अहिंसा के द्वारा युद्ध के लिये चैलेंज देते हैं)

यूरोपियन—(मुल्तान के सेनापति को बुलाता है । नौकर के साथ सेनापति आता है) सेनापति, नगर में आज्ञा के प्रतिकूल एकत्रित सभी को गोलियों से मार दो ।

सेनापति—मैं निहत्थों पर शस्त्र नहीं चलाऊँगा ।

यूरोपियन—(क्रोध से) शस्त्र और पोशाक को मेरे पास रख दो । नौकर, इसे जेलखाने ले जाओ ।

(नौकर वैसा करता है, तब दूसरा सेनापति आ कर, और सिर के पास दो अंगुलियों से नमस्कार कर)

सेनापति—साहब बहादुर, इस विक्टोरिया क्रास नामक पदक को लीजिये । हम लोग अन्यायियों के अनुगामी नहीं हैं । [दे कर जाता है ।]

(दो धनिक आते हैं ।)

एक—रायबहादुर नामक इस टाइटल को (पदवी को) लो ।

दूसरा—इस खान् बहादुर टाइटल को लो । [दोनों जाते हैं ।]

(ततः प्रविशति देशदशाविह्वलो मदनमोहनमालवीयः)

मालवीयः - रेरे विनयविद्वेषिन्! किं युद्धसहायतायाः अयमेव प्रत्युपकारः, यज्जलियानारामे गुलिकाभिः शतशो निहताः।

यूरू०—(सौद्धत्यम्)

नो भृत्यैर्नच भूषणैर्न मुकुटैर्नो शस्त्रवस्त्रादिभि-
र्नो वाहैर्न मतङ्गजैः परिवृतो राजा परिज्ञायते।
किन्त्वाज्ञा न पराभवं प्रतिगता यस्यैव पृथ्वीपते-
स्तं राजानममी वदन्ति मुनयो विद्वत्सु सर्वोत्तमाः ॥ १४ ॥
अस्माभिः शासकैर्विज्ञैर्बहुशस्त्रास्त्रसज्जितैः।
युष्माकमधिपैः शक्तैर्नाज्ञाभङ्गः सहिष्यते ॥१५॥

माल०—रे रे स्वात्माभिमानिन् जलियानारामे धर्मश्रवणार्थमुपगताः कुतस्त्वया निहताः ?।

[तदनन्तर देश की दशा से व्याकुल मदनमोहन मालवीय का प्रवेश होता है।)

मालवीय—अरे विनय से भी द्वेष रखने वाले, क्या युद्ध में की गई सहायता का यही प्रत्युपकार है कि जलियान वाले बाग में सैकड़ों को गोलियों से मार डाला।

यूरोपियन—[उद्दण्डता के साथ)

न अनुचरों से, न आभूषणों से, न मुकुटों से, न शस्त्रों और वस्त्रों से और न घोड़ों से और न हाथियों से युक्त राजा का परिज्ञान होता है, परन्तु जिसी पृथ्वीपालक की आज्ञा का पराभव नहीं होता, उसे विद्वानों में सर्वश्रेष्ठ ये मुनि लोग राजा कहते हैं ॥ १४ ॥

अनेक शस्त्र अस्त्रों से सुसज्जित, विद्वान् एवं शासक हम लोग, तथा समर्थ तुम्हारे राजा—आज्ञा के उल्लंघन को नहीं सह सकते ॥ १५ ॥

मालवीय—अरे रे आत्माभिमानी, जलियान वाले बाग में धर्म सुनने के लिये आए हुए लोगों को तुमने क्यों मारा।

यूरू०—धर्मश्रवणमिति त्वपदेशः, किन्तु रोलटनियमं भङ्क्तुं युद्धाय सन्नद्धुं चोपगताः । नैतत्त्वयाऽवगतम् ? ।

माल०—(तत्रत्यां प्रतिकृतिं दर्शयति) पश्य, किमेते दुग्धमुखा बालका अपि युद्धाय संनह्यन्ते, ये त्वया गुलिकाभिर्घातिताः । अरे रे दयाविहीन! विलोकयेमां प्रतिकृतिम् । किमेताः पञ्चवर्षदेशीया बालिका योद्धुमागताः ?

यूरू०—(विलोक्य, नम्रवदनः) आज्ञाभङ्गे एता अपि सहायिकाः ।

माल०—किमर्थमेतत्कृतम् ? ।

यूरू०—जनतानिवारणार्थम् ।

माल०—तत्तु राजपुरुषा दण्डैरपि कर्तुं शक्नुवन्ति । अस्तु, कियत्यो गुलिकाश्चालिताः, ।

यूरू०—यावत्यः सन्निहिता आसन् ।

माल०—यद्यपरा अभविष्यन् ? ।

यूरू०—अपरा अभविष्यंश्चेद् गुलिकास्तुपकानुगाः ।
तदाऽहं सकला एताः प्रैरयिष्यं मृतेष्वपि ॥१६॥

यूरोपियन—धर्म का सुनना तो बहाना था, किन्तु रोलेट ऐक्ट को तोड़ने के लिये युद्धार्थ तैयार हो कर आए थे । क्या यह तुम्हें नहीं मालूम है ?

मालवीय—(वहाँ की फोटो दिखाते हैं ।) देखो, ये दूधमुँहे बालक भी क्या युद्ध के लिये तैयार थे जिनकी हत्या तुमने गोलियों से की थी । इस फोटो को देखो, क्या यह पांच वर्ष की लड़की भी लड़ने आई थी ?

यूरोपियन—(देख कर सिर नीचा करता हुआ) ये भी आज्ञा के तोड़ने में सहायक थे ।

मालवीय—यह क्यों किया ?

यूरोपियन—जनता को हटाने के लिये ।

मालवीय—उसे तो पुलिस डंडो से भी कर सकती थी । अच्छा, कितनी गोलियां चलाई थीं ?

यूरो०—जितनी पास थीं ।

माल०—यदि और होतीं ?

यूरोपियन—यदि तोप में जाने वाली और भी गोलियां होती तो उन सबको मरों पर चलाता ॥ १६ ॥

माल०—आः शूरापसद ! किमिदं नाम शौर्यं यन्मृतेषु शस्त्रपातः । अपि च लाभपुरे पञ्चषैरेव निचुलैर्मृतस्य वालस्योपरि पुनर्निचुलानां पातनं किं युज्यते ?

यूरू०—द्वादश पातनीया, इत्याज्ञापूर्त्त्यैं तथा कृतम् ।

माल०—(सक्रोधम्) रेरे कठोरहृदय ! वालघातिन् ! ? अनुभविष्य-स्येतत्कृत्यफलम् (इति वदन्निष्क्रामति)

(पटीक्षेपः)

(ततः प्रविशति शताधिकचतुश्चत्वारिंशत्तमनियमस्वरूपां मुखपट्टिकां दधाना गाढनिरुद्धा भारतमाता)

म० गां०—(प्रविश्य) जयतु, जयतु, माता ।

भा० माता—(सप्रेम पार्श्वे उपवेश्य) अयि नरशिरोमणे ! वारदोल्यां करप्रतिरोधाय सन्नद्धा लोकाः कुतो निवारिताः ? ।

मालवीय—अरे वीरता का मिथ्याभिमानकारी नीच, क्या इसी का नाम वीरता है कि मरों पर शस्त्र चलाया जाय ? और लाहौर में पांच छः वेतों से मरे हुए बालक के ऊपर फिर मारना क्या सुसंगत है ?

यूरोपियन—बारह वेत मारो—इस आज्ञा के पालन के लिये वैसा किया गया है ।

मालवीय—अरे रे कठोर हृदय वाले, बालक की हत्या करने वाले, इस अपने कर्म के फल का अनुभव करोगे ।

[यह कहता हुआ जाता है]

(परदा गिरता है ।

[तदनन्तर १४४ धारा स्वरूप मुँह पर पट्टी बाँधे खूब बँधी हुई भारत माता आती है ।]

महात्मा गांधी—(आ कर) माता की जय हो ।

भारत माता—(प्रेम से पास बैठा कर) ए सुपुत्र, बारदोली में टैक्स न देने के लिये उद्यत लोगों को क्यों मना कर दिया ?

म० गां०—चौरीचौरानगरे हिंसाविष्टलोकानामौद्धत्यम्, देशस्यासज्जतां चावलोक्य तथा कृतम्।

भा०माता—चौरीचौरागत उपद्रवस्तु अशिक्षितानामेव। सोऽपि आवेशाद्वा अन्येन केनापि कारणेन जात इति न त्वयाऽवगतम्। समस्तदेशस्तु कदापि न सज्जितो भविष्यति।

मालवीयः (प्रविश्य) जयतु जयतु माता। मातः! पश्य, इङ्गलैण्डैः सहासन्तुष्टैरसहयोगदृढैस्ते सूनुभिर्वैदेशिकानि वस्त्राणि दाह्यन्ते।

(वस्त्राणि दाह्यन्ते)

भा० माता—गांधिन्! पश्य, देशस्तु सन्नद्ध एव प्रतिभाति।

म० गां०—अथापि असहयागिनां गेहे शतशो वैदेशिकानि वस्त्राणि। देशस्तु असन्नद्ध एव।

भा० माता—अस्तु, इरविन्सन्धौ किमिदं त्वया कृतम्?।

म० गां०—अतःपरं लोकाः कारागारे गन्तुं नाभ्यलषन्। गताश्चोद्विग्ना आसन्। अभिलषितं तु सिद्धमेव। यत्—

महात्मा गान्धी—चौरीचौरा नगर में हिंसा के लिये उद्यत लोगों की उद्धतता तथा देश की तैयारी में कमी देख कर वैसा किया है।

भा० माता—चौरीचौरा का उपद्रव तो अशिक्षितों का है। वह भी आवेश से अथवा किसी दूसरे कारण से हुआ है, अतः तुमने ठीक समझा नहीं, सारा देश तो कभी भी तैयार न होगा।

मालवीय—(आ कर) माता, की जय हो। माता, देखो, इंगलैंड से असंतुष्ट असहयोगी तुम्हारे लड़के विदेशी वस्त्र जला रहे हैं। [कपड़े जलते हैं]

भा० माता—गान्धी जी, देखो, देश तो तैयार सा मालूम पड़ता है।

म० गांधी—अब भी असहयोगियों के घर में सैकड़ों विदेशी वस्त्र हैं। देश तो तैयार नहीं है।

भा० माता—अच्छा, इरविन सन्धि में तुमने यह क्या किया?

म० गांधी—इससे आगे लोग जेलखाना नहीं जाना चाहते थे। गए हुए घबड़ा उठे थे। मनोरथ तो सिद्ध ही हो गया था, क्यों कि—

विदेशिवस्त्रदाहः
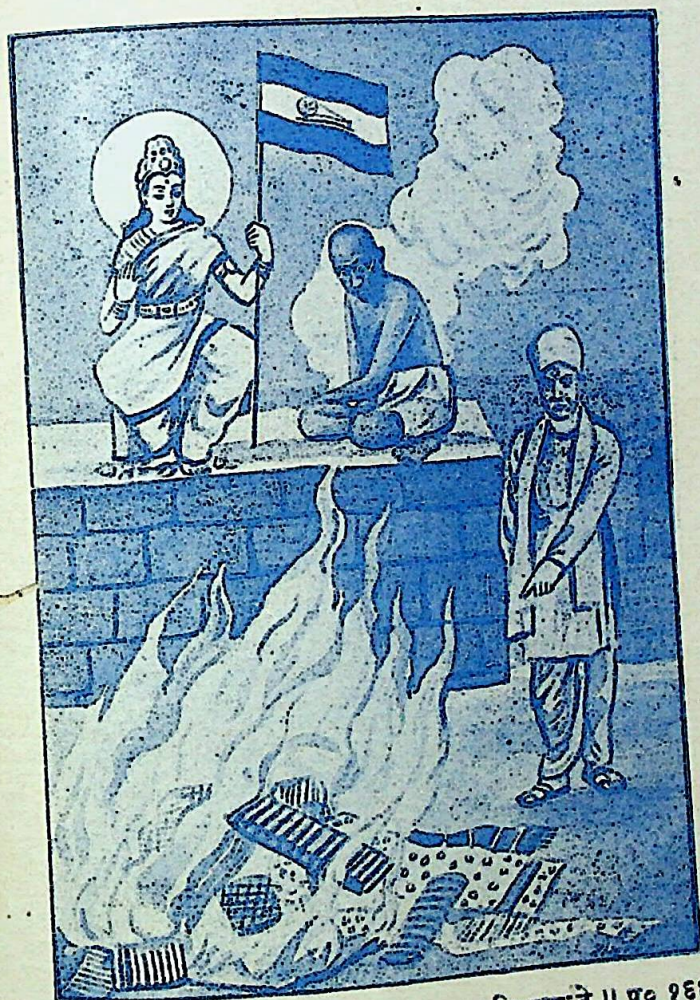
मालवीयः—मातः पश्य ! वैदेशिकानि वस्त्राणि दाह्यन्ते ॥ पृ० १६६

इङ्ग्लैण्डजानामन्यायः स्फुटीभवति सर्वतः ।
यदेते लवणादिभ्यो धनान्यपहरन्ति नः ॥ १७ ॥

अब्दुलकलामः—(प्रविश्य) जयतु जयतु माता । (सानन्दम्) राष्ट्रसभाविजयेन वर्द्धन्ते भवन्तः । (मातुर्मुखपट्टिकां हस्तबन्धनं चापनयति ।)

गोविन्दवल्लभपन्तः—(प्रविश्य) (मातुश्चरणे निपत्य उपविश्य च चरणेबन्धनानि शिथिलयति ।)

म० गां—कांग्रेसस्याधिपत्येन किं किं साधितम् ? ।

पन्तः०—महात्मन् कतिचनप्रान्तेषु साफल्यपरीक्षार्थं मद्यनिषेधो विहितः । कृषकेभ्यश्च यत्किञ्चिद् भूमिस्वाधिपत्यं दत्तम् । एतेन कृषकः राष्ट्रियसभासिद्धान्तावलम्बिनः संजायन्ते ।

भा०माता—इदं तु युक्तम्, परं सर्वत्रैव मद्यनिषेधः किमिति न कृतः ।

अंग्रेजों का अन्याय सर्वथा स्पष्ट हो गया था कि ये नमक आदि से हमारे धन को हर रहे हैं ॥ १७ ॥

अब्दुल कलाम—(आ कर) माता की जय हो । कांग्रेस के विजय पर आप लोगों को बधाइयाँ है । [माता के मुँह पर लगी हुई पट्टी को और हाथ की हथकड़ी को दूर करता है]

गोविन्दवल्लभपन्त आकर माता के चरणों पर गिर कर और उसके पास बैठ कर बेड़ियों को ढीली करता है)

म० गान्धी—कांग्रेस की प्रभुता से क्या क्या सिद्ध हुआ है ।

पन्त—महात्मा जी, कुछ जिलों में सफलता की परीक्षा के लिये मद्य का निषेध किया गया है । किसानों को भी भूमि पर कुछ अधिकार दिये गए हैं । इससे किसान कांग्रेस मतावलंबी हो रहे हैं ।

भा० माता—यह तो ठीक है, परन्तु सर्वत्र ही मद्य का निषेध क्यों नहीं किया ?

पन्तः—धनाभावेन प्रबन्धस्यासामञ्जस्यमवलोक्य नेवं कर्त्तुं पार्यते ।

(ततः प्रविशति खेररविशङ्करान्दुल्गफ्फाराः)

सर्वे—जयतु जयतु माता ।

खेरः—एते इङ्गलैण्डजाधिपतयोऽस्माभिरपरामृश्यैव युद्धेऽस्मदीयान् भ्रातॄन् प्रेषयन्ति, स्वच्छन्दतां चाचरन्ति ।

म० गां०—सर्वैरपि राष्ट्रियसभासद्भिः प्रबन्धकतायास्त्यागपत्रं दीयताम्।

(ततः पन्तप्रभृत्यः सर्वे लिखित्वा गाँधिनं दर्शयन्ति)

म० गां०—(विलोक्य) युक्तम्

(ततः पन्तप्रभृतयः स्वस्वत्यागपत्रं गृहीत्वा दातुं निष्क्रामन्ति ।)

म० गां०—मातः ! आज्ञापय । एभिरिङ्गलैण्डदेशीयैः अहिंसासंग्रामं चिकीर्षामि ।

भा० माता—पुत्र ! गच्छ, विजयस्व ।

(ततः प्रणम्य निष्क्रामति गांधी)

पन्त—धन के अभाव से प्रबन्ध की गड़बड़ी देखकर ऐसा नहीं कर पा रहे हैं ।

[तदनन्तर खेर, रविशङ्कर और अब्दुल गफ्फार आते हैं ।]

सब—माता की जय हो ।

खेर—अंगरेज प्रभु हम लोगों से सलाह लिये बिना ही युद्ध में हमारे भाइयों को भेजते हैं और स्वच्छन्द आचरण करते हैं ।

म० गांधी—सभी कांग्रेसियों को प्रबन्ध से (लोक सभा आदि से) त्यागपत्र दे देना चाहिये ।

[तदनन्तर पन्त इत्यादि सब लिखकर गांधीजी को दिखलाते हैं ।]

म० गांधी—(देख कर) ठीक है ।

[तदनन्तर पंत इत्यादि अपने अपने त्याग पत्र को लेकर देने जाते हैं ।]

म० गांधी—माता आज्ञा दीजिये, मैं इन अंग्रेजों से अहिंसा संग्राम करना चाहता हूँ ।

भा० माता—पुत्र, जाओ विजय पाओ,

[तब महात्मा गांधी प्रणाम कर चले जाते हैं ।]

भा० माता—मालवीय ! ममाज्ञयैवं डिण्डिमताडमुद्घोष्यताम्

छात्रैः स्वीयगुरोर्निपत्य पदयोराज्ञा समाश्रीयतां
भूपालैः कृषकैश्च बान्धवसुहृद्युक्तैः समुद्युज्यताम् ।
सद्भिर्भिक्षुकसाधुभिः परिजनैरन्यैश्च सन्नह्यताम्
धृत्वा शस्त्रमहिंसनं रणमुखे सर्वैर्द्रुतं गम्यताम् ॥१८॥

मालवीयः—(बहिर्गत्वा दुन्दुभिं वादयति । पुनः प्रविश्य साश्चर्यम्) मातः ! पश्य, पश्य, त्वदाज्ञासमनन्तरमेव सर्वे सन्नह्य योद्धुं गच्छन्ति ।

भा०माता—(दृष्ट्वा) युक्तमेवैतत् ।

ततो निष्क्रान्ताः सर्वे ।

(पटीक्षेपः)

इति श्रीसर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि-महामहोपाध्याय-पं०मथुराप्रसाददीक्षितकृतौ भारतविजयनाटके षष्ठोऽङ्कः ।

भारतमाता – माल्वीय, मेरी आज्ञा से यह डोंडी पिटवा दो कि—

विद्यार्थी अपने गुरु के चरणों का अभिवादन कर उनसे आज्ञा को लें। राजा और किसान अपने बन्धु बान्धवों के साथ तैयार हो जायँ। सज्जन, भिक्षुक साधु और दूसरे अनाश्रित पुरुष उद्यत हो जायँ क्योंकि अहिंसा रूपी अस्त्र को धारण कर संग्राम में मेरी प्रसन्नता के लिये जायँ ॥ १८ ॥

मालवीय—(बाहर जाकर डोंड़ी बजाता है, फिर आ कर आश्चर्य से) माता, देखो देखो, तुम्हारी आज्ञा के अनन्तर ही सब तैयार हो युद्ध के लिये जा रहे हैं।

भारतमाता—(देखकर) यह ठीक ही है।

[तदनन्तर सब जाते हैं]

(परदा गिरता है)

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र, विद्यावारिधि महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित भारतविजय नाटक का षष्ठअंक समाप्त।

सप्तमोऽङ्कः ।

(ततः प्रविशति चिन्तान्वितो यूरूपीयः)

यूरू०—(मनसि)

यवनकुलमहं विभेद्य हिन्दोरन्योऽन्यं कलहं तथा विधास्ये ।
सकलमपि ममानुगं यथा स्याद् अभिक्षङ्क्षद् भरणं यशःप्रतिष्ठाम् ।।

आः धर्मान्धा एते, परस्परं दण्डादण्डि खड्गाखड्ग्यपि कलहं करिष्यन्ति। एतानेव यवनानात्मपक्षीयान्विधाय स्वातन्त्र्यविरोधिनो-विधास्ये ।

(ततः प्रविशति कश्चिद्यवनः)

यूरू०—मुहम्मद ! कीदृग् नगरवृत्तम् ?

मुहम्मदः—शोभनम् ।

यूरू०—श्रूयते एते हिन्दवो युष्माकं प्रार्थनालयस्य संमुखे स्थित्वा

सप्तम अङ्क

[इसके अनन्तर चिन्तासमन्वित एक यूरोपियन का प्रवेश होता है ।]

यूरोपियन (मन में)

मुसलमानों को हिन्दुओं से अलग कर मैं इन लोगों की आपस में ऐसी लड़ाई करा दूंगा कि अपना पालन-पोषण और अपनी प्रतिष्ठा को चाहते हुए, सभी मेरी आज्ञा का अनुसरण करेंगे ।।१।।

अरे धर्मान्ध आपस में डंडे बाजी और तलवार बाजी से भी लड़ाई करेंगे। इन मुसलमानों को अपनी ओर मिला कर इन्हें स्वतन्त्रता के विरोधी करा देंगे ।

[तदनन्तर कोई मुसलमान आता है ।]

यूरोपियन—मुहम्मद, नगर का हाल कैसा है ?

मुहम्मद—सुन्दर है ।

यूरोपियन—सुनते हैं कि हिन्दू तुम्हारी मसजिद के सामने खड़े हो कर

वाद्यं वादयन्ति। युष्मान् पराभवन्ति। युष्माकं निमाजादिधर्मकृत्ये विघ्नं कुर्वन्ति।

मुह०—किं कुर्याम। एते वीराः संघीभूतैरेभिर्योद्धुं नैव शक्नुमः परं पृथगुपलब्धान् एकैकांस्तु नामावशेषानेव कर्तुं समर्थाः।

यूरू०—इदं तु पश्चाद् भविष्यति। प्रथमं प्रार्थनापत्रं लिखित्वा मह्यं देहि, यदेतेऽस्मद्धर्मकृत्ये विघ्नं कुर्वन्तो वाद्यं वादयन्ति।

(मुहम्मदः बहिर्गत्वा प्रार्थनापत्रं लिखित्वा आगत्य ददाति)

कः कोऽत्र भोः!

दौवा०—(प्रविश्य) जेदु जेदु देवो (जयतु जयतु देवः)

यूरू० शीघ्रं नगरश्रेष्ठिनमानय।

दौवा०—जं देवो आणवेदि (यद्देव आज्ञापयति) (इति निष्क्रामति)

यूरू०—एते हिन्दवः स्वराज्यमभिकाङ्क्षन्ति, हिन्दवः स्वराज्ये तु युष्मान्विनाशयिष्यन्त्येव।

बाजा बजाते हैं। तुम्हारे धार्मिक कार्यों में बाधा डालते हैं।

मुहम्मद—क्या करें। ये वीर हैं। समुदाय रूप में स्थित इन से युद्ध नहीं कर सकते, परन्तु एक एक को तो खतम करने में हम समर्थ हैं।

यूरो०—यह तो पीछे से होगा, पहले हमें यह प्रार्थना पत्र लिख कर दे दो कि ये हमारे धार्मिक कार्य में बाधा डालते हुए बाजा बजाते हैं।

[मुहम्मद बाहर जा कर प्रार्थना पत्र लिख कर फिर आ कर देता है।]

यूरोपियन—कोई है!

द्वारपाल—(आकर) साहब बहादुर की जय हो।

यूरोपियन—शीघ्र ही नगर सेठ को बुलाओ।

द्वारपाल—जो आज्ञा। (बाहर जाता है।)

यूरोपियन—ये हिन्दू स्वराज्य चाहते हैं, स्वराज्य पाने पर हिन्दू तुम्हारा विनाश ही कर देंगे।

मुह०—अथ किम्, परं कतिचन अहंमन्या अब्दुलकलामादयो यवनाः राष्ट्रसभानुयायिनः कांग्रेसीया जाताः, परं न ते किञ्चिद्धर्मं जानन्ति।

यूरू०—(सस्मितम्) स तु बहुतरं युष्माकं धर्मं सकलानि च शास्त्राणि जानाति। यदि राष्ट्रसभानुलग्नो नाभविष्यत् तदा तु शमशुलउल्मा अभविष्यत्।

(ततः प्रविशति दौवारिकेण सह नगरश्रेष्ठी)

दौवारिक! स्वनियोगमशून्यं कुरु (इति निष्क्रान्तः।)

यूरू०—श्रेष्ठिन्, किं त्वमपि राष्ट्रसभामतावलम्बी?

श्रेष्ठी—नाहमेकाकी तन्मतावलम्बी किन्तु सर्वेऽपि भारतीयाः।

यूरू०—यवनास्तु न तन्मतावलम्बिनः।

श्रेष्ठी—नहि नहि पश्य, यवन एव सीमाप्रान्ते कांग्रेसराष्ट्रसभामन्त्री। यस्मिन् प्रान्ते य एव योग्यः स एव मन्त्री भवति। नात्र हिन्दूयवनयोर्भेदः।

मुहम्मद—और क्या, परन्तु अब्दुल कलाम आदि कुछ गर्वीले मुसलमान कांग्रेसी हो गए हैं। परन्तु वे धर्म को कुछ नहीं जानते।

यूरोपियन—(मुस्कराहट के साथ) वह बहुत कुछ तुम्हारे धर्म को और सम्पूर्ण शास्त्रों को जानता है यदि वह कांग्रेसी न होता, तो शम शुल उल्मा होता।

[तदनन्तर द्वार पाल के साथ नगर सेठ आता है।]

द्वारपाल, तुम अपने काम पर जाओ।

[वह जाता है]

यूरोपियन—सेट जी, क्या तुम भी कांग्रेसी हो?

सेठ—मैं ही अकेला कांग्रेसी नहीं हूँ, परन्तु सभी भारतीय हैं।

यूरोपियन—मुसल्मान तो कांग्रेसी नहीं हैं।

सेठ—नहीं नहीं। देखो, सीमा प्रान्त में तो अब्दुल गफ्फार कांग्रेस के मन्त्री हैं। जिस प्रान्त में जो योग्य होता है, वही मन्त्री होता है। यहां पर हिन्दू मुसल्मान का भेद नहीं है।

यूरू०—किम् उभौ एकधर्माणौ ।

श्रेष्ठी—(स्मित्वा) धर्मे तूभयोर्भेदः परं भारतस्वातन्त्र्यसंपादने तु सर्वेऽपि भारतीया एकमतावलम्बिनः ।

यूरू०—अयं तु राष्ट्रियसभां नाभिलषति ।

श्रेष्ठी—नगण्यानां का वार्ता, माऽभिलषतु, कालान्तरेण अयमप्यभिलषिष्यति ।

यूरू०—(सक्रोधम्) पश्य; एते प्रार्थयन्ते । यद् एषां धर्मगृहसमीपे वाद्यवादनाद् धर्माचरणे ईश्वरध्याने च वाधा भवति ।

श्रेष्ठी—एषां कुरानग्रन्थे तु कुत्राऽपि न लिखितम् । यद् धर्मगृहसमीपे वाद्यं न वादयेत । किं च मोटररवेण, वायुयानशब्देन, पत्तनेषु जनताकोलाहलेन च, धर्माचरणे वाधा न भवति । अस्माकमुत्सवेषु वाद्यवादनेन वाधा भवतीति तु अप्रत्यय एव ।

यूरोपियन—क्या दोनों एक धर्म के मानने वाले हैं ?

सेठ—(मुस्करा कर) धर्म के विषय में तो दोनों में भेद है, परन्तु भारत को स्वतन्त्रता दिलाने में तो सभी भारतीय एक मत के मानने वाले हैं ।

यूरोपियन—यह तो कांग्रेस को नहीं चाहता ।

सेठ—इन गए लोगों की वात ही क्या है । यह न चाहे, परन्तु कुछ दिनों में यह भी चाहेगा ।

यूरोपियन—(क्रोध से) देखो, ये प्रार्थना करते हैं कि इन की मसजिद के पास वाजा बजाने से इन के धार्मिक अनुष्ठानों में तथा ईश्वर के ध्यान में वाधा पड़ती है ।

सेठ—इनके धर्म ग्रन्थ कुरान में तो कहीं भी नहीं लिखा है कि मसजिद के पास वाजा न बजाये जांय । और मोटर की ध्वनि से, वायुयान (हवाई जहाज) के शब्द से और नगरों में जनता के शोर गुल से इन के धार्मिक आचरण में वाधा नहीं पड़ती, परन्तु हमारे उत्सवों में वाजा बजाने से वाधा पड़ती हैं—यह अविश्वसनीय ही है ।

यूरू०—(उत्थितः सन् श्रेष्ठिनो हस्तं हस्तेन मेलयन्) श्रेष्ठिन्, सर्वं युक्तम्, परं वाद्यं युष्माभिर्न वादनीयम्।

श्रेष्ठी—(किञ्चिद्विवक्षुः ।)

यूरू०—नाहमिदानीं किञ्चिच्छ्रोतुमभिलषामि । पुनरागन्तव्यं वक्तव्यं च ।

(ततो निष्क्रान्ताः श्रेष्ठी यवनो यूरूपीयश्च)

(ततः प्रविशति किमपि चिन्तयती एकाकिनी भारतमाता)

भा० माता—आः एते—

विभिन्नधर्मान् सकलान् भेदयित्वा ममात्मजान् ।
स्वधर्ममाधिपत्यञ्च स्थापयन्ति शनैः शनैः ॥२॥

यूरूपीयः—(सहसा प्रविश्य) आः कथमिव मद्विरुद्धं मन्त्रयसे ।

भारतमाता—(ससम्भ्रममुत्थाय) रे रे अकार्यकारिन्!

यूरोपियन—(उठ कर सेट के हाथ से हाथ मिलाता हुआ) सेट जी, सब सब ठीक है, लेकिन तुम्हें बाजा न बजाना चाहिये।

सेठ—(कुछ कहना चाहता है ।)

यूरोपियन—इस समय मैं कुछ नहीं सुनना चाहता, फिर आइयेगा और कहियेगा।

(तदनन्तर सेठ, मुहम्मद और अंग्रेज जाते हैं ।)

[इसके अनन्तर कुछ विचारती हुई एकाकिनी भारत माता का प्रवेश होता है ।]

भारतमाता—अरे ये—

हिन्दू और मुसल्मि मत के मानने वाले मेरे पुत्रों को फोड़ कर अपना धर्म और अपनी प्रभुता धीरे धीरे स्थापित कर रहे हैं ॥ २ ॥

यूरोपियन—(सहसा आकर) अरे मेरे विरुद्ध क्या सोच रही हो?

भारतमाता—(घबराहट के साथ उठ कर) रे रे कुकर्म करने वाले—

ममात्मजाङ्गुष्ठनिकर्त्तनं हठा-
द्विहारवङ्गव्यवसायशोषणम् ।
कृतं च साकेतपतेर्वधूषु यत्
स्मरस्यदः किन्नु गतोऽसि विस्मृतिम् ? ॥३॥

शिराजराज्यापहृतौ प्रपञ्चनं
कदर्थनं नन्दकुमारभूपतेः ।
कृतं अमीचन्दमखेऽपि यत्त्वया
स्मरस्यदः किन्नु गतोऽसि विस्मृतिम् ? ॥४॥

रणे जितस्त्वं सुलतान-टीपुना
विधाय संधिं प्रणिपत्य तत्पदे ।
पुनर्निवृत्यैव चकर्थ यच्छलात्
स्मरस्यदः किन्नु गतोऽसि विस्मृतिम् ? ॥५॥

विधाय सिन्धावपि सन्धिदूषणं
विलुण्ठनं तत्र कुबेरसंपदाम् !

बलपूर्वक मेरे लड़कों के अंगूठों का कर्तन, विहार और बंगाल के व्यापार का शोषण और अवध के नवाब की बेगमों के प्रति वह आचरण—तुम्हें ये याद हैं, या कि विस्मृत हो गए हैं ॥ ३ ॥

शिराज के राज्य को लेने के लिये किया गया प्रपंच, राजा नन्द कुमार का मुकद्मा, और मित्र अमीचंद के प्रति किया गया व्यवहार—ये तुम्हें याद हैं या कि विस्मृत हो गए हैं ॥ ४ ॥

टीपू सुल्तान से संग्राम में जीते गये तुमने उसके पैरों पर पड़ कर उससे सन्धि की थी, फिर लौट कर छल से तुमने जो कुछ किया था—वह तुम्हें याद हैं या विस्मृत हो गया है ॥ ५ ॥—

सिंध में भी सन्धि तोड़ कर वहाँ की कुबेर की सी सम्पति का लूटना, और

जये च पञ्चाम्बुनृपस्य यत्कृतं
स्मरस्यदः किन्तु गतोऽसि विस्मृतिम् ? ॥६॥
जितात्मनो भीरहितस्य मानिनः
सुतस्य भक्तस्य सतां मतस्य मे ।
असून्हार्षीरभियोजितस्य यत्
स्मरस्यदः किन्तु गतोऽसि विस्मृतिम् ? ॥७॥
विघातनं केसरबागसंगतं
विहिंसनं वा 'जलियान' संभवम् ।
कृतं च यद् वेतसताडनं मृते
स्मरस्यदः किन्तु गतोऽसि विस्मृतिम् ? ॥८॥

(पुनः क्रुद्धा सती) अरे रे राज्यमदप्रमत्त !
खुदीविस्मिलरासाद्या उग्रमार्गावलम्बिनः ।
स्वप्राणरुधिरैर्देशमर्चयन्तोऽपि विस्मृताः ? ॥९॥

यूरूपीयः—(दन्तान् पिंसन्) रे रे कटुप्रभाषिणि दुष्टे ! तिष्ठ,

पञ्जाब के राजा के जीतने में जो कुछ किया था, वे तुम्हें याद हैं या विस्मृत हो गये हैं ॥ ६ ॥

मानी, संयमी, निडर, भक्त तथा सज्जनों के इष्ट और अभियोजित मेरे पुत्रों के प्राणों का हरना तुम्हें याद है या विस्मृत हो गया ? ॥ ७ ॥

केसर बाग में होने वाला विनाश, जलियान वाले बाग में होने वाली हत्या, और मरे पर बैंतों से पीटना तुम्हें याद हैं या कि विस्मृत हो गए हैं ॥८॥

(फिर क्रुद्ध होकर) अरे रे राज्य मद से उन्मत्त,

खुदीराम, विस्मिल, रास आदि वाम मार्ग के अनुयायी एवं अपने प्राण और रुधिर से देश की पूजा करनेवाले भी क्या विस्मृत हो गए हैं ॥ ९ ॥

यूरोपियन—(दाँतों को पीसता हुआ) अरी री कटुवचन कहने वाली

त्वामार्डिनेन्सनियमजालेन निवध्नामि (इति आर्डिनेन्सनियमजालं भारतमातुरुपरि प्रक्षिपति)

भारतमाता—(आर्डिनेन्सनियमजालं गृहीत्वा त्रोटयित्वा च प्रक्षिपति) (क्रुद्धा) रे दुष्टाधम !

अपकारस्य कर्तारमुपकारविलोपकम् ।
त्वां चपेटाप्रहारेण यमालयमहं नये ॥१०॥

(इति चपेटां दातुमुद्यच्छति)

यूरू०—(क्रुद्धः सन् असिं निष्कास्य जिघांसति)

सुभाषचन्द्रः— सहसोपसृत्य) आः क एष मातरं जिघांसति ।

(इति तस्य हस्तं गृह्णाति । पुनस्तं हन्तुं मुष्टिं बध्नाति)

जवाहरलालः—(प्रविश्य) (हठादसि गृहीत्वा प्रक्षिपति ।) मुष्टिमुद्यम्य—

दुष्ट, ठहर, तुझे आर्डिनेंस के जाल से कसता हूँ। (आर्डिनेंस का जाल भारतमाता के ऊपर फेंकता है।)

भारतमाता—(आर्डिनेंस के नियम को लेकर और तोड़ कर फेंक देती है।) (क्रुद्ध हो) रे दुष्ट, रे नीच—

अपकार के करनेवाले, एवं उपकार के न मानने वाले तुमको थप्पड़ के आघात से यमराज के घर भेज देती हूँ ॥ १० ॥

(मारने के लिए थप्पड़ उठाती है।)

(यूरोपियन क्रुद्ध हो तलवार निकाल कर मारना चाहता है।)

सुभाषचन्द्र—(सहसा पहुँच कर) अरे यह कौन माता को मारना चाहता है।

(उसके हाथ को पकड़ता है, फिर उसे मारने के लिए मुट्ठी बाँधता है।)

जवाहरलाल—(आ कर बलपूर्वक तलवार को फेंक देता है, और मुट्ठी को उठा कर)

मुमूर्षुरसि नीच त्वं जिघांसन् देशमातरम् ।
अरे पश्य क्षणेनैव करोमि त्वां यमातिथिम् ॥११॥

सम्पूर्णानन्दः—(सहसा प्रविश्य उच्चस्वरेण)

भीमो यथा जरासन्धं तथा त्वां पाटये क्षणात् ।
द्रुह्यन्तं भारतभुवे क्षणमप्यद्य न क्षमे ॥१२॥

(इति हन्तुं पराक्रममाण उपसर्पति ।)

पन्तः—(प्रविश्य तमपकर्षति) गांधिमहात्मना आज्ञप्तम्, अहिंसया विजेतव्यम् ।

संपू०—आः अस्य दौरात्म्यात् विस्मृतम् ।

अब्दुलकलामः—(प्रविश्य) (असिं पश्यन् ।)

रे रे घातक ! किं नयेम नरकं त्वां भृत्यगोत्रान्वितं
किं वा लन्दनमेव ते जनपदं संप्रापयेम स्वयम् ।

भारत माता को मारने की इच्छा रखने वाला तू मरना चाहता है; अरे देख !! क्षणमात्र में तुझे यमराज का अतिथि बना देता हूँ ॥ ११ ॥

सम्पूर्णानन्द—(सहसा आकर जोर से)

भीम ने जरासन्ध को जिस प्रकार फाड़ डाला था, उसी प्रकार मैं तुझे भी फाड़ डालूँगा । भारत माता के साथ द्रोह करने वाले को मैं क्षण भर भी क्षमा नहीं कर सकता ॥ १२ ॥

(मारने के लिए पराक्रम करता हुआ आगे बढ़ता है ।)

पन्त—(आ कर उसको खींचता है ।) महात्मा गांधी ने आज्ञा दी है कि अहिंसा से जीतना चाहिए ।

सम्पूर्णानन्द—इसकी दुष्टता से इसे भूल गये ।

अब्दुल कलाम—(आ कर तलवार देख कर)

अरे रे हत्यारे, क्या मैं तुम्हें तुम्हारे नौकर और कुटुम्ब के साथ नरक में भेज दूं, या लन्दन तुम्हारे देश में ही तुम्हें पहुँचा दूं, या गर्व से भरे

स्वराज्य-प्राप्तिः
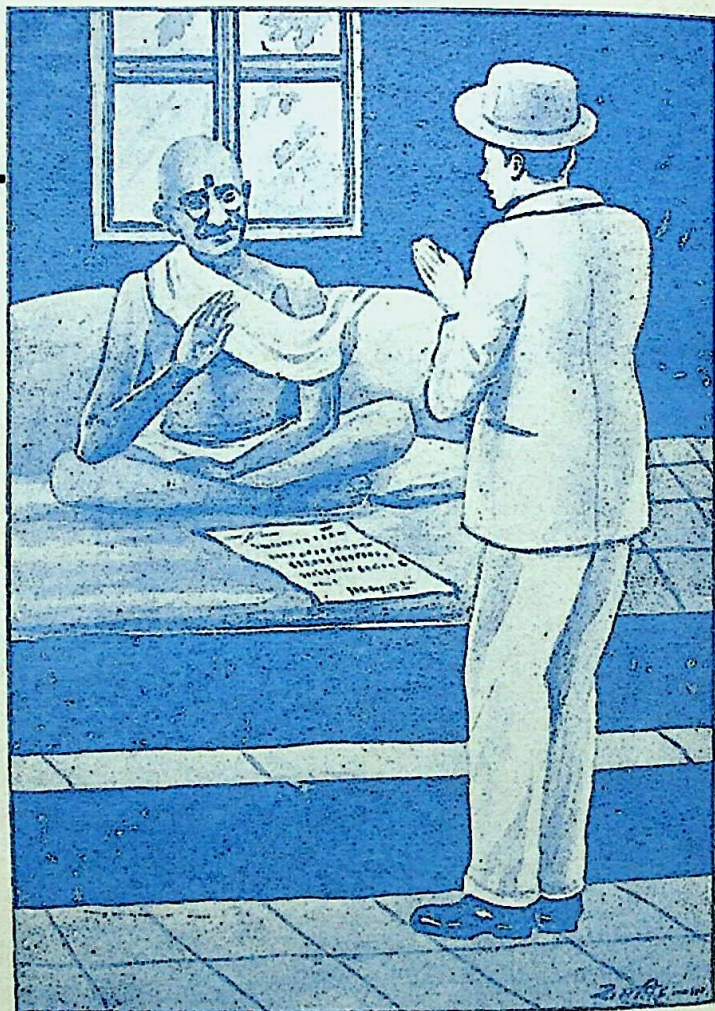
यूरूपीयः—हृदयेन क्षमस्व माम । पृ० १७९

यद्वा गर्वमलं वहन्तमभितः संचूर्णयेम क्षणात्
कारुण्याद्थवा त्यजेम तृणवत्प्राणेषु लुब्धं शठम् ॥१३॥

म० गां—(सहसा प्रविश्य) एषोऽपि युष्माकं भ्रातृकल्प एव। आगच्छ मित्र! हृदयेन त्वामालिङ्गामि। (सुभाषो मातुश्चरणौ स्पृष्ट्वा निर्गच्छति। अन्ये मातुः पार्श्वत उपसर्पन्ति। गांधी हृदयेन तमालिङ्गति)

जन्मसिद्धाधिकारो नस्त्वया संह्रियते कथम्।
साधु मैत्रीं विधायैव स्वकीयं विषयं व्रज ॥१४॥

यूरूपीयः—धन्योऽसि। बाढमहिंसकोऽसि। एतेन तवानिर्वचनीय-गुणेन परां प्रतिमापन्नोऽस्मि।

आवयोः परमा प्रीतिस्तिष्ठेदाभूतसंक्षयम्।
उपभुङ्क्ष्व स्वाधिकारं हृदयेन क्षमस्व माम् ॥१५॥

तुम्हें चूर-चूर कर दूं, अथवा प्राणों के लोभी एवं शठ तुमको दया से तृण के समान छोड़ दूं ॥१३॥

महात्मा गांधी—(सहसा प्रवेश कर) यह भी तुम्हारा भाई के सदृश ही है। आओ, मित्र, मैं तुम्हें हृदय से लगा लूं।

[सुभाषचन्द्र माता के पैर छू कर चला जाता है। दूसरे माता के पास से जाते हैं, महात्मा गान्धी हृदय से उसका आलिङ्गन करते हैं।)

म० गां०—हमारे जन्म सिद्ध अधिकार को क्यों छीन रहे हो। भली भाँति मित्रता कर के तुम अपने देश चले जाओ ॥ १४ ॥

यूरोपियन—धन्य हो। पक्के अहिंसक हो। तुम्हारे इस अनिर्वचनीय गुण से अत्यन्त प्रसन्न हूँ।

'हम दोनों का प्रेम प्रलय पर्यन्त बना रहे, तुम अपने अधिकार का उपभोग करो, और मुझे हृदय से क्षमा करो ॥ १५ ॥

(म० गांधेन आज्ञया जवाहरलालाब्दुलकलामादयस्तमालिङ्गन्ति)

(स भारतमातरं प्रणम्य निष्क्रामति)

(म० गांधी प्रभृतयः सर्वेऽपि भारतमातरं प्रणमन्तः सहर्षं गायन्ति)

वन्दे मातरमरिकुलभयदां रिपुगणकमलविहिंसनहिमदाम् ।
सुजलां सुफलां सुनयसमृद्धां विद्वद्वृन्दनिषेवितसुपदाम् ॥
सदयामभयां बहुखनिनिलयां मुक्तामणिगणशोभितहृदयाम् ।
वन्दे मातरमरिकुलभयदां रिपुगणकमलविहिंसनहिमदाम् ॥
अचलाममलामतुलितविभवाम् ऋतुकुलयुगपद्विलसितसुपदाम् ।
सुसुतां सुखदां सबलां सुरसां बुधगणबोधितनिगमसुनिनदाम् ॥
वन्दे मातरमरिकुलभयदाम्..............
सुनयां सुनतां सुविमलधिषणां निजबलसकलविनाशितविपदाम् ।

(महात्मा गांधी की आज्ञा से जवाहरलाल अब्दुल कलाम आदि उसका आलिङ्गन करते हैं, वह भारत माता को प्रणाम कर चला जाता है। महात्मा गांधी आदि सभी भारत माता को प्रणाम करते हुए हर्ष से गाते हैं)

शत्रु समूह रूपी कमल के दलन के लिये हिमकर के समान अराति वंश में भय प्रदायिनी माता की वन्दना करता हूँ। यह भूमि—सुन्दर जल तथा सुन्दर फलों से सम्पन्न है, सुनीति से समृद्ध है, विद्वानों के वृन्द से इसके चरण कमल सेवित हैं, यह दया पूर्ण है, भय शून्य है, अनेक खानों की खान है तथा मोती और मणियों से इसका हृदय सुशोभित है। वन्दे......

यह अचल है, निर्मल है, असीम वैभवों से संयुक्त है, ऋतुओं से एक साथ विलास करते हुए पदों से (पद-स्थान) संयुक्त है, सुपुत्रशालिनी है, सुखदायिनी है, बल से युक्त है, रसमयी है और विद्वानों से बतलाए गए वेद की सुन्दर ध्वनि से परिपूर्ण हैं। वन्दे......

यह सुनीति सम्पन्न है, भली भाँति नमस्कृत है, निर्मल बुद्धि विशिष्ट है, अपने बल से सम्पूर्ण विपत्तियों की विनाशिनी है, सुन्दर पुरुषों से युक्त है,
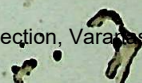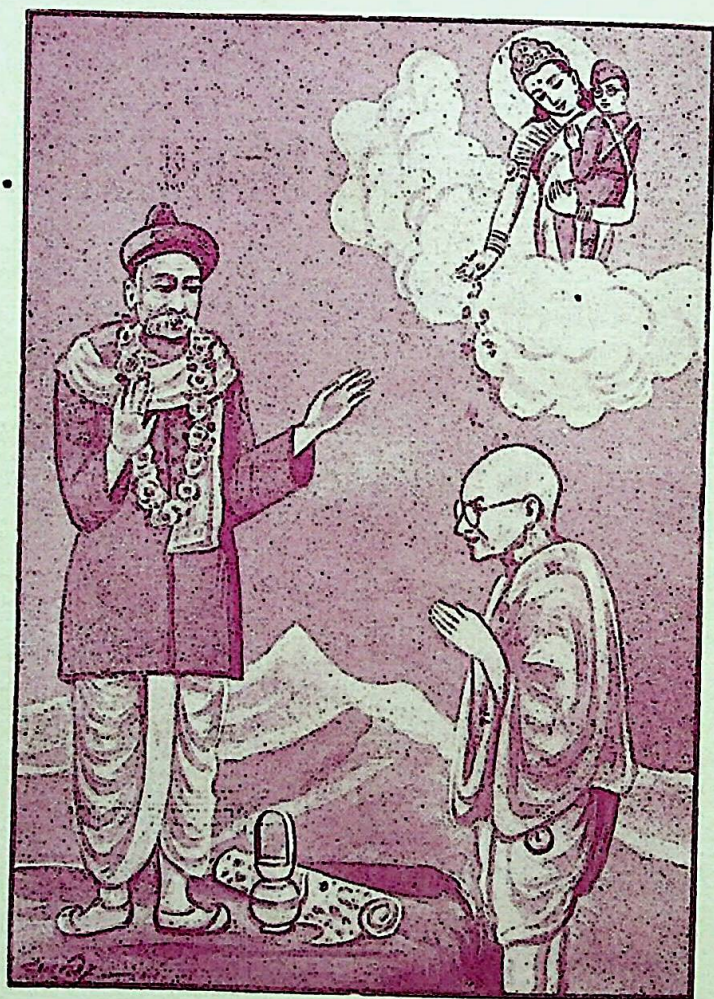
तिलकः—सर्वं सुसम्पन्नम्। पृष्ठ १८१

सुजनां सुगतामसुकरविजयां सुरनरकिन्नरमुनिवरवरदाम् ॥
वन्दे मातरमरिकुलभयदाम् ।...........

(ततः प्रविशति जन्मान्तरमापन्नो मृगचर्मकमण्डलुधारी सशिष्यस्तपस्वी तिलकः ।)

तिलकः—

प्रीतिस्तेऽत्र समागता प्रणयिनी देवाधिपेष्वादरो
भक्तिर्भूतपतौ सुधाधवलिता कीर्तिः पयोधेः परा ।
अब्दुल्बोसजवाहरप्रभृतयः कार्येषु दक्षाः सुताः
स्वातन्त्र्यं समुपागतं किमपरं भूयः प्रियं कुर्महे ॥१६॥

तथापीदं भरतवाक्यमस्तु ।

सर्वे सन्तु निरामयाः सुसुखिनः शस्यैः समृद्धा धरा,
भूपालाश्च मितव्यया नयविदो दक्षाः प्रजारक्षणे ।

(अथवा सज्जनों से युक्त है ।) सुन्दर गति धारिणी है, शत्रु के लिये नरक स्वरूप है, एवं देवता, मनुष्य, किन्नर और श्रेष्ठ मुनियों को वरदान देने वाली है । वन्दे.....

[इसके अनन्तर दूसरा जन्म धारण किये हुए, और मृगचर्म और कमण्डलु के धारण करने वाले तपस्वी तिलक का प्रवेश शिष्य के साथ होता है ।]

तिलक—

प्रणय प्रदर्शिनी प्रीति तुम्हें यहाँ प्राप्त हो गई है, देवताओं के प्रभु पर आदर हो गया है, भगवान् शङ्कर में भक्ति हो गई है, अमृत के समान धवल कीर्ति समुद्र के पार पहुँच गई है, अब्दुल कलाम आजाद, सुभाषचन्द्र वोस, जवाहरलाल आदि लड़के कार्य करने में कुशल हो गए हैं और स्वतन्त्रता मिल गई है, अतः इससे अधिक और क्या प्रिय करें ॥ १६ ॥

तोभी यह भरत वाक्य पूर्ण हो—

भारत में सब रोग से रहित और सुखी हों, भूमि धन धान्य से पूर्ण

विद्वांसो धनपूजिता नवनवाः संपादयन्तः कृती-
भूंयासुः पतिपुत्रशौर्यसहिता वीराङ्गना भारते ॥१७॥

ततो निष्क्रान्ताः सर्वे ।

(पटीक्षेपः)

इति श्रीसर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधिः—महामहोपाध्याय श्री पं० मथुराप्रसाद-दीक्षितकृतौ भारतविजयनाटके सप्तमोऽङ्कः ।

समाप्तं चेदं नाटकम् ।

वघाटराज्याधिपतौ दुर्गासिंहे प्रशासति ।
ऋष्यग्निनन्दचन्द्रेऽब्दे भारतं नाटकं कृतम् ॥

हो, राजा मितव्ययी, नीति में कुशल और प्रजा की रक्षा में दक्ष हो, कला से युक्त विद्वान भी नई नई रचनाओं का निर्माण करें, तथा वीराङ्गनाये पति, पुत्र और वहादुरी से युक्त हों ॥ १७ ॥

(सब जाते हैं)

(परदा गिरता है)

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि महामहोपाध्याय श्री पं० मथुराप्रसाद विरचित भारतविजय नाटक का सप्तम अंक समाप्त ।

यह नाटक समाप्त हो गया । सन् १९३७ में वघाट राज्य भूपाल श्री दुर्गासिंह के शासन में इस भारत नाटक की रचना हुई ।